Vir Sewa Mandir.
21 Daryaganj, Delhi

देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला—५

गुलबदन बेगम

का

हुमायूँनामा

—०:※:०—

अनुवादक

व्रजरत्नदास

—:※:—

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

द्वितीय संस्करण १०००] संवत् २००८ [मूल्य २॥)

माला का परिचय

जोधपुर के स्वर्गीय मुंशी देवीप्रसादजी मुंसिफ इतिहास और विशेषतः मुसलिम-काल के भारतीय इतिहास के बहुत बड़े ज्ञाता और प्रेमी थे, तथा राजकीय सेवा के कामों से वे जितना समय बचाते थे, वह सब वे इतिहास का अध्ययन और खोज करने अथवा ऐतिहासिक ग्रंथ लिखने में ही लगाते थे। हिंदी में उन्होंने अनेक उपयोगी ऐतिहासिक ग्रथ लिखे हैं जिनका हिंदी ससार ने अच्छा आदर किया।

श्रीयुत मुशी देवीप्रसाद की बहुत दिनों से यह इच्छा थी कि हिंदी में ऐतिहासिक पुस्तकों के प्रकाशन की विशेष रूप से व्यवस्था की जाय। इस कार्य के लिए उन्होंने ता० २१ जून १६१८ को ३५०० रुपया अकित मूल्य और १०५०० रु० मूल्य के बबई बक लि० के सात हिस्से सभा को प्रदान किये थे और आदेश किया था कि इनकी आय से उनके नाम से सभा एक ऐतिहासिक पुस्तकमाला प्रकाशित करे। उसीके अनुसार सभा यह 'देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला' प्रकाशित कर रही है। पीछे से जब बबई बक अन्यान्य दोनों प्रेसीडेंसी बकों के साथ सम्मिलित होकर इपीरियल बक के रूप में परिणत हो गया, तब सभा ने बंबई बक के हिस्सों के बदले में इंपीरियल बंक के चौदह हिस्से, जिनके मूल्य का एक निश्चित अश चुका दिया गया है, और खरीद लिए और अब यह पुस्तकमाला उन्हींसे होनेवाली तथा स्वयं अपनी पुस्तकों की बिक्री से होनेवाली आय से चल रही है। मुशी देवीप्रसाद का वह दान-पत्र काशी नागरी प्रचारिणी सभा के २६ वे वार्षिक विवरण मे प्रकाशित हुआ है।

वक्तव्य

यद्यपि बादशाह हुमायूँ फारसी, अरबी और तुर्की भाषाओं के पूरे पंडित थे, ज्योतिष और भूगर्भ शास्त्रों में पारंगत थे और फारसी के कवि भी थे, पर फिर भी इन्होंने अपने पिता बाबर बादशाह के समान अपना आत्मचरित्र लिखकर उनका अनुकरण नहीं किया। जिस प्रकार बाबर ने अपने सुख दुःख, हानि लाभ और युद्धादि का चित्र अपनी पुस्तक में खींचकर सर्वसाधारण के सामने रख दिया है, उस प्रकार हुमायूँ नहीं कर सका। यद्यपि पिता पुत्र के जीवन की घटनाओं में पूरा सादृश्य कालचक्र द्वारा प्रेरित होकर आ गया है, पर प्रथम ने अपनी लेखनी द्वारा अपने इतिहास को प्रकाशित किया है और दूसरे ने अपने इतिहास को अंधकार में छोड़ दिया है। परंतु हुमायूँ के सौभाग्य से उस कमी को उसके दो समसामयिकों ने पूर्ण कर दिया। प्रथम इनकी सौतेली बहन गुलबदन बेगम थी और दूसरा इनका सेवक जौहर आफताबची था।

जौहर ने जो पुस्तक लिखी है वह तजकिरःतुल्-वाकिआत या वाकिआते-हुमायूँनी कहलाती है और उसमें हुमायूँ की राजगद्दी से लेकर उसकी मृत्यु तक का वर्णन है। इसने अपने स्वामी की सभी बातों का शुद्ध हृदय से वर्णन किया है और कुछ भी छिपाने की चेष्टा नहीं की है। परंतु जिस प्रकार सभी पुरुष इतिहासकारों ने मितियों, नामों और घटनाओं पर अधिक ध्यान दिया है, उसी प्रकार इसने भी किया है। इस विषय पर स्त्रियाँ कम लेखनी उठाती हैं, परंतु जब इनका रचित इतिहास देखने में आता है तब उसमें अवश्य यह विचित्रता दिखलाई देती है कि वे स्त्री-संसार की ही घटनाओं का अधिक विवरण देती हैं और पुरुष-संसार की

घटनाओं का उल्लेख मात्र कर देती है। यही विचित्रता या अधिकता गुलबदन बेगम की पुस्तक हुमायूँनामा में भी है।

जब इस पुस्तक को पढ़िए तब ऐसा ज्ञात होने लगता है कि सहृदय प्राणियों की किसी गृहस्थी में चले आए हैं। बेगम ने अपने पिता का भी कुछ वृत्तात लिखा है। बदख्शाँ की लडाइयों का, काबुल पर अधिकार करने का और पानीपत तथा कन्हआ की प्रसिद्ध विजयों का उल्लेख मात्र किया गया है; परतु विवरण दिया है उन भेटों का जो बाबर ने दिल्ली की लूट से काबुल भेजी थीं और जिस प्रकार वहाँ खुशी मनाई गई थी। हुमायूँ की माँदगी, माता पिता का शोक, उनका अच्छा होना, बाबर की माँदगी और उनकी मृत्यु पर के शोक का पूरा विवरण दिया है क्योंकि वह स्त्रियों की दृष्टि में युद्धादि से अधिक प्रयोजनीय मालूम पडता है।

जब हुमायूँ का जीवनचरित्र आरभ किया है, तब पहले तिलस्मी और हिंदाल के विवाह की मजलिसों का ही वर्णन दिया है और उनकी तैयारियों का बहुत ही अच्छा वर्णन किया है। पूर्वीय प्रांतों के जयपराजय चौसा और कन्नौज के युद्धों और अत में चगत्ताइयों के लाहौर भागने का उल्लेख भी उन्होंने किया है। जब हुमायूँ सिंध की ओर चले तब से फारस पहुँचने तक में जो कुछ दुःख और कठिनाइयाँ उन्हें भुगतनी पडी थी, उनका बेगम ने पूरा विवरण दे दिया है। हमीदाबानू बेगम ने हुमायूँ बादशाह से विवाह करने मे जो कुछ कठिनाइयाँ दिखलाई थी, उनका पूरा वृत्तात दिया गया है। पर विवाह का सक्षेप ही मे वर्णन दे दिया गया है। फारस मे गुलबदन बेगम स्वय नही गई थी; और वहाँ का जो कुछ वर्णन इन्होंने दिया है वह सब हमीदा बानू बेगम का ही बतलाया हुआ है। इन्होंने बादशाहो के मिलने और स्वागत का सक्षेप मे और बातचीत का तथा किस प्रकार हुमायूँ की मानहानि की गई थी, इसका कुछ भी वर्णन नही किया है, पर लालों के चोरी जाने और मिलने का पूरा हाल लिखा है।

हुमायूँ के लौटने के साथ बेगम का इतिहास अब फिर से अफगानिस्तान में आरंभ होता है। सक्षेप ही में दोनों भाइयों के झगड़े का वर्णन करते हुए अंत में मिर्जा कामराँ के पकड़े जाने और अंधे किए जाने तक का हाल लिखा गया है। पर इस के अनंतर के पृष्ठों का ही पता नहीं है जिससे कि कहा जा सके कि यह पुस्तक कहाँ पर समाप्त हुई है।

मूल ग्रथ की जो प्रति अभी तक प्राप्त हुई है, वह विलायत के बृटिश म्यूजिअम मे सुरक्षित है और उसमें इसके आगे के पृष्ठ नही है। इस पुस्तक की दूसरी प्रति अभी तक कही नही मिली है और इससे जान पड़ता है कि इस पुस्तक की अनेक प्रतियाँ नहीं तैयार कराई गई थीं। हो सकता है कि यह पुस्तक बेगम के हाथ की ही लिखी हुई हो। अबुलफजल के अकबरनामे मे यद्यपि इस पुस्तक के काम मे लाए जाने का संकेत है। पर उसने कहीं बेगम की पुस्तक का नाम नही दिया है।

कर्नल हैमिल्टन जब भारत से विलायत गए तब एक सहस्र पुस्तकें जिनको उन्होंने दिल्ली और लखनऊ मे सग्रह किया था साथ लेते गए थे। उनकी विधवा ने सन् १८६८ ई० में बृटिश म्यूजिअम के हाथ चुनी हुई ३५२ पुस्तकें बेच दी जिनमे यह भी थी। डाक्टर र्यू जिन्होंने इन पुस्तको की सूची बनाई थी इस पुस्तक को सर्वोत्तम पुस्तकों मे परिगणित किया है। मिस्टर अर्सकिन और प्रोफेसर ब्लौकमैन ने फारसी पुस्तकों का यद्यपि बहुत मनन किया था, पर उन्हे भी इस पुस्तक का पता नहीं था। अंग्रेजी अनुवादिका के लेखानुसार बेगम का हुँमायूँनामा उस समय तक पर्दःनशीन ही रहा जब तक डाक्टर र्यू ने सूची मे उसका नाम नहीं दिया था। उसके अनतर भी वह उसी हालत मे ही पड़ा रहा। मिसेज बेवरिज ने उन्नीसवी शताब्दी के बिलकुल अंत मे इस पुस्तक को अपने हाथ में लिया और इसके अनुवाद को टिप्पणी और परिशिष्ट आदि से विभूषित करके रायल एशाटिक सोसाइटी के ओरिएटल ट्रासलेशन फड की नई माला मे छपवाया।

गुलबदन बेगम ने यह इतिहास लिखकर सबसे अधिक आवश्यक कार्य यह पूरा किया है कि अपने वंश के और कई दूसरे सामयिक घरों के सबधों का परिचय करा दिया है। अंग्रेजी अनुवादिका को इन संबंधों के नाम देने मे बड़ी कठिनाई पड़ी है; क्योंकि यूरोप में एक शब्द जितने संबधों के लिये काम में लाया जाता है, प्रायः उतने के लिये एशिया में लगभग आधे दर्जन पृथक् पृथक् शब्द व्यवहार में लाए जाते है। बेगम ने तारीखों और घटनाओं में कहीं कही अशुद्धि की है। इनका उल्लेख टिप्पणियों मे कर दिया गया है।

यह हिंदी अनुवाद अंग्रेजी अनुवाद से बिलकुल स्वतंत्र है और मूल फारसी से अनुवादित है; इसलिए यदि कहीं कुछ विभिन्नता है तो वह मूल के ही कारण हुई है। बहुत से नोट जो आवश्यक नहीं जान पड़े, छोड दिए गए है और बहुत से नए नोट भी बढाए गये है। अंग्रेजी अनुवाद मे एक बड़ा परिशिष्ट दिया गया है जिसमें बेगमों आदि के छोटे छोटे जीवन-चरित्र दिए गए है। परतु मैने पाठकों के सुभीते के लिए हिंदी अनुवाद में जहाँ बेगमों के नाम आए हैं, उन्हीं के नीचे फुट नोट मे उनका जीवन-चरित्र दे दिया है। ये जीवन-चरित्र मुख्यतया अंग्रेजी अनुवादिका के ही श्रम के फल हैं।

ब्रजरत्नदास।

गुलबदन बेगम का जीवनचरित्र

गुलबदन बेगम के पिता प्रसिद्ध जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर बादशाह थे जिनकी नसों में मध्य एशिया के दो उच्च वशों का रक्त बहता था। इनके पिता जगद्विख्यात तैमूरलंग के पुत्र मीरानशाह के वशधर थे और माता जगद्दाहक चंगेजखा के पुत्र चगत्ताई के वश की थीं। इसी कारण मुगल सम्राट्गण मीरानशाही और चगत्ताई कहलाते है। बाबर का जन्म १४ फरवरी सन् १४८३ ई० को हुआ था और बारह वर्ष की अवस्था में वे फर्गानः राज्य की गद्दी पर बैठे। अपने राज्य के रक्षार्थ वे दस वर्ष तक लड़ते भिड़ते रहे, पर अत मे सन् १५०४ ई० वहाँ से भागकर अफगानिस्तान आए और अर्गूनों को वहाँ से निकालकर उन्होंने अपना राज्य स्थापित किया।

इस राज्य की राजधानी काबुल में सन् १५२३ ई० के लगभग गुलबदन बेगम का जन्म हुआ था। इन उन्नीस वर्षों में भारतवर्ष मे साम्राज्य स्थापित करने की बाबर की अभिलाषा बराबर बनी रही और बेगम के जन्म के समय वह उसी प्रयत्न मे लगे हुए थे। जिस समय बेगम की अवस्था ढाई वर्ष की थी, उसी समय दिल्ली के अफगान सुलतान इब्राहीम लोदी को पानीपत के प्रथम युद्ध मे परास्त कर के बाबर ने मुगल साम्राज्य की नीव डाली थी।

बाबर बादशाह के सात विवाह हुए थे जिनमें प्रथम तीन स्त्रियाँ तैमूरी वश की थी और उनका नाम क्रमशः सुलतान बेगम, जैनब सुलतान बेगम और मासूमा सुलतान बेगम था। पहली इन्हे १५०४ ई० के पहले छोड़कर चली गई और अतिम दोनों की सन् १५०७ ई० के लगभग मृत्यु हो गई। १५०६ ई० में खुरासान में माहम बेगम से विवाह हुआ

जिनके पुत्र हुमायूँ बादशाह थे। इसके कुछ वर्ष के अनंतर दिलदार बेगम और गुलरुख बेगम से इनका विवाह हुआ था। बाबर का अंतिम विवाह सन् १५१९ ई० में यूसुफजई सरदार की पुत्री बीबी मुबारिका से हुआ था और वह निस्संतान रहीं।

गुलबदन बेगम की माता दिलदार बेगम थीं जिनके मातृ-पितृ वंश का कुछ भी वर्णन उनके पति या पुत्री ने अपने-अपने ग्रंथों में नहीं दिया है। यद्यपि इससे यह ज्ञात होता है कि वह शाही घराने की नहीं थी, तो भी बाबर के इन्हें आगाचः लिखने से यह प्रगट होता है कि यह अच्छे वंश की अवश्य थीं। इन्हें पांच संतानें हुईं जिनमें दो पुत्र और तीन पुत्रियाँ थीं। सन् १५१५ ई० में या इसके पहले गुलरंग बेगम का सन् १५१७ ई० में गुलचेहरः बेगम का, सन् १५१९ ई० में अबुन्नासिर मुहम्मद हिंदाल मिर्जा का, सन् १५२३ ई० गुलबदन बेगम का और सन् १५२५ ई० में अंतिम पुत्र का जन्म हुआ था जिसका नाम उनकी बहिन ने आलौर मिर्जा लिखा है और जो आगरे पहुँचने पर सन् १५२९ में मर गया।

सन् १५२५ ई० के नवंबर महीने में जब बाबर काबुल से भारत की ओर चले थे, उस समय गुलबदन बेगम ने डीहेयाकूब में सेना एकत्र होने का दृश्य अवश्य ही देखा होगा, क्योंकि उसने आगे जाकर अपनी पुस्तक में इस प्रकार की घटना का वर्णन किया है। वर्तमान समय में वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण दूरस्थ देशों और नगरों के समाचार बहुत सहज और थोड़े समय में मिल जाते हैं। पर बेगम के समय में उन्हीं समाचारों को प्राप्त करने में जितनी कठिनाइयाँ उठानी पड़ती थीं, उनका विचार करना भी सुलभ नहीं जान पड़ता। अनजान और दूर देश में जिनका उस समय मानचित्र या पुस्तकों के अभाव से कुछ भी पता नहीं मिल सकता था, पुरुषों के चले जाने पर उनके घर की स्त्रियों को महीनों और वर्षों तक समाचार लानेवाले मनुष्यों के रास्ते देखने पड़ते थे।

बाबर काबुल में बहुत थोडी सेना छोडकर गया था और यहाँ की अध्यक्षता नाम मात्र के लिये मिर्जा कामराँ पर छोड़ गया था जिसकी अवस्था उस समय कम थी। हुमायूँ को जो उस समय सत्रह वर्ष का था, और सन् १५२० ई० से बदख्शाँ की सूबेदारी कर रहा था, बाबर ने बुला भेजा था और वह तीन दिसंबर को बागेवफा में अपने पिता से आ मिला। काबुल मे देर तक ठहरने के कारण बाबर को उसकी राह देखनी पडी थी और उसके आने पर उन्होंने उसपर क्रोध प्रकाश किया था। पर इस दोष में अंश माहम बेगम का भी था जिसने अपने पुत्र को बहुत दिनो पर देखा होगा।

बाबर दिसंबर में कई बार बीमार हुआ था जिसका समाचार अवश्य ही काबुल पहुँचा होगा। सन् १५२६ ई० के जनवरी महीने मे बाबर ने दुर्ग मिलवात मे प्राप्त की हुई कुछ पुस्तकें मिर्जा कामराँ के लिए भेजी थी और बची हुई हुमायूँ को दी थी। ये पुस्तकें बहुमूल्य और धार्मिक विषयों पर थीं। सोलहवी शताब्दी की सर्वोत्तम पुस्तके अभी तक भविष्य के गर्भ में ही छिपी हुई थी और तुजुके-बाबरी अभी बन रही थी।

२६ फरवरी को हुमायूँ ने अपनी प्रथम युद्ध-परीक्षा मे सफलता प्राप्त की और हिसार फीरोजा पर अधिकार कर लिया जो समाचार उसके माता पिता दोनों को समान ही शुभ मालूम हुआ होगा। यह समाचार शाहाबाद से काबुल भेजा गया था और यही पहले पहल हुमायूँ की डाढी बनवाई गई थी। इसके अनतर १२ अप्रैल को पानीपत का प्रथम युद्ध हुआ जिस ने भारत मे मुगल साम्राज्य की नीव प्रतिष्ठित कर दी। दिल्ली के मुसलमानो के कोष से जो कुछ प्राप्त हुआ था, बाबर ने उस सब को बाँट दिया जिससे उसे लोग हँसी मे कलदर कहने लगे। बाबर ने अपने मित्र ख्वाजः कला के हाथ इस लूट मे से काबुल के प्रत्येक संबंधी के लिये उसके उपयुक्त उपहार भेजा था और साथ में एक सूची बनाकर दी थी कि जिसमें

किसी को देते समय गड़बड़ न हो। ये उपहार अरब और एराक तक की मसजिदों और वहाँ के रहनेवाले संबंधियों को भेजे गए थे।

गुलबदन बेगम ने अपनी पुस्तक में बेगमों आदि को क्या क्या मिला था, इसका पूरा विवरण दिया है। बाबर बादशाह ने अपने एक पुराने सेवक के लिए एक बहुत बड़ी मोहर जिसके बीच में सिर जाने के लिये छेद बना हुआ था, ढलवाकर भेजी थी और हँसी में उसके नाम के आगे सूची मे केवल एक मोहर लिखवाई थी। उस सेवक के एक मोहर सुनकर दुःखित होने और पाने पर प्रसन्न होने आदि का पुस्तक में अच्छा वर्णन दिया गया है। बादशाह की आज्ञानुसार बाग मे कई दिनों तक नाच रंग हुआ और विजय के लिये परमेश्वर को धन्यवाद दिया गया। गुलबदन बेगम ने अपने उपहार के बारे मे कुछ भी नहीं लिखा है जो उसके पिता ने अवश्य ही उसके लिए चुनकर भेजा होगा।

बाबर की जीवित बेगमो मे माहम बेगम मुख्य थी और उन्हें हुँमायूँ के अनतर चार सताने हुई, पर एक भी जीवित नहीं रही। इस शोक को कम करने के लिए माहम बेगम ने सन् १५१९ ई० और सन् १५२५ ई० में क्रमशः हिंदाल और गुलबदन बेगम को दिल्दार बेगम से लेकर स्वयं उनका लालन पालन किया। सहृदय स्त्री पुरुष दूसरो के बच्चों को लेकर उनका पालन करते है, परंतु माहम बेगम ने दूसरो की सतान से अपने पति की ही सतान को अपने वात्सल्य स्नेह का पात्र बनाना उत्तम समझा। बाबर और माहम के बीच मे हिंदाल के जन्म के पहले यह बात तै हो चुकी थी कि दिल्दार बेगम को यदि पुत्र होगा तो वह उसे अपना पुत्र बना लेगी और जब बाबर बाजौर तथा स्वात विजय करने गया था, उस समय माहम बेगम ने इसी बात को फिर लिखा और साथ ही पूछा था कि दिल्दार बेगम को पुत्र होगा या पुत्री। बाबर ने स्वय या और किसी से निश्चित करा के लिख भेजा कि पुत्र होगा। इसके जानने की सुगम चाल उस समय यह थी कि कागज के दो टुकड़ों पर

किसी एक लड़के और एक लड़की का नाम लिखते थे और दोनों को मोड़कर मिट्टी के बीच मे रखकर गोली बना लेते थे। इन दोनों गोलियों को पानी में डाल देते थे और जल के संसर्ग से जब मिट्टी घुलने लगती थी, तब जो नाम पहले खुलता था उसी से भविष्य-वाणी कहते थे। २६ जनवरी को बाबर ने भविष्य-वाणी लिखकर भेजी थी और ४ मार्च को पुत्रोत्पत्ति हुई। इसका नाम अबुन्नासिर मुहम्मद हिंदाल मिर्जा रखा गया।

सन् १५२६ ई० के अगस्त में माहम बेगम को फारूक नामक पुत्र हुआ पर छोटी ही अवस्था में वह जाता रहा। उसी वर्ष के दिसंबर महीने मे इब्राहीम लोदी की माता बूआ बेगम ने बाबर को विष दे दिया। इस समाचार को बाबर ने उस पत्र के साथ ही भेजा जिसमें उसने अपने बच जाने का वृत्तात दिया था। बाबर उसका कितना सम्मान करता था और विष दे देने पर उसको जब कैद में काबुल भेजा, तब किस प्रकार उसने आत्म-हत्या कर ली, इन सब घटनाओं का बेगम ने पूरा पूरा वर्णन दिया है।

१६ मार्च सन् १५२७ ई० को कन्हवा युद्ध में बाबर ने विजय प्राप्त किया जिसका समाचार काबुल भेजा गया था।

काबुल उस समय बेगमों से भरा हुआ था और वहाँ की अध्यक्षता मिर्जा कामराँ के अधीन होने के कारण उन लोगों में कुछ अशाति फैल गई थी जिसका वृत्तात ख्वाजः कलाँ ने एक पत्र में लिखकर और बहुत कुछ दूत द्वारा कहलाकर बाबर पर प्रकट कर दिया। बाबर को यह पत्र ६ फरवरी सन् १५२८ ई० को मिला जिसका उत्तर ११ फरवरी को भेजा गया था। इसीके साथ या कुछ समय अनंतर उसी वर्ष बेगमों को भारत आने की आज्ञा मिल गई। सबसे पहले सन् १५२६ ई० के जनवरी महीने मे माहम बेगम गुलबदन बेगम को साथ लेकर जो उस समय छ वर्ष की थी, भारत को रवानः हो गई। गुलबदन बेगम ने

इस यात्रा के केवल अंतिम भाग का वर्णन किया है। वह १६ फरवरी को सिंध नदी पर पहुँची जिसका समाचार बाबर को गाजीपुर में १ अप्रैल को मिला था। २७ जून को अर्द्ध रात्रि में वे आगरे पहुँचीं जहाँ बाबर ने कुछ दूर पैदल जाकर उनका स्वागत किया और वे पैदल ही महल तक साथ आए।

गुलबदन बेगम दूसरे दिन आगरे पहुँची और वहाँ उसका जैसा स्वागत हुआ, वह उसीकी पुस्तक में पढने योग्य है। बाबर ने चार वर्ष के अनतर अपनी स्त्रियों और पुत्रियों में से इन्हीं दोनों को पहले पहल देखा था। गुलबदन बेगम को अपने पिता का बहुत कम ध्यान रहा होगा, क्योंकि दो ही वर्ष की अवस्था में उसने उन्हें देखा था। कदाचित् वह पहले डरती भी रही हो, पर मिलने पर उसने अपनी प्रसन्नता को अवर्णनीय लिखा है। अर्द्ध-शताब्दी से अधिक समय व्यतीत हो जाने पर बेगम अपनी अशिक्षित लेखनी से उस घटना का ऐसा चित्र खींच सकी हैं जिससे ज्ञात होता है कि उनका मानसिक बल वृद्धावस्था या शात जीवन के कारण जीर्ण नहीं हुआ था। वह अपने लडकपन मे अवश्य ही चंचल और चपल रही होगी और युवा अवस्था में भी उसे किसी प्रकार का दुःख नहीं उठाना पड़ा था।

इसके अनंतर बाबर ने इन लोगों को धौलपुर और सीकरी ले जाकर अपनी बनवाई हुई इमारतें और बाग दिखलाए। इसीके अनतर बेगम ने अपनी पुस्तक मे खानजादः बेगम के साथ दूसरी बेगमों का आना लिखा है; पर बाबर के आत्मचरित्र में माहम बेगम के अनंतर किसी और बेगम के आने का वर्णन नहीं मिलता। इसी वर्ष बाबर के स्वास्थ्य बिगड़ने का समाचार सुनकर हुमायूँ बदख्शाँ की सूबेदारी दस वर्षीय हिंदाल को सौंपकर बिना आज्ञा पाए आगरे चले आए। इससे बाबर बडा क्रुद्ध हुआ, पर अंत में उसने क्षमा करके उसे उसकी जागीर संभल पर भेज दिया।

कुछ ही दिनों बाद हुमायूँ अपनी जागीर संभल में बीमार हो गया और उसके जीवन की आशा बहुत कम रह गई। उस समय हुमायूँ की परिक्रमा करके बाबर के प्राण निछावर करने, अपने अधिक अस्वस्थ होने पर अपनी दो पुत्रियों गुलरंग बेगम और गुलचेहरः बेगम का विवाह निश्चित करने, अमीरों और सरदारों के सामने हुमायूँ को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करने, और २६ दिसम्बर सन् १५३० ई० को बाबर की मृत्यु तथा बेगमों के शोक आदि का गुलबदन बेगम ने बड़ा हृदयद्रावक वर्णन किया है।

हुमायूँ को जो साम्राज्य भारत में मिला था उसकी जड़ जमी हुई नहीं थी। शस्त्र ही के बल से उसपर अधिकार हुआ था और उसी के द्वारा वह स्थापित रह सकता था। हुमायूँ के चरित्र-चित्रण और उसके गुणों और दोषों का उसके भाइयों के चरित्र से मिलान करके उसकी विशेष योग्यता दिखलाना अधिक आवश्यक है, पर उसके लिए यहाँ स्थान कम है। जो कुछ वृत्तांत यहाँ दिया जाता है उससे कुछ आभास अवश्य मिल जायगा।

हुमायूँ जब गद्दी पर बैठा तब अपने पिता के इच्छानुकूल इसने अपने भाइयों को बडी बडी जागीरें दीं। कामराँ को काबुल जागीर में मिला था पर उसने दूसरे ही वर्ष पंजाब पर अधिकार कर लिया। हुमायूँ भ्रातृ-प्रेम के कारण इस पर चुप रह गए। सन् १५३३ ई० में मिर्जाओं का विद्रोह दमन हुआ और सन् १५३५ ई० में गुजरात विजय हुआ, पर दो वर्ष के अनंतर वह हाथ से निकल गया। हुमायूँ की दीर्घसूत्रता के कारण बंगाल में शेरशाह सूरी का बल बराबर बढ़ता चला जा रहा था जिससे सन् १५३६ ई० में उसपर आक्रमण के आरभ में हुमायूँ को अच्छी सफलता प्राप्त हुई थी, पर इसका अंत हुमायूँ के साम्राज्य का अंत था। जिस समय हुमायूँ गौड़ में सुख से दिन व्यतीत कर रहा था, उस समय हिंदाल ने कुछ सरदारों की राय से विद्रोह कर

दिया और यह समाचार सुनकर जब वह लौटा, तब रास्ते में २७ जून सन् १५३६ ई० को चौसा युद्ध में शेरशाह से पूर्णतया पराजित होकर राजधानी पहुँचा।

इसी युद्ध में जब हुमायूँ गंगाजी पार करते समय डूब रहा था, तब नाजिम नामक भिश्ती ने उसकी रक्षा की थी। पुरस्कार के रूप में हुमायूँ ने इस भिश्ती को कुछ समय के लिए एक दिन तख्त पर बिठाया था, जब उसने अपनी मशक के चमड़े के सिक्के चलाए थे। इसी समय गुलबदन बेगम से हुमायूँ ने भेंट की जिसका इस बीच में खिज्र ख्वाजः खाँ के साथ विवाह हो चुका था और जिसकी अवस्था सत्रह वर्ष के लग-भग थी। सन् १५३७ ई० मे माहम उस समय अपनी माता दिलदार बेगम के साथ रहती थी। माहम बेगम के सामने ही उसका पुत्र हुमायूँ अफीमची बन गया था, पर अपनी मृत्यु के कारण अपने वश की अवनति दुर्दशा और बहिष्कार देखने से वह बच गई। इसकी मृत्यु के अनंतर हुमायूँ के दुर्भाग्य ने अधिक जोर पकड़ा था, यहाँ तक कि उसके प्रियपात्र भाई हिंदाल ने भी पराजय के समय साथ देने के बदले विद्रोह कर दिया था।

इसके अनतर जब शेरशाह सूरी ने बगाल की ओर से चढाई की तब हुमायूँ ने आगरे में कामराँ को अपना प्रतिनिधि बनाकर रखा और स्वयं युद्ध के लिये ससैन्य कन्नौज की ओर बढा। इधर कामराँ अपने बारह सहस्र सवारों के साथ लाहौर चल दिया और उसके साथ राजधानी से बहुत सी स्त्री, पुरुष रक्षा के लिये चले गए। गुलबदन बेगम को भी हुमायूँ का आज्ञापत्र देखकर साथ जाना पड़ा जिससे वह बहुत कष्ट झेलने से बच गई। १७ मई सन् १५४० ई० को कन्नौज का अपूर्व युद्ध हुआ जिसमे हुमायूँ की अगणित सेना दस सहस्र अफगानो के सामने से भाग गई। हुमायूँ आगरे होता हुआ लाहौर को चल दिया और दिलदार बेगम आदि स्त्रियाँ मिर्जा हिंदाल की रक्षा मे सीकरी होती हुई वहीं पहुँची; पर शत्रु के चारों ओर होने उन्हे बहुत कष्ट उठाना पडा था।

अब लाहौर में तैमूरियों का बड़ा जमघट हो गया और भाइयों में तब तक बहुत तर्क वितर्क, राय सलाह होती रही जब तक शेरशाह व्यास नदी के तट पर नहीं पहुँच गया। तब इन लोगों की नींद खुली और सब ने अपना अपना रास्ता लिया। रावी नदी पार करके हैदर मिर्ज़ा काश्मीर की ओर, हिंदाल और यादगार नासिर मिर्ज़ा मुलतान की ओर, कामराँ और मिर्ज़ा अस्करी काबुल की ओर, और हुमायूँ सिंध की ओर बढ़े। स्त्रियों का अधिकांश भाग मिर्ज़ा कामराँ के साथ काबुल चला गया। गुलबदन बेगम भी मिर्ज़ा के साथ काबुल गई क्योंकि उसने अपनी पुस्तक में लिखा है कि जब हुमायूँ फ़ारस से लौटकर काबुल आए, तब पाँच वर्ष के अनतर फिर मुझसे भेंट हुई थी।

इन पाँच वर्षों में हुमायूँ का हमीदा बानू बेगम के साथ विवाह करना, राजपूताने के रेगिस्तान की कठोर यात्रा, सिंध के कष्ट, अमरकोट में अकबर का जन्म फ़ारस की यात्रा और वहाँ की घटनाओं का जो वर्णन गुलबदन बेगम ने हमीदा बानू बेगम से सुनकर लिखा है, वह ऐसी उत्तमता से दिया गया है कि यही जान पड़ता है कि वह भी साथ ही रही होगी। गुलबदन बेगम काबुल में बड़े आराम से रही क्योंकि उसके पुत्रादि सब वहीं थे जिनमें केवल एक का नाम बेगम ने सआदतयार ख़ाँ बतलाया है। यद्यपि खिज्र ख्वाजः ख़ाँ के कई पुत्र थे, पर उनमें कौन कौन बेगम की संतान थी, सो ज्ञात नहीं। मिर्ज़ा कामराँ शाही बेगमों के साथ बड़ा बुरा व्यवहार करता था, यहाँ तक कि उन्हें उनके महलों से निकाल दिया था और उनके वेतन घटा दिए थे। पर गुलबदन बेगम की वह प्रतिष्ठा करता था और अपने घरवालों की तरह समझता था।

सन् १५४३ ई० में मिर्ज़ा कामराँ ने हिंदाल को गजनी देने की प्रतिज्ञा करके कंधार पर अधिकार कर लिया और उस पर अस्करी को नियुक्त किया। हिंदाल से कामराँ ने कपट किया और उसे गजनी न देकर काबुल ले गया।

सन् १५४५ ई० में फारस की सहायक सेना सहित हुमायूँ कँधार पहुँचा जहाँ से अकबर और उसकी बहिन बख्शीबानू बेगम काबुल भेज दिए गए थे। यहीं से हुमायूँ ने बैराम खाँ को काबुल भेजा जो अकबर, हिंदाल आदि का सुसमाचार लेकर खानजादः बेगम के साथ कधार लौट आया। ३ सितंबर को कधार विजय हुआ और हुमायूँ ने अस्करी को क्षमा कर दिया। अस्करी ने बलूची सरदार को जो पत्र लिखे थे, वे उस समय जब कि अस्करी सब के साथ बड़ी प्रसन्नता से बातचीत कर रहे थे, उसके सामने रख दिए गए। हुमायूँ का बदला केवल यही था।

कामराँ ने काबुल में कधार के पतन, शाही सेना के काबुल की ओर रवानः होने, खानजादः बेगम की मृत्यु और मिर्जाओं के भागने का सब एक साथ ही सुना जिससे वह बहुत घबरा उठा। उसने युद्धार्थ सेना भेजी; पर कुछ युद्ध नहीं हुआ और कामराँ को अंत में गजनी होते हुए सिंध भागना पड़ा। १५ नवंबर को हुमायूँ ने काबुल पर अधिकार कर लिया। वर्षा ऋतु में हुमायूँ ने बदख्शाँ पर चढाई की और काबुल के सूबेदार मुहम्मद अली मामा को लिख भेजा कि यादगार नासिर को गला घोंटकर मार डालो क्यों कि न्याय होनेपर उसे यह दंड मिला है। पर मुहम्मद अली जब यह कार्य नहीं कर सका तब दूसरों ने इस काम को पूरा किया।

इसी समय हुमायूँ किशम में बीमार पड गया। यह समाचार सुनकर कामराँ ने सिंध से आकर काबुल पर अधिकार कर लिया। पर हुमायूँ ने वहाँ से लौटते ही कामराँ से काबुल छीन लिया। सन् १५४८ ई० में हुमायूँ ने बदख्शाँ पर पुनः चढ़ाई की और तालिकान विजय किया। कामराँ के क्षमाप्रार्थी होने पर उसे क्षमा कर दिया और बदख्शाँ में अस्करी की जागीर के पास उसके लिये जागीर नियत कर दी। सन् १५४८ ई० में गुलबदन बेगम और दूसरी बेगमें हुमायूँ की सेना के साथ जो बलख

को जा रही थी, कोहे दामन तक सैर करने गईं और फर्जा के झरने को देखती हुई लौट आई।

हुमायूँ बलख विजय करने चले थे पर रास्ते ही से उनके सैनिक भागने लगे। कामराँ जिसे सहायता के लिए बुलाया था, नहीं आया और उजबेगों ने एकाएक धावा करके बहुतों को मार डाला। इससे निरुत्साह होकर हुमायूँ काबुल लौट आए; पर यहाँ भी कामराँ का कुछ पता नहीं चला। कामराँ इधर उधर जंगलों में घूम रहा था; पर दूसरे वर्ष सन् १५५० ई० से किबचाक दर्रे में दोनों भाइयों का सामना हो गया और घोर युद्ध के अनंतर हुमायूँ बहुत घायल हो गया। खिज्र ख्वाजः खाँ और सय्यद बाकी तर्मिजी हुमायूँ को टट्टू पर बैठा कर और दोनों ओर से थामकर बाहर लिवा ले गए। कामराँ का काबुल पर फिर अधिकार हो गया और तीन महीने तक वहाँ हुमायूँ की मृत्यु का समाचार फैला रहा। इसी के अनतर बदख्शी सेना की सहायता से हुमायूँ ने कामराँ के मुख्य सेनापति कराचः खाँ को उश्तुर ग्राम में पूरी तरह से परास्त किया जहाँ अकबर पिता से आकर मिला।

अब कामराँ की कहानी समाप्त होने पर आ गई। २० नवंबर सन् १५५१ ई० को कामराँ के रात्रि-आक्रमण में वीरतापूर्वक लड़ते हुए हिंदाल मारा गया जिसकी मृत्यु से गुलबदन बेगम को बड़ा शोक हुआ क्योंकि वही एक उनका सहोदर भाई था। हिंदाल की केवल एक पुत्री रुकिया बेगम थी जिसका अकबर से विवाह हुआ था।

कामराँ यहाँ से भागकर भारत में सलीम शाह सूरी की शरण में गया, पर वहाँ से अपमानित होने पर भागा। रास्ते में भागते समय आदम खाँ गक्खर ने इसे पकड़ लिया और हुमायूँ के पास भेज दिया। १७ अगस्त सन् १५५३ ई० को हुमायूँ के आज्ञानुसार कामराँ अंधा किया जाकर मक्का भेज दिया गया। दो वर्ष पहले अस्करी को बदख्शाँ से मक्का जाने की आज्ञा मिल चुकी थी और वह उधर ही सन् १५५८ ई० में दमिश्क

नगर में मर गया। इसके एक वर्ष पहले ही कामराँ की मृत्यु ५ अक्तूबर सन् १५५७ ई० को हो गई थी।

भाइयों से छुटकारा मिल जाने पर हुमायूँ सन् १५५४ ई० के १५ नवंबर को काबुल से रवानः हुए। काबुल नदी से नाव पर सवार होकर अकबर के साथ पेशावर पहुँचे और पंजाब विजय कर २३ जुलाई सन् १५५५ ई० को दिल्ली के तख्त पर बैठे। खिज्र ख्वाजः खाँ भी साथ ही भारत आया था। तुर्की के सुलतान सुलेमान के एडमिरल सीदी अली रईस को युद्धादि के कारण कुछ अफसरों और ५० मल्लाहों के साथ सूरत से लाहौर और वहाँ से स्थल मार्ग से तुर्की जाना पड़ा था। भारतीय मुसलमानों ने इसकी बड़ी प्रतिष्ठा की और शाह हुसेन अर्गून ने इसे अपने यहाँ रखना चाहा, पर इसने नहीं माना। लाहौर में यह रोका गया क्योंकि शाही आज्ञा के पहुँचने के पहले वहाँ का सूबेदार उन्हें नहीं जाने दे सकता था। हुमायूँ ने नए समाचार सुनने की इच्छा से एडमिरल को दिल्ली बुला भेजा और उसका अच्छा स्वागत किया।

हुमायूँ ने उसे स्थायी रूप से अपने यहाँ रखना चाहा; पर वैसा न हो सकने पर उसे कुछ दिन के लिये ठहराया कि वह जो एक अच्छा ज्योतिषी था, सूर्य और चंद्र ग्रहणों का ठीक समय निकालने, सूर्य के रास्ते आदि बतलाने में उसके दरबार के ज्योतिषियों की सहायता करे। वह चगत्ताई-तुर्की भाषा का एक अच्छा कवि था और पठन पाठन ही में अधिक समय व्यतीत करता था। अधिक ठहरने से घबराकर उसने दो गजलों में छुट्टी की प्रार्थना की और हुमायूँ ने आज्ञा दे दी। वह जाने की तैयारी में था कि शेरशाह के बनवाए हुए शेरमंडल की सीढ़ी पर से गिरकर हुमायूँ की मृत्यु हो गई। २४ जनवरी सन् १५५६ को शुक्रवार के दिन उदय होते हुए शुक्र को देखकर यह सीढ़ी से उतर रहे थे कि मुअज़िन ने अजाँ पुकारी और सीदी अली के कथनानुसार जैसा कि इनका

स्वभाव था, यह घुटनों के बल झुके और लड़खड़ाकर गिर पड़े। तीन दिन के अनंतर २७ जनवरी को मृत्यु हुई।

सीदी अली रईस की सम्मति से इस घटना को सब तब तक छिपाए रहे जब तक लाहौर में बैराम खाँ खानखानाँ ने अकबर को राजगद्दी पर बैठाकर खुतबा नहीं पढ़वा दिया था। कलानौर में अकबर से भेंट कर सीदी अली अपने देश को चला गया। बैराम खाँ खानखानाँ के हाथ में कुल प्रबंध आया। इसी वर्ष अकबर ने मुहम्मद कुली खाँ बर्लास, अतगा खाँ और खिज्र ख्वाजः खाँ को थोड़ी सेना के साथ अपनी माता और बेगमों को लिवा लाने के लिए भेजा। ये बेगमें झट रवानः होकर सन् १५५७ ई० के आरंभ में पश्चिमीय सिवालिक पहाडी के पास मानकोट पहुँचकर अकबर से मिलीं। हमीदा बानू बेगम के साथ गुलबदन बेगम, गुलचेहरः बेगम, हाजी बेगम और सलीमा सुलतान बेगम भी थीं।

यहाँ से बेगमें लाहौर गईं और वहाँ से ७ दिस० १५५७ ई० को दिल्ली के लिये रवानः हुईं। जालंधर में सब लोग ठहरे जहाँ बैराम खाँ खानखानाँ का विवाह बाबर की नतनी सलीमा सुलतान बेगम से हुआ जिसकी अवस्था उस समय बहुत थोडी थी। इस संबंध को हुमायूँ ने ही स्थिर किया था और मृत्यु हो जाने के कारण उसके इच्छानुसार यह काम पूरा किया गया था। बैराम खाँ को उसके कार्यों और योग्यता के पुरस्कार में शाही घराने की लड़की ब्याही गई थी। यद्यपि सलीमा बेगम अवस्था में छोटी थी, पर वह योग्य और शिक्षिता थी। कवि भी थी और कविता में अपना उपनाम मखफी (छिपा हुआ) रखती थी।

हेमूँ बक्काल के दिल्ली और आगरा विजय कर लेने पर जब अकबर उस ओर जाने लगे, तब सन् १५५६ ई० के आरंभ में खिज्र ख्वाजः खाँ को लाहौर में सूबेदार बनाकर छोड़ गए थे। सिकंदर शाह सूरी की देख भाल हो के लिए यह सेना सहित नियुक्त किए गए थे और वह भी यह अवसर पाकर मानकोट से निकाला। खिज्र ख्वाजः कोई अच्छा सेनानी

नहीं था और इसी से युद्ध मे परास्त होकर वह लाहौर लौट आया जिसे सिकंदर ने आकर घेर लिया। अकबर ने लौटकर पजाब में शांति स्थापित की। इसके अनंतर यह किसी अच्छे पद पर नहीं नियुक्त किया गया। अकबर का फूफा होने के कारण यह आराम से दरबार में रहा करता था। एक बार इसने अकबर को घोड़े भेंट किए थे और सन् १५६३ ई० में जब अकबर दिल्ली में घायल हुआ था, तब उसने उसकी सेवा की थी। इसकी मृत्यु कब और कैसे हुई सो ज्ञात नहीं। यह पाँचहजारी मसबदार और अमीरुल्-उमरा बनाया गया था।

गुलबदन बेगम का वर्णन किसी इतिहास में भारत आने के बाद से सन् १५७४ ई० तक जब वह हज को गई थीं, नहीं मिलता। इस बीच में कई ऐसी घटनाएँ हुई हैं जिनसे इन बेगमों मे बहुत कुछ तर्क और बातचीत होती रही होगी। पहली घटना बैराम खाँ का पतन ही है। हमीदा बानू बेगम इस षड्यंत्र को अवश्य ही जानती थीं क्योंकि उन्हीं से मिलने के बहाने अकबर दिल्ली गए थे। यद्यपि वह यह जानती थीं कि बैराम खाँ ने उनके पति की कैसी सेवा की थी, पर इस कार्य में भी उसकी कम से कम मौखिक सम्मति अवश्य थी।

इसी के अनंतर माहम अनगा के पुत्र अदहम खाँ ने शम्सुद्दीन अतगा खाँ को जब वह अपने दफ्तर में बैठा था, १६ मई सन् १५६२ ई० की रात्रि को मार डाला और स्वयं हरम के द्वार पर जा खड़ा हुआ। अकबर के निकलने पर उससे अपने दोष के लिये तर्क करने लगा जिसपर बादशाह ने घूँसा मारकर उसे गिरा दिया। शाही आज्ञानुसार वह दीवार से नीचे फेंका जाकर मार डाला गया जिसके चालीसा को उसकी माता माहम भी मर गई।

कुछ वर्षों के लिये हुमायूँ की अंतिम स्त्री और मुहम्मद हकीम की माता माहचूचक बेगम की चालों कार्यों ने हरम में बातचीत के लिये नया विषय पैदा कर दिया था। सन् १५६१ ई० मे इसने काबुल के सूबेदार

मुनइम खाँ के पुत्र गनी को जिसे वह वहाँ छोड़कर राजधानी आया था, काबुल से निकाल दिया। मुनइम खाँ कुछ सेना सहित भेजा गया पर माहचूचक बेगम ने जलालाबाद में उसे परास्त कर बिदा कर दिया। तीन आदमियों को उसने प्रबंधकर्ता बनाया; पर दो उसकी आज्ञा से मारे गए और तीसरे हैदर कासिम कोहबर से स्वयं विवाह कर लिया। इसके अनंतर शाह अबुलमआली पहुँचा जिससे उसने अपनी पुत्री फखुन्निसा का विवाह कर दिया। कुछ ही दिनों में माहचूचक बेगम और हैदर कासिम को मार डाला जिससे काबुल में विद्रोह मच गया। हकीम के बुलाने पर मिर्जा सुलेमान ने चढ़ाई कर अबुलमआली को मरवा डाला और काबुल में शान्ति स्थापित कर और अपनी एक पुत्री से हकीम का विवाह कर लौट गया।

हमीदा बानू बेगम का भाई ख्वाजः मुअज्जम जो भक्की था, अत में कुछ पागल हो गया और उसने अपनी स्त्री जुहरा को मार डालने के लिये धमकाया। उसकी माता बीबी फातिमा ने अकबर से जाकर सब वृत्तांत कहा और न्याय चाहा। अकबर ख्वाजः मुअज्जम से कहलाकर कि मैं तुम्हारे घर पर आता हूँ, साथ ही पहुँचे। पर उसने जुहरा को मारकर छुरा शाही नौकरों के बीच में फेंक दिया। बादशाह ने उसे नदी मे फेंकवा दिया; पर जब वह नहीं डूबा तब ग्वालियर दुर्ग में उसे कैद किया जहाँ उसकी मृत्यु हुई।

गुलबदन बेगम का यह जीवन अकबर की छत्रच्छाया में बड़े सुख और शांति के साथ व्यतीत हुआ था। यह माता और स्त्री के कामों, पठन पाठन और कविता में समय बिताती थीं और भारतीय नई चाल और व्यवहार का भी परिशीलन करती रही होंगी। अकबर के साथ उर्दू अर्थात् कंप में भी रहती थीं क्योंकि कप के वर्णन में इनके खेमे का स्थान हमीदा बानू बेगम के पास ही लिखा गया है।

यद्यपि गुलबदन बेगम की इच्छा बहुत दिनों से हज्ज करने की थी पर अकबर नहीं जाने देते थे। अंत में सन् १५७५ ई० में जाना ठीक हुआ।

उच्च वंश के कारण यात्रियों मे गुलबदन बेगम मुख्य थीं। इसके अनंतर सलीमा सुलतान बेगम का नाम है जो अकबर की स्त्री थीं। यद्यपि सौभाग्यवती स्त्री के लिये हज्ज करने की चाल नहीं थी, पर मुसलमानी धर्म में यह नियम है कि यदि इच्छा प्रबल हो तो कर सकती हैं। अस्करी की स्त्री सुलतान बेगम कामराँ की दो पुत्रियाँ हाजी बेगम और गुलएजार बेगम, गुलबदन बेगम की पौत्री अम्म् कुलसुम और सलीमा खानम भी साथ थीं। इनके सिवा और भी स्त्रियाँ साथ गई थीं जिनमें गुलनार आगाचः, बीबी सर्वेकद जो मुनइम खाँ खानखानाँ की विधवा स्त्री थी, बीबी सफीया और शाहम आगा के नाम उल्लेखनीय हैं।

१५ अक्तूबर सन् १५७५ ई० (शाबान ९८२ हि०) का फतहपुर सीकरी से यह कारवाँ चला। यह कारवाँ मुहम्मद बाकीखाँ कोका और रूमीखाँ आदि सरदारों के अधीन था। सुलतान सलीम एक मंजिल तक साथ गए और चतुर्वर्षीय मुराद को सूरत तक जाने की आज्ञा थी; पर गुलबदन बेगम के कहने से वह इतनी दूर जाने से बच गया। रास्ते में बहुत कुछ कठिनाइयाँ उठानी पड़ी थीं क्योंकि साम्राज्य में अभी तक पूरी शांति स्थापित नहीं हो सकी थी। राजपूताना और गुजरात होते हुए अतमें ये लोग सूरत पहुँचे जहाँ कुलीजखाँ अंदोजानी सूबेदार था। अरब समुद्र में पुर्तगालवालों का प्राधान्य था और इससे उनका पास अर्थात जाने का आज्ञापत्र लेना आवश्यक था। बेगमें तुर्की जहाज 'सलीम' पर जिसे किराए पर लिया गया था, सवार हुईं और शाही जहाज 'इलाही' पर अन्य यात्री सवार हुए। इसी दूसरे जहाज को रोका गया था क्योंकि पहला किराए का होने से बिना पास के आ जा सकता था। अंत में पास मिल जाने पर १७ अक्तूबर सन् १५७६ ई० को जहाज सूरत से आगे बढ़े।

बेगमें अरब में लगभग साढ़े तीन वर्ष के रहीं और चारों स्थानों की घूम घूमकर यात्रा की। सन् १५७९ ई० मे ख्वाजः यहिया मीर हज हुआ जो अब्दुल-क़ादिर बदायूनी का मित्र और भला आदमी था। यह बेगमों

को लिवा लाने और अरब के तोहफे लाने के लिये भेजा गया था। लौटते समय अदन के पास जहाज टूट गया जिससे लगभग एक वर्ष तक इन लोगों को उस जंगली देश में रहना पड़ा था। वहाँ के सूबेदार ने इन लोगों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया था जिसके लिए तुर्की सुलतान मुराद ने उसे दंड दिया। सन् १५८० ई० के अप्रैल में एक दिन इन्हें दक्षिण से एक जहाज आता दिखलाई दिया। पता लगाने के लिए एक नाव पर कुछ आदमी भेजे गए। उस पर बायज़ीद बिआत, उसकी स्त्री और बच्चे आदि थे। इसके द्वारा समाचार पहुँचने पर दूसरे जहाज का प्रबंध हुआ जिससे ये सन् १५८२ ई० में सूरत पहुँचीं और वहाँ कुछ दिन ठहरकर फतहपुर सीकरी गईं।

अजमेर में चिश्तियों के मकबरों का दर्शन किया और यहीं सलीम से भेंट हुई। कन्हवा में बादशाह से भी भेंट हुई। बेगम की मित्र बेगा बेगम इन लोगों के पहुँचने के पहले ही मर चुकी थीं।

बेगम ने हुमायूँनामा के अतिरिक्त कुछ कविता भी लिखी थी जिसमें के एक शैर को मीर मेंहदी शीराजी ने अपनी पुस्तक तजकिरः तुल्खवातीन में रखा है। उसका अर्थ यह है कि जो नायिका अपने प्रेमी से प्रेम नहीं रखती है, ठीक जानो कि उसकी अवस्था में लड़कपन के सिवा और कुछ नहीं है।

बेगम को पुस्तकों के संग्रह करने का शौक था। बायजीद के हुमायूँ-नामा की नौ प्रतियाँ तैयार की गई थीं जिनमें से दो शाही पुस्तकालय, एक एक प्रति सलीम, मुराद और दानियाल, एक गुलबदन बेगम, दो अबुलफजल और एक ग्रंथकर्त्ता को मिली। सत्तर वर्ष की अवस्था में इनका नाती मुहम्मदयार दरबार से निकाला गया था। जब सलीम ने विद्रोह किया, तब इन्होंने सलीमा के साथ [illegible] के लिये क्षमा माँगी थी। हमीदा बानू बेगम के साथ इन्हें भी शाही भेंट मिली थी।

अस्सी वर्ष की अवस्था में सन् १६३ ई० के फरवरी में कुछ ज्वर आने के अनंतर इनकी मृत्यु हुई। अंत समय तक हमीदा बेगम साथ रही। आँख बंद किए जब वह पड़ी थीं तब हमीदा ने पुकारा "जीउ"। कुछ देर पर आँखें खोलकर बेगम ने कहा कि मैं तो जाती हूँ, तुम जीओ। अकबर ने जनाजः उठाया था और यदि इसके पुत्र आदि नहीं होते तो वह स्वयं सब कृत्य करते।

इस प्रकार एक योग्य, भली और स्नेहमयी स्त्री के जीवन का अंत हो गया। परंतु अपने ग्रंथ के कारण वह अन्य धर्मावलंबी होने और कई शताब्दी बीत जाने पर भी हम लोगों की मित्र और जीवित के समान है।

हुमायूँनामा

दयालु और कृपालु परमेश्वर के नाम के सहित

आज्ञा[1] हुई थी कि जो कुछ वृत्तात फिर्दौस-मकानी (बाबर) और जन्नतआशियानी[2] (हुमायूँ) का ज्ञात हो लिखो। जिस समय फ़िर्दौस-मकानी इस नश्वर ससार से स्वर्ग को गए यह तुच्छ जीव आठ वर्ष की थी और इसीसे थोड़ा वृत्तात याद था। बादशाही आज्ञा के कारण जो कुछ सुना था और याद था लिखा जाता है।

पहले इस ग्रंथ को पवित्र और शुद्ध करने के लिये। सम्राट् पिता का वृत्तात लिखा जाता है, यद्यपि वह उनके आत्मचरित्र[3] में वर्णित है।

---

(१) अकबरनामा ग्रंथ लिखे जाने के समय उसके लिए इतिहास की सामग्री बटोरने को यह आज्ञा हुई होगी। यदि ऐसा हो तब सन् १५८७ ई० (९९५ हि०) के अनंतर यह पुस्तक लिखी गई होगी।

(२) 'स्वर्ग में मकान है जिसका' और 'स्वर्ग में घोंसला है जिसका' अर्थात् स्वर्ग के रहनेवाले। मृत्यु के अनतर इस प्रकार के नाम रखने की प्रथा मुसलमान शाही घरानों में प्रचलित थी। स्त्री और पुरुष दोनों के ही नाम रखे जाते थे। केवल मृत का नाम प्रतिष्ठापूर्वक लिए जाने के लिए ऐसा किया जाता था।

(३) बाबर ने अपना आत्मचरित्र तुर्की भाषा में लिखा था। इसका

साहिब-किरानी[1] के समय फिर्दौस-मकानी के समय तक भूतपूर्व राजाओं में से किसी ने इनके समान परिश्रम न उठाया होगा। बारह[2] वर्ष की अवस्था में ये बादशाह हुए और ५ रमजान सन् ६०६ हि०[3] को अदजान नगर में जो फर्गाना प्रात की राजधानी है खुतबा[4] पढा गया। पूरे ग्यारह वर्ष तक इन्होंने मावरुन्नहर प्रांत मे चगत्ताई, तैमूरी और उज-बेग बादशाहो[5] के साथ इतने युद्ध किए और सकट झेले कि लेखनी की जिह्वा उनके वर्णन में अयोग्य और असमर्थ है। राज्य करने में जितना परिश्रम और कष्ट इन्होंने उठाया था उतना कम मनुष्यों ने उठाया होगा और जितनी वीरता, पुरुषार्थ और धैर्य इन्होंने युद्धों और कष्टो मे दिखलाया था उतना कम बादशाहों के बारे में लिखा गया है। दो बार तलवार के बल से इन्होंने समरकंद विजय किया। पहली बार मेरे पिता बारह वर्ष के थे, दूसरी बार उन्नीस वर्ष के थे और

अनुवाद फारसी में अब्दुर्रहीम खाँ खानखाना ने किया है। लीडन और अर्सकिन ने अंग्रेजी में इसका अनुवाद किया है।

(१) तैमूरलग का नाम जो उसकी मृत्यु के अनंतर रखा गया था।

(२) बाबर का जन्म ६ मुहर्रम ८८८ हि० (१४ फरवरी १४८३) को हुआ था और ८९९ हि० में वह फर्गाने का बादशाह हुआ।

(३) ९०६ हि० में दस वर्ष की अशुद्धि है। ८९९ हि० होना चाहिए।

(४) मसजिदो में वर्तमान बादशाहों का नाम दुआ के समय लिया जाता है जिसे खुतबा कहते हैं।

(५) प्रथम दोनों तो बाबर के संबंधी ही थे, जो चाचा और मामा लगते थे। तीसरा शैबानी खाँ के नाम से इतिहास में प्रसिद्ध है।

तीसरी बार बाईस वर्ष के थे[१]। वे छ महीने घिरे रहे थे[२] और इनके चाचा सुलतान हुसेन मिर्ज़ा बैक़रा ने, जो ख़ुरासान में थे, इनके पास सहायता नहीं भेजी। सुलतान महमूदखां ने भी, जो काशग़र में थे और इनके मामा थे, सहायता नहीं भेजी। जब कहीं से सहायता नहीं पहुंची तब वे निराश हुए[३]।

ऐसे समय में शाहीबेग ख़ाँ[४] ने कहला भेजा कि यदि तुम अपनी बहिन ख़ानज़ादः बेगम[५] के साथ मेरा विवाह कर दो तो हमारे और तुम्हारे

---

(१) बाबर ने तीन बार समरकंद पर अधिकार किया। सन् १४९७ ई० और सन् १५०० ई० में १५ और १७ वर्ष की अवस्था में उसे विजय किया, फिर सन् १५११ ई० में २९ वर्ष की अवस्था में बिना युद्ध ही उस पर अधिकार जमाया। यहाँ जो अवस्था दी है वह ठीक नहीं है।

(२) सन् १५०० ई० मे जब शैबानीख़ाँ ने समरकंद घेरा था।

(३) इस समय अठारह वर्ष की अवस्था हो गई थी।

(४) इसका पूरा नाम अबुलफ़तह मुहम्मद शाहबख़्त ख़ाँ था पर इसके शैबानीख़ाँ और शाहबेग ख़ाँ उजबेग नाम ही इतिहास में अधिक प्रसिद्ध हैं।

(५) ख़ानज़ाद: बेगम—उमर शेख़ मिर्ज़ा और क़ुतलक़-निगार ख़ानम की पुत्री और बाबर की बड़ी सहोदरा बहन थी। इसका जन्म सन् १४७८ ई० में हुआ था। सन् १५०१ ई० में शैबानीख़ाँ से इसका विवाह हुआ जब उसने समरकंद विजय किया और यह विवाह उस संधि का एक नियम बना जिससे बाबर की प्राणरक्षा हुई। इस विवाह से ख़ुर्रमशाह पुत्र हुआ जो युवा अवस्था ही में मर गया। शैबानीख़ाँ ने बेगम को भाई का ही पक्ष लेते देख तिलाक दे दिया और सैयद हादा से विवाह कर दिया, जो सन् १५०१ ई० में मर्व के युद्ध में शैबानीख़ाँ के साथ मारा गया। सन् १५११ ई० में शाह इस्माईल ने इसे बाबर के

मध्य में संधि हो और मित्रता सदा के लिये हो जाय। अंत में आवश्यकता होने से खानजादः बेगम का खाँ से विवाह करके स्वयं बाहर[1] निकले।

साथ में दो सौ पैदल मनुष्य थे जिनके कंधों पर कुरते, पाँवों में जूते और हाथों में लाठियाँ थीं। ऐसी बेसामानी के साथ ईश्वर पर भरोसा कर बादशाह बदख्शाँ प्रांत और काबुल की ओर चले।

कदज और बदख्शाँ प्रांत में खुसरू शाह[2] की सेना और मनुष्य थे। उसने आकर मेरे सम्राट् पिता की अधीनता स्वीकार की। यद्यपि इसने कई बुरे कर्म किए थे, जैसे बायसगर मिर्जा को मार डाला था और सुलतान मसऊद मिर्जा को अंधा कर दिया था जो दोनो मेरे पिता के ममेरे भाई थे और जब आवश्यकता पड़ने से बादशाह चढ़ाइयो के समय उसके प्रांत में होकर जा रहे थे तब उसने पता लगाकर इन्हे अपने देश से कठोरता के साथ बाहर निकाल दिया था, तिसपर भी बादशाह ने, जो वीरता, शौर्य्य और दया से पूर्ण थे, उससे बदला लेने का विचार न करके कहा कि जवाहिर और सोने के बरतनों में से जितनी इच्छा हो लेजाओ[3]। पाँच छ ऊँट और पाँच छ खच्चर बोझ साथ

पास भेज दिया। इसके अनंतर या सन् १५०१ ई० के पहले जब वह तेईस वर्ष की थी इसका विवाह महदी मुहम्मद ख्वाजा के साथ हुआ होगा। महदी के बारे में बाबर ने भी कुछ नहीं लिखा है। गुलबदन ने खानजादः बेगम को बहुधा 'आकः जानम' नाम से लिखा है। यह सन् १५४५ ई० में कबलचाक में बहुत दुख उठा कर मरीं।

(१) समरकंद से सन् १५०१ ई० के जुलाई महीने में।

(२) सुलतान महमूद खाँ का यह मुख्य सर्दार था और जाति का किबचाक तुर्क था। सन् १५०५ ई० में शैबानी खाँ के उजबेगों ने उसे मार डाला।

(३) सन् १५०४ ई० मे बाबर ने इस प्रांत में सेना बटोरी, तब रक्षा पाने का वचन देने पर खुसरू शरण आया था। अर्सकिन लिखते हैं कि उसकी भेंट को बाबर ने ज्यों का त्यों लौटा दिया था।

लेकर वह विदा हुआ और आराम से खुरासान गया। बादशाह काबुल को चले।

उस समय काबुल का अध्यक्ष मुहम्मद मुकीम था जो जुल्लनून अर्गून का पुत्र और नाहीद बेगम[1] का नाना था। उलुग बेग मिर्जा[2] की मृत्यु के उपरात उसने काबुल अब्दुर्रज्जाक मिर्जा से जो बादशाह का चचेरा भाई था छीन लिया था।

बादशाह अच्छी तरह काबुल पहुँच गए। मुहम्मद मुकीम दो तीन दिन दुर्ग में ठहरा रहा और कुछ दिन के अनंतर प्रण और प्रतिज्ञा करके और काबुल बादशाही नौकरों को सौंप कर स्वयं सामान आदि सहित पिता के पास कधार चला गया। यह घटना सन् ९१० हि०[3] के रबीउस्सानी के अत में हुई थी। काबुल के अमीर होने पर बादशाह बगिशा गए और एक बार ही अधिकार करके काबुल लौट आए।

---

(१) नाहीद बेगम–जुल्लनून अर्गून के पुत्र मुहम्मद मुकीम की पुत्री माहचूचक बेगम की, जो बाबर की कैद मे थी और जिसका विवाह उसने अपने धायभाई कासिम से कर दिया था, पुत्री नाहीद बेगम थी। यह मुहिब्ब अली बर्लास की स्त्री थी। यह जिस समय अठारह महीने की थी उसी समय उसकी माता उसे काबुल में छोड़कर छोटे आदमी के साथ जबरदस्ती विवाह कर देने से बुरा मानकर भाग गई। जब इसकी माँ को सिंध में मुहम्मद बाकी तुर्खान ने कैद किया तब वह भागकर भक्कर गई जहाँ सन् ९७५ हि० तक सुलतान महमूद भक्करी की रक्षा में रही, फिर अकबर के दरबार में पहुँची। यह हिंदाल की मजलिस में भी थी।

(२) मिर्जा अबू सैयद का पुत्र था जो सन् १५०२ ई० में मर गया।

(३) अक्तूबर सन् १५०४ ई० में जब तेईस वर्ष की अवस्था थी।

बादशाह की माता खानम[1] को ६ दिन तक ज्वर आता रहा। वे इस नश्वर ससार से अमरलोक चली गई। लोगों ने उन्हें नौरोज बाग में गाडा और बादशाह ने उस बाग के स्वामियो को जो उसके सबधी थे एक सहस्र सिक्का मिसकाली दिया।

इसी समय सुलतान हुसेन मिर्ज़ा के आवश्यक पत्र आए कि हम उजबेगो से युद्ध करने का विचार रखते हैं, यदि तुम भी आओ तो बहुत अच्छा हो। बादशाह ने ईश्वर से अनुमति माँगी। अत में वे उनसे मिलने चले। रास्ते मे उन्हें समाचार मिला मिर्जा मर गए, शाही अमीरों ने प्रार्थना की कि मिर्जा की मृत्यु हो गई इससे यही ठीक है कि अब काबुल लौट चलना चाहिए परतु बादशाह ने कहा कि जब इतनी दूर आ चुके तब शाहजादों के यहाँ शोक मनाने के लिए जाना चाहिए। अत में वे खुरासान को चले।

जब मिर्जाओं[2] ने बादशाह का आना सुना, तब वे सब स्वागत को चले, पर बदीउज्जमाँ मिर्जा को छोड गए, क्योकि सुलतान हुसेन मिर्जा के अमीर बरतूक बेग और जुलनून बेग ने यह कहा कि बादशाह बदीउज्जमाँ से पदरह वर्ष छोटे है इससे यह ठीक है कि बादशाह घुटनो

---

(१) कतलक-निगार खानम—यह यूनास खाँ चगत्ताई और ईसान दौलात् कूची की द्वितीय पुत्री थी और उमर शेख मिर्जा मीरानशाही की मुख्य पत्नी थी, महमूदखाँ और अहमदखाँ की सौतेली बहिन और खानजादः और बाबर की माता थी। युद्ध आदि पर इसने पुत्र का बराबर साथ दिया और उसके काबुल का स्वामी होने के पीछे वह सन् १५०५ ई० के जून में मरी।

(२) बदीउज्जमाँ मिर्जा और मुहम्मद मुज्जर मिर्जा दोनों सुलतान हुसेन मिर्जा के पुत्र थे। ६ नवबर सन् १५०६ ई० को उनसे भेट हुई थी।

बल झुककर मिलें। उस समय कासिम बेग[1] ने कहा कि वे अवस्था में छोटे हैं परंतु तोरः[2] से बड़े हैं क्योंकि कई बार समरकंद तलवार के बल से विजय कर चुके हैं। अत में यह निश्चित हुआ कि एक बार झुककर बादशाह मिलें और बदीउज्जमाँ मिर्जा बादशाह की प्रतिष्ठा के लिये आगे बढ़कर मिलें। इसी समय बादशाह द्वार से भीतर आए, मिर्जा विचार में थे इससे कासिम बेग ने बादशाह के कमरबंद को पकड़कर ठहरा लिया और बरतूक बेग और जुलनून बेग से कहा कि निश्चित हुआ था कि मिर्जा आगे बढ़कर मिलेंगे। मिर्जा बड़ी घबड़ाहट से आगे बढ़कर बादशाह से गले मिले।

जितने दिन बादशाह खुरासान में थे मिर्जाओं ने सत्कार में कोई कमी नहीं की, उन्होने महफिलें कीं और बागों और महलों की सैर करवाई। मिर्जाओं ने जाड़े के दुःखों को बतलाकर कहा कि ठहरिए, जाड़े के अनंतर उजबेगों से युद्ध करेंगे। पर वे युद्ध करना निश्चित नही कर सके। सुलतान हुसेन मिर्जा[3] ने ८० वर्ष तक खुरासान की अच्छी तरह अपने अधिकार मे रखा पर मिर्जा लोग छ मास तक पिता के स्थान की रक्षा न कर सके।

जब बादशाह ने इन लोगो को उन स्थानों की आय और व्यय पर

---

(१) बाबर बादशाह का मंत्री और कूचीं जाति का था जिस जाति की बाबर की नानी ईसान् दौलात् भी थीं।

(२) चगेज खां के बनाए हुए नियमों को तोरः कहते हैं।

(३) सुलतान हुसेन मिर्जा का जन्म सन् १४३८ ई० में और मृत्यु सन् १५०६ ई० में हुई थी। दोनों मिर्जाओं के राज्य की अवनति का मुख्य कारण बाबर ने शेख सादी के एक शैर से बतलाया है जिसका अर्थ है कि एक कंबल पर दस साधु सोते हैं पर एक राज्य में दो राजा नहीं रह सकते।

जिन्हें इनके लिए नियत किया था ध्यान देते नहीं देखा तब उन स्थानों को देखने के बहाने वे काबुल को चल दिए।

उस वर्ष वर्फ बहुत गिरी थी और रास्ते मिट गए थे। बादशाह और कासिम बेग ने उस रास्ते के छोटे होने से वही राह ली। अन्य अमीरों ने दूसरी सम्मति दी। जब वह नहीं मानी गई तब साथ छोड़कर सब चले गए। बादशाह और कासिम बेग ने अपने पुत्रों सहित तीन चार दिन में वर्फ दूर करके रास्ता बना लिया और पीछे पीछे सेना भी निकल आई। इस प्रकार वे गोरबंद पहुँचे जहाँ हजारा के विद्रोहियों के मिलने पर बादशाह से युद्ध हुआ। हजारावालों का बहुत गाय, बकरी और अगणित सामान शाही सैनिकों के हाथ आया। बहुत लूट को लेकर वे काबुल को चले।

जब वे मनार पहाड़ी के नीचे पहुँचे तो सुना कि मिर्जाखाँ[1] और मिर्जा मुहम्मद हुसेन[2] गोरगाँ विद्रोही हो गये है और उन्होंने काबुल को घेर रखा है। बादशाह ने काबुल के लोगों को भरोसा और उत्साह दिलाने के लिए पत्र भेजे कि धैर्य रखो हम भी आगए हैं। बीबी माहरू नामक पर्वत के ऊपर हम आग प्रज्वलित करेंगे और तुम भी कोषागार के ऊपर आग जलाना, जिससे हम जान जाँय कि तुम्हें हमारा आना ज्ञात हो गया है। सबेरे उस ओर से तुम और इस ओर से हम शत्रु पर आक्रमण करेंगे। परंतु दुर्ग वालों के आने के पहले ही बादशाह युद्ध कर के विजय प्राप्त कर चुके थे।

---

(१) सुलतान नवैस (मिर्जाखाँ) बाबर के चाचा महमूद और मौसी सुलतान-निगार खानम का पुत्र था।

(२) तारीखे-रशीदी के ग्रंथकर्त्ता मिर्जा हैदर दोगलात् का पिता और बाबर की मौसी खूबनिगार खानम का पति था।

मिर्ज़ाखाँ अपनी माता के घर में, जो बादशाह की मौसी थीं, छिप रहा। अंत में खानम ने अपने पुत्र को लाकर दोष क्षमा करवाया। मिर्ज़ा मुहम्मद हुसेन अपनी स्त्री[1] के घर में, जो बादशाह की छोटी मौसी थी, प्राण के डर से बिछौने पर जा गिरा और नौकरों से बोला कि बाँध दो। अत मे शाही मनुष्य जानकर मिर्जा मुहम्मद हुसेन को बिछौने से निकालकर बादशाह के आगे लाये। बादशाह ने मौसियों के प्रसन्नतार्थ मिर्जा मुहम्मद हुसेन का दोष क्षमा कर दिया। पहले की चाल पर वे अपने मौसियों के घर प्रति दिन आते जाते थे और अधिकाधिक प्रसन्नता का उपाय करते जिससे मौसियों के हृदय मे दुःख न रहे। समतल देश में उन्होंने उनके लिए स्थान और जागीर ठीक कर दी।

ईश्वर ने जब काबुल को मिर्ज़ाखाँ की अधीनता से छुडाकर इनके अधिकार में रखा उस समय ये तेईस वर्ष[2] के थे और एक भी पुत्र नही था। पुत्र की इच्छा इन्हें बहुत था। सत्रह वर्ष की अवस्था में सुलतान अहमद मिर्जा की पुत्री आयशा सुलतान बेगम[3] को एक

---

(१) खूबनिगार खानम—यह चगत्ताई मुगल यूनासखाँ और ईसान दौलान् कूची की तीसरी पुत्री थी। इसका मुहम्मद हुसेन दोगलात् से विवाह हुआ जिससे हैदर और हर्बाबा दो सतानें हुईं। यह पति से एक वर्ष बडी थी और और १४९३-४ में ब्याही गई थी। बाबर ने १५०१-२ ई० में इसकी मृत्यु का समाचार पाना लिखा है। इसका पति १५०९ में मारा गया।

(२) जिस समय बाबर ने मुहम्मद मुकीम अर्गून से काबुल लिया था उस समय (सन् १५०४ ई० में) वे तेईस वर्ष के थे। इसके दो वर्ष बाद मिर्ज़ाखाँ का विद्रोह हुआ था।

(३) आयशा सुलतान बेगम मीरानशाही—यह सुलतान अहमद मिर्जा और कुतूक बेगम की तीसरी पुत्री थी, बाबर की चचेरी बहिन और

पुत्री[१] हुई थी जो एक महीने की होकर मर गई। ईश्वर ने काबुल लेने को शुभ फल देनेवाला किया कि उसके अनंतर अठारह[२] संतति हुई।

(१) प्रथम—आकम अर्थात् माहम बेगम[३] से हजरत हुमायूँ बादशाह,

प्रथम स्त्री थी। सन् १५०० ई० के मार्च महीने में खोजंद में विवाह हुआ, जब वहाँ खुशरोशाह और अहमद तंबोल में युद्ध हो रहा था। बाबर लिखता है कि उस पर मेरा पहले बहुत प्रेम था पर पीछे से कम हो गया। सन् १५०१ ई० में एक पुत्री फख्रुन्निसा हुई थी। सन् १५०३ ई० में अपनी बड़ी बहिन (स्यात् सलीका जो बाबर के किसी शत्रु को ब्याही थी) के षड्यंत्र के कारण यह बाबर को छोड़कर चली गई। यह और इनकी बहिन सुलतानी बेगम दोनों तिलस्मी महफिल में थी। यद्यपि गुलबदन बेगम ने आयशा (न० ११) के वहाँ होने की बात लिखने पर भी उसके बारे मे कुछ नहीं लिखा है परन्तु उसके अनंतर सुलतानी बेगम (न० १२) के अहमद मिर्जा की पुत्री लिखने से समझ पड़ता है कि वह दोनों के बारे में लिखा गया है।

(१) फख्रुन्निसा बेगम—बाबर ने अपने आत्मचरित्र मे लिखा है कि वह प्रथम संतान थी और जब वह उत्पन्न हुई मैं १९ वर्ष का था।

(२) पर संतानों की सूची में १६ नाम गिनाए हैं।

(३) माहम बेगम—बाबर की प्रिय पत्नी थी। यह ख़ुरासान के अच्छे वंश की थी जिससे सुलतान हुसेन मिर्जा बैकरा का भी कुछ संबंध था। पर अभी तक किसी पुस्तक से उसके माता; पिता या वंश का पूरा और निश्चित वृत्तांत नहीं मिला है। सुलतान हुसेन मिर्जा की मृत्यु पर जब बाबर हिरात गए तब वहीं सन् १५०६ ई० में विवाह हुआ। ६ मार्च १५०८ ई० को हुमायूं का जन्म हुआ। चार संतान और हुई पर सब बचपन मे ही जाती रही।

वारबूल मिर्ज़ा, मेहजहाँ बेगम, एशाँदौलत बेगम और फारूक मिर्जा[१] हुए।

(२) द्वितीय—सुलतान अहमद मिर्जा की पुत्री मासूमा सुलतान बेगम[२] प्रसव के समय ही मर गई। पुत्री[३] का नाम माता के नाम पर रक्खा गया।

(३) तृतीय—गुलरुख बेगम[४] से कामराँ मिर्जा, अस्करी मिर्जा, शाहरुख मिर्जा, सुलतान अहमद मिर्जा और गुलएजार बेगम[५] हुईं।

---

(१) सन् १५२५ ई० में जन्म और सन् १५२७ ई० में मृत्यु। पिता ने इसे नहीं देखा।

(२) मासूमा सुलतान बेगम—अहमद मिर्जा की पाँचवी और सबसे छोटी पुत्री थी। इसकी माता हबीबा सुलतान बेगम अर्गून थी। सन् १५०७ ई० में बाबर से विवाह हुआ। बाबर की प्रथम स्त्री आयशा की सौतेली बहिन थी। यह विवाह बाबर के कथनानुसार प्रेम के कारण हुआ था।

(३) मासूमा सुलतान बेगम—मुहम्मद जमाँ मिर्जा बैकरा से विवाह हुआ था।

(४) गुलरुखबेगम—गुलरुख का मकबरा सन् १५४५ ई० में काबुल के बाहर वर्तमान था। बाबर के आत्मचरित्र में कामराँ का सुलतान अली मिर्जा मामा की पुत्री से और हुमायूँ का यादगार मामा की पुत्री से विवाह होना लिखा है। ये दोनों बेगाचिक अमीर थे। सुलतान अली के जीवन के घटनाश्रोत का मिलान करने से जाना जाता है कि वह गुलरुख बेगम का भाई होगा।

(५) गुलएजार बेगम—गुलबदन बेगम ने इसके विवाह के बारे में कुछ नही लिखा है पर वह यादगार नासिर की स्त्री रही होगी।

(४) चतुर्थ–दिल्दार बेगम[१] को गुलरंग बेगम,[२] गुलचेहरा बेगम[३], हिंदाल मिर्जा, गुलबदन बेगम और आलोर मिर्जा हुए।

(१) दिलदार बेगम—इसके पति बाबर और पुत्री गुलबदन दोनों ही ने इसके माता पिता आदि के बारे में कुछ भी नहीं लिखा है। बाबर के आत्म चरित्र के छुटे हुए अशो में से सन् १५०९ से १५१९ ई० तक का वृत्तांत है जिस बीच गुलरुख बेगम और दिल्दार बेगम दोनों से विवाह हुआ होगा। सन् १५०९ ई० में केवल माहम बेगम बच गई थी और आयशा, जैनब और मासूमा मृत्यु या तिलाक से विदा हो चुकी थी। इससे किसी वंश की होने पर भी दिल्दार बेगम मुसल्मानी शरअ के अनुसार चार विवाहिता स्त्रियों में गिनी जा सकती थी। इसका मीरानशाही होना भी संभव है क्योंकि इसका वर्णन सलीमा सुलतान के वृत्तांत के साथ आया है। सन् १५१९ ई० में इसके पुत्र हिंदाल को माहम का गोद ले लेना इसके छोटे वंश का होना सिद्ध नही करता। माहम मुख्य और प्रिय बेगम होने के साथ ही दुखित भी थी इसी से उसका गोद लेना बलात् नहीं था। इसको पाँच संतान हुईं और गुलबदन बेगम ने अपनी पुस्तक में इसका बहुधा उल्लेख किया है। दूसरे ग्रंथकारों ने भी इसका प्रतिष्ठा के साथ वर्णन किया है। यह बुद्धिमती और समझदार स्त्री थी।

(२) गुलरंग बेगम—इसका सन् १५११ और १५ ई० के बीच खोस्त में जन्म हुआ जब मुगल विद्रोह के अनंतर बाबर काबुल से निकाला गया था। बाबर के ममेरे भाई ईसन तैमूर चगत्ताई से सन् १५३० ई० में इसका विवाह हुआ था। सन् १५४३ ई० के बाद ईसन तैमूर का और १५३४ ई० के बाद गुलरंग का जब वह ग्वालियर में थी कुछ पता नही लगता।

(३) गुल चेहरा बेगम—इसका जन्म सन् १५१५ और १५१७ ई० के बीच में हुआ था। बाबर के ममेरे भाई तोख्ता बोगा सुलतान से इसका विवाह सन् १५३० ई० में हुआ था जब वह १४ वर्ष की थी। सन्१५३३

अर्थात् काबुल लेना शुभ साइत में हुआ था कि सब संतानें काबुल में हुईं, केवल दो बेगमें—माहम बेगम की पुत्री मेहजान[1] बेगम और दिल्दार बेगम की गुलरंग बेगम—खोस्त में हुई थीं।

बादशाह फिर्दौस-मकानी के प्रथम पुत्र हुमायूँ बादशाह का शुभ जन्म ४ जीउल्क़दः सन् ६१३ हि० (६ मार्च १५०८ ई०) मगल-वार की रात्रि को काबुल के दुर्ग मे हुआ था जब सूर्य मीन राशि में था। उसी वर्ष बादशाह फिर्दौसी-मकानी ने अमीरों और प्रजा को आज्ञा दी कि हमें बादशाह कहो क्योंकि हुमायूँ बादशाह के जन्म के पहले वह मिर्जा बाबर के नाम और पदवी से पुकारे जाते थे। सभी बादशाहों के पुत्र को मिर्जा कहते है और हुमायूँ बादशाह के जन्म के वर्ष में उन्होंने अपने को बादशाह कहलवाया। बादशाह जन्नत-आशिआनी के जन्म का वर्ष सुलतान हुमायूँ खाँ[2] और शाह फीरोजकद्र[3] से पाया जाता है।

ई० मे विधवा हुई और फिर सन् १५६६ ई० तक का कुछ हाल नही मालूम हुआ। पर इतने दिनो तक विवाह नहीं होना सभव नहीं जान पडता। सन् १५५६ ई० में अब्बास सुलतान उजबेग से विवाह हुआ था पर हुमायूँ की बलख पर चढ़ाई को सुन वह इसे छोड़कर भाग गया। १५५७ ई० में यह गुलबदन बेगम और हमीदा बानू बेगम के साथ भारत आई।

(१) मूल में मेह जान और मेहजहाँ दोनो नाम दिए हैं।

(२) अबजद से प्रत्येक अक्षर के जोड से वर्ष निकलता है।

६० + ३० + ९ + १ + ५० + ५ + ४० + १ + २० + ६ + ५० + ६०० + १ + ५० = ९१३

(३) ३०० + १ + ५ + ८० + १० + २०० + ६ + ७ + १०० + ४ + २०० = ९१३

संतानोत्पत्ति के अनंतर समाचार आया कि शाहीबेग खां को शाह इस्माइल ने मार डाला[1]।

बादशाह काबुल को नासिर मिर्ज़ा[2] के हाथ सौंप अपने मनुष्यों, स्त्री और सतानों को जिनमें हुमायूँ बादशाह, मेहरजहाँ बेगम, बारबोल मिर्ज़ा, मासूमा सुलतान बेगम और मिर्ज़ा कामराँ थे साथ लेकर समरकद को चले[3]। शाह इस्माइल की सहायता से उन्होंने समरकद विजय किया और आठ महीने तक कुल मावरुन्नहर अधिकार मे रहा। भाइयों की शत्रुता और मुगलों की दुश्मनी से कोलमलिक में उबेदुल्ला खाँ[4] से ये परास्त हुए और उस प्रात में ठहर न सके। तब बदख्शाँ और काबुल को चले और मावरुन्नहर का विचार मन से निकाल दिया। सन् ६१० हि० (१५०४ ई०) में काबुल पर अधिकार हो चुका था।

हिंदुस्तान जाने की इच्छा इनकी सदा से थी पर अमीरों की सम्मति की ढिलाई और भाइयों के साथ न देने से यह पूरी नही हुई थी। जब भाई लोग अत मे चल बसे[5] और कोई अमीर नहीं रहा जो इनकी इच्छा

(१) २ दिसबर सन् १५१० ई० को मर्व के युद्ध में यह मारा गया था। इस भयानक शत्रु के मारे जाने पर बाबर ने एक बार फिर पैतृक राज्य की विजय का प्रयत्न किया परंतु उजबेगो ने उसे सफल नहीं होने दिया। इसी के अनंतर उसने भारतविजय का विचार दृढ़ किया।

(२) बाबर का सौतेला भाई जो उम्मेद अदजानी का पुत्र था।

(३) जनवरी १५११ (शव्वाल ९१६ हि०)

(४) उबेदुल्लाखाँ शैबानी खाँ का भतीजा था। कोलमलिक बुखारा प्रांत में है और कोल का अर्थ झील है। इसी वर्ष उजबेगो ने बाबर को दूसरी बार फिर से पराजित किया था (१५११ ई०)।

(५) सन् १५०७ ई० मे जहाँगीर मिर्ज़ा और सन् १५१५ ई० में नासिर मिर्ज़ा की मदिरापान के कारण मृत्यु हो गई।

के विरुद्ध बोल सके तब सन् ६२५ हि०(१५१६ ई०) में इन्होंने बिजौर[१] को दो तीन घड़ी में युद्ध कर ले लिया और वहाँ के सब रहनेवालों को मरवा डाला।

उसी दिन अफगान आगाचः[२] के पिता मलिक मसूर युसुफजयी ने आकर बादशाह की अधीनता स्वीकार की बादशाह ने उसकी पुत्री को लेकर उससे स्वयं विवाह कर लिया और मलिक मंसूर को बिदा किया। उसे घोडा और राजा के योग्य खिलअत दिया और कहा कि जाकर प्रजा आदिको लाकर अपने ग्रामो में बसाओ।

---

(१) भारत पर आक्रमण करने को जाते समय यह घटना रास्ते में हुई थी। यहाँ के रहनेवाले मुसलमान नहीं थे।

(२) बीबी मुबारिका—बाबर के साथ इसका विवाह ३० जनवरी सन् १५१९ ई० को हुआ था और यह विवाह उसकी जाति और बाबर के बीच संधि स्थापन के लिये हुआ था। इसका और इसके विवाह का अच्छा वर्णन 'तारीखे खानजहाँ लोदी खानी' नामक पुस्तक में दिया है जिसका अनुवाद मि० ब्लौकमैन ने 'ऐन अफगान लीजेंड' के नाम से किया है। गुलबदन बेगम ने सर्वत्र इसे अफगान आगाचः के नाम से लिखा है। हाफिज मुहम्मद लिखता है कि बाबर का इस पर बहुत प्रेम था और सन् १५२९ ई० मे माहम बेगम और गुलबदन बेगम के साथ यह भी अन्य बेगमो से पहले ही भारत आई थी। यह निस्संतान थी और हाफिज मुहम्मद कहता है कि दूसरी बेगमो ने गर्भ नहीं रहने के लिये इसे दवा खिला दी थी। यह अकबर के राजत्व काल में मरी। इसका एक भाई मीर जमाल बाबर के साथ भारत आया और हुमायूँ तथा अकबर के समय में अच्छे पद पर रहा। हिंदाल का भी एक प्रिय अफसर इसी नाम का था जो उसकी मृत्यु पर अकबर की सेवा में चला आया। यह वही यूसुफजई हो सकता है।

कासिम बेग ने जो काबुल मे था प्रार्थनापत्र भेजा कि एक शाहजादा और पैदा हुआ है और मै धृष्टता से लिखता हूँ कि यह भारत-विजय और अधिकार का शुभ शकुन है, आगे बादशाह मालिक है जैसी प्रसन्नता हो। बादशाह ने साइत से मिर्जा हिंदाल[१] नाम रखा।

बिजौर-विजय के अनन्तर वे भीरः को चले जहाँ पहुँचने पर उन्होंने लूटपाट नहीं किया और चार लाख शाहरुखी[२] लेकर संधि कर ली और उसे अपने सैनिकों मे नौकरों की गिनती के अनुसार बाँटकर वे काबुल चले[३]।

इसी समय बदख्शाँ के मनुष्यों का पत्र आया कि मिर्जाखाँ मर गए और मिर्जा सुलेमान की अवस्था छोटी है तथा उजबेग पास हैं। इस देश पर भी ध्यान रखिए कि कहीं बदख्शाँ भी हाथ से न निकल जाय। जब तक बदख्शाँ का कुछ प्रबंध हो तब तक मिर्जा सुलेमान की माता[४] मिर्जा

---

(१) इनका नाम अबुन्नासिर मिर्जा था पर हिंद के आधार पर हिंदाल नाम से ही यह अधिक प्रसिद्ध हुआ। यह गुलबदन बेगम का सहोदर भाई और माहम बेगम का पोष्यपुत्र था।

(२) आर्सकिन ने २०००० पाउंड के बराबर माना है जिससे एक शाहरुखी इस समय बारह आने की हुई।

(३) सन् १५१९ ई० की फरवरी के अंत मे।

(४) सुलतान-निगार खानम-यूनसखाँ चगत्ताई और शाह बेगम बदख्शी की पुत्री थी। सुलतान महमूद मिर्जा मीरानशाही से इसका विवाह हुआ जिससे सुलतान वैस मिर्जाखाँ पुत्र हुआ। सन् १४९५ ई० में यह विधवा हुई। तब बाबर से बिना कहे ताशकंद मे भाइयों के यहाँ चली गई। आदिक सुलतान जूजी ने जो उजबेग कज्जाकों का सर्दार था उससे विवाह किया। इसके भाई महमूद खाँ के शैबानीखाँ के हाथ मारे जाने पर आदिक के साथ मुगलिस्तान गई। आदिक से दो पुत्री हुईं जिसमे

को ले कर आ पहुँची। बादशाह ने उनकी इच्छा और प्रसन्नता के अनुसार उसे पिता के पद और जागीर पर नियुक्त किया और बदख्शाँ हुमायूँ बादशाह को सौप दिया। हुमायूँ बादशाह उस प्रात को चले गए।

बादशाह और आकम भी पीछे ही बदख्शाँ को गए और कुछ दिन वही एक साथ रहे। हुमायूँ वही रह गए और बादशाह और आकम काबुल लौट आए[1]।

कुछ समय के अनंतर वे किलात और कंधार गए। किलात पहुँच उसे विजय करते हुए कधार गए। कंधार[2] वाले डेढ़ वर्ष तक दुर्ग में रहे जिसके उपरात बहुत युद्ध पर वह ईश्वरीय कृपा से विजय हुआ। बहुत धन हाथ आया और सैनिकों और नौकरों को धन और ऊँट बाँटे गए। कंधार मिर्जा कामराँ को देकर वे स्वयं काबुल चले आए।

पेशखानः आगे जाने पर १ सफर सन् ९३२ हि० (१७ नवबर सन् १५२५ ई०) शुक्रवार को जब सूर्य धन राशि में था वे यकलंगः पर्वत

एक का विवाह अब्दुल्ला कूचीं से हुआ जो जवानी में मर गई और दूसरी का रशीद सुलतान चगत्ताई से हुआ। आविक की मृत्यु पर उसके छोटे भाई कासिम ने उससे सगाई कर ली। कासिम की मृत्यु पर इसका सौतेला पुत्र ताहिर सर्दार हुआ जो इसे माँ से बढ़कर मानता था, तिसपर भी वह वहाँ से अपने भतीजे सुलतान सैयदखाँ के यहाँ आकर रही। सन् १५२८ ई० में इसकी मृत्यु हुई।

(१) उस समय हुमायूँ की अवस्था तेरह वर्ष की थी जिस कारण स्वयं बाबर वहाँ गया और प्रबध आदि ठीक कर लौट आया।

(२) यह शाह बेग अर्गून के अधिकार में था जिसके पुत्र शाह हुसेन ने सिध में हुमायूँ से बड़ी शत्रुता की थी। इस घेरे में कितने दिन लगे थे इसमें मतभेद है और बाबर के आत्मचरित्र के छुटे हुए स्थानों में यह घटना पड़ गई है।

पार कर डीहे-याकूब की घाटी में उतरे। वहीं ठहरे और दूसरे दिन हिंदुस्तान की ओर कूच करते हुए चले।

सन् ६२५ हि०[१] (१५१६ ई०) से सात आठ वर्ष तक कई बार सेना हिंदुस्तान की ओर भेजी गई थी और हर बार देश और परगने अधिकृत किए गए, जैसे भीरः, बजोर, स्यालकोट, दिपालपुर, लाहौर आदि। यहाँ तक कि १ सफर सन् ६३२ हि० शुक्रवार को वे डीहे-याकूब के पडाव पर से कूच करते हिंदुस्तान की ओर चले और उन्होंने लाहौर, सरहिंद और हर एक प्रांत जो रास्ते मे था विजय किया। ८ रजब सन् ६३२ हि० शुक्रवार को (२० अप्रैल सन् १६२६ ई०) पानीपत[२] मे वह (बाबर) सुलतान सिकंदर लोदी के पुत्र तथा बहलोल लोदी के पौत्र सुलतान इब्राहीम से युद्ध करके ईश्वरी कृपा से विजयी हुए। इस युद्ध में सुलतान इब्राहीम मारा गया और यह विजय केवल ईश्वर की कृपा से हुई थी क्योंकि सुलतान इब्राहीम के पास एक लाख अस्सी हजार सवार और डेढ हजार मस्त हाथी थे। बादशाही सेना व्यापारी, भले और बुरे सहित बारह सहस्र थी और काम के योग्य केवल छः सात हजार सैनिक थे।

पाँच बादशाहों का कोष हाथ आया और सब बाँट दिया गया[३]। उसी समय हिंदुस्तान के अमीरों ने प्रार्थना की कि हिंदुस्तान मे पहिले के बादशाहों के कोष को व्यय करना दोष मानते हैं और उसे बढाकर सचित करते है जिसके विरुद्ध आपने कुल कोष बाँट दिया।

---

(१) मूल में ९३५ है पर वह लेखक की भूल है।

(२) पानीपत का प्रथम युद्ध।

(३) मई महीने की ११ या १२ को बाँटा गया और अपने लिए कुछ नहीं रखने के कारण बाबर कलंदर अर्थात् साधू कहलाया।

ख्वाजा कलाँ बेग[1] ने कई बार काबुल जाने को छुट्टी माँगी कि मेरा स्वभाव भारत के जल-वायु के अनुकूल नहीं है, यदि छुट्टी हो तो कुछ दिन काबुल में रहूँ। बादशाह इन्हें जाने देना नहीं चाहते थे पर जब देखा कि ख्वाजा बहुत हठ करते है तब छुट्टी दे दी और कहा कि जब जाओ तब सुलतान इब्राहीम पर विजय के कारण मिली हुई भारत की भेंट को जिसे हम बड़ो, बहिनों और हरमवालियों के लिये भेजेंगे लेते जाओ। सूची हम लिखकर देंगे जिसके अनुसार बाँटना। यह भी कह देना कि बाग और दीवानखाने मे हर एक बेगम अलग अलग[2] पर्दे वाला तंबू तनवावें और उनमें वे इकट्ठी होकर पूर्ण विजय के लिये ईश्वर की प्रार्थना करें।

हर एक बेगम के लिये यह सूची है। सुलतान इब्राहीम की वेश्याओं मे से एक वेश्या, एक सोने की रिकाबी जिसमें रत्न, माणिक, मोती, गोमेदक, हीरा, पन्ना, पीरोजा, पुखराज और लहसुनिया आदि भरे हों, अशरफियों से भरी दो सीप की थालियाँ, दो थाल शाहरुखी और हर प्रकार की नौ नौ वस्तुएँ हर एक को मिले; अर्थात् चार थाली और एक रिकाबी। एक वेश्या, एक रत्नभरी रिकाबी और अशरफी और शाहरुखी की एक थाली ले जाओ और जैसी आज्ञा दे चुके हैं उसके अनुसार वही रत्नभरी रिकाबी और वही वेश्या जिसे हमने अपने बड़ों के लिये भेजा है लेजाकर भेंट करना। दूसरी भेंट जो कुछ भेजी है वह पीछे देना। बहिनों,

---

(१) बाबर का स्वामिभक्त सेवक और मित्र था। मौलाना मुहम्मद सदरुद्दीन के सात पुत्रों में से एक था जिन सब ने बाबर की सेवा में जीवन व्यतीत किया।

(२) एकही खेमे में कैंप की चाल पर जलसा करने की नही आज्ञा थी। प्रत्येक बेगम ने अलग अलग अपनी अपनी सेविकाओं के साथ एक एक कनातदार खेमे में जलसा किया जिससे तैयारी और शोभा बहुत बढ़ गई।

संतानों, हरमों, नातेदारों, बेगमों, आगों,[१] धायों, धाय-भाइयों, स्त्रियों और सब प्रार्थना करनेवालों को जड़ाऊ गहने, अशरफी, शाहरुखी और कपड़े अलग अलग देना जिसका विवरण सूची में दिया है। बाग और दीवानखाने में तीन दिन बड़ी प्रसन्नता से बीत गए। सब धन से उन्मत्त हुए और बादशाह की भलाई और ऐश्वर्य के लिये फातिहा[२] पढ़ कर प्रसन्नता से ईश्वर की प्रार्थना[३] की।

अमूए असस के लिये ख्वाजा कलाँ बेग के हाथ एक बड़ी अशरफी भेजी जिसका तौल तीन सेर बादशाही और पंद्रह सेर हिंदुस्तानी था। ख्वाजा से कह दिया था कि यदि तुमसे असस पूछे कि मेरे लिये क्या भेजा है तब कहना कि एक अशरफी और सचमुच एक ही थी भी। वह आश्चर्य कर तीन दिन तक घबड़ाता रहा। आज्ञा दी थी कि अशरफी में छेद कर के और उसकी आँखे बाँधकर उसके गले में डाल देना और महल में भेज देना। जब अशरफी में छेदकर के उसके गर्दन में डाल दिया तब उसके बोझ से उसे घबड़ाहट और प्रसन्नता हुई और वह दोनों हाथ से अशरफी को पकड़ कर कहता फिरता था कि कोई मेरी अशरफी न ले। हर एक बेगम ने भी दस या बारह अशरफियाँ दीं जिससे सत्तर अस्सी अशरफियाँ उसके पास हो गईं।

ख्वाजा कलाँ बेग के काबुल जाने के अनंतर आगरे में हुमायूँ बादशाह, मिर्जाओं, सुलतानों और अमीरों को कोष से भेंट दी गई। हर ओर प्रांतों में विज्ञापन दिया कि जो कोई हमारी नौकरी करेगा उस पर पूरी कृपा होगी, मुख्य करके उन पर जिन्होंने हमारे पिता, दादा और पूर्वजों

---

(१) आगा का स्त्रीलिंग आगः है जो शाही महल में काम करती है।

(२) कुरान के प्रथम परिच्छेद को फातिहा कहते हैं।

(३) सिजदः कुरान के एक परिच्छेद का नाम है जिसके पढ़ने में सिर झुकाकर भूमि से लगाना पड़ता है।

की सेवा की हो। यदि वे आवें तो योग्यता के अनुसार पुरस्कार पावेंगे। साहिबकिराँ और चगेजखाँ के वंशधर हमारे यहाँ आवेंगे तब ईश्वर ने जो हिंदुस्तान हमे दिया है उस राज्य को हमारे साथ उपभोग करेंगे।

अबू सईद मिर्जा की पुत्रियों मे से सात[१] बेगमें आई थीं—गौहर-शाद बेगम, फखेजहाँ बेगम,[२] खदीज: सुलतान बेगम,[३] बदीउज्जमाल बेगम[४], आक बेगम[५] और सुलतान बख्त। बादशाह के मामा सुलतान महमूदखाँ की पुत्री जैनब सुलतान खानम[६] और छोटे मामा इलाचाखाँ

---

(१) नाम केवल छ का दिया है।

(२) फखजहाँ बेगम—मीर अलाउल्मुल्क तर्मिजी की स्त्री और शाह बेगम और कीचक बेगम की माता थी। सन् १५६६ ई० में भारत आई और दो वर्ष रही। बाबर से छुट्टी ले २० सितंबर सन् १५२८ ई० को काबुल रवानः हुई। फिर आगरे आई और तिलस्मी महफिल में रहीं।

(३) खदीजः सुलतान बेगम—पति का नाम नहीं मालूम हुआ। इसने अपनी बहिन फखजहाँ के साथ काबुल जाने के लिए छुट्टी ली पर कई कारणो से नही जा सकी। तिलस्मी महफिल में थी और यदि यह काबुल गई तो कब गई सो ज्ञात नहीं।

(४) बदीउज्जमाल बेगम—बाबर की दोनों पुत्रियों के विवाह और तिलस्मी महफिल में थी।

(५) आक बेगम—खदीजा और अबू सईद की पुत्री थी। यह भी बाबर की दोनों पुत्रियों के विवाह और तिलस्मी महफिल में थी।

(६) जैनब सुलतान खानम चगत्ताई मुगल—अपने चचेरे भाई सुलतान सैयदखाँ काशगरी की प्रिय स्त्री थी। शाह मुहम्मद सुलतान की चाची थी जिसे मुहम्मदी बर्लास ने मार डाला था। इब्राहीम की मां थी जिसका जन्म सन् १५२४ ई० में हुआ था और यह सैयदखाँ का

की पुत्री मुहिब्ब सुलतान[१] खानम (भी आई)। अर्थात् ६६ बेगमें और खानम थीं जिन सबके लिये जगह, जागीर और पुरस्कार नियत हुए थे।

चार वर्ष तक जब ये आगरे मे थे हर शुक्रवार को अपनी बूआओं से मिलने जाते थे। एक दिन हवा गर्म थी इससे बेगम साहिबा ने कहा कि हवा गर्म है यदि एक शुक्रवार को नही जाएँगे तो क्या होगा? बेगमे इससे दुखित नही होंगी। बादशाह ने कहा कि माहम यह तुम्हारा कहना आश्चर्यजनक है। अबू सईद मिर्जा की पुत्रयाँ पिता और भाइयों से अलग होकर (भारत आई है) यदि हम उन्हे प्रसन्न नही रखेंगे तब कैसा होगा?

ख्वाजा कासिम राज को आज्ञा दी कि एक अच्छा कार्य्य तुम्हे बतलाते है जो यह है कि यदि हमारी बूआएँ कोई काम अपने महल मे बनवाना चाहे तब काम बडा होने पर भी उसे मन लगाकर झट तैयार कर देना।

आगरे मे नदी के उस पार कई इमारतें बनने की आज्ञा दी। हरम और बाग के बीच मे अपने एकात स्थान के लिये एक पत्थर का महल बनवाया और दीवानखाने में भी एक प्रस्तरनिर्मित महल बनवाया। बीच के गृह मे एक बावली और चारो बुर्जो में चार कमरे

तीसरा पुत्र था। इसे मुहसिन और मुहम्मद यूसुफ दो पुत्र और हुए। सन् १५३३ ई० के जुलाई मे पति की मृत्यु पर इसके सौतेले पुत्र रशीद ने इसे निकाल दिया और और यह पुत्री सहित काबुल में आकर हैदर मिर्जा से मिली और कामराँ की रक्षा मे रहने लगी। तिलस्मी महफिल (१५३१ ई०) में गुलबदन बेगम ने इसका नाम लिखा है पर वह ठीक नही है। विवाह वाले दूसरे जलसे (१५२७ ई०) में रही होगी।

(१) तारीखे-रशीदी के ग्रंथकर्ता मिर्जा हैदर दोगलात् की स्त्री थी।

थे। नदी के किनारे पर चौखंडी[१] बनवाई थी। धौलपुर में पत्थर के एक टुकड़े मे चौखूटी बावली दस गज लबी चौडी बनने की आज्ञा दी थी और कहा था कि जब बावली तैयार हो जायगी तब शराब से भरूँगा। पर राणा साँगा के साथ युद्ध होने के पहले शराब नहीं पीने का प्रण किया था इससे नीबू के शरबत से उसे भरवाया।

सुलतान इब्राहीम पर विजय पाने के एक वर्ष बाद राणा हिंदू (माडू) के रास्ते से अगणित सेना सहित तैयार आया[२]। सर्दार, राजे और राना जिन्होंने आकर बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ली थी सब विद्रोही होकर राणा के पास चले गए। यहाँ तक कि कोल जलाली, संभल और रापरी आदि सब पर्गने, राय, राजे और अफगान सब विद्रोही हो गए। दो लाख सवार के लगभग इकट्ठे हो गए।

उसी समय मुहम्मद शरीफ ज्योतिषी ने सैनिकों से कहा कि ठीक यही है कि बादशाह युद्ध न करें क्योंकि अष्ट तारा[३] सामने है। बादशाही

---

(१) चार खंड का मकान जिसके ऊपर के तीनों खड चारों ओर खुलते खभों पर रहते है और हर एक खंड चौकोर और नीचे वाले से छोटा होता है।

(२) यह युद्ध १६ मार्च सन् १५२७ ई० को सीकरी की पहाड़ी के पास कन्हवा में हुआ था। गुजरात विजय के अनंतर इसी स्थान पर अकबर ने फतहपुर सीकरी नामक नगर बसाया था।

(३) मूल का शुक्र तारा अशुद्ध है और मिस्टर बेवरिज उस शब्द को सकिज यलदोज अर्थात् अष्ट तारा पढ़ते हैं जिसे फारसवाले अशुभ मानते हैं। बाबर लिखता है कि कर्दजिन के युद्ध में (१५०१ ई०) जो शैबानी के साथ हुआ था अष्ट तारा दोनों सेना के बीच में था। उसी का कथन है कि कन्हवा युद्ध में शरीफ ने सूचना दी थी कि मंगल पश्चिम में है और जो पूर्व से आवेगा वह पराजित होगा। गुलबदन बेगम ने इन्हीं दोनों युद्धों के सूचक ताराओं में गड़बड़ कर दिया है।

सेना में बड़ी घबड़ाहट पड़ गई, सैनिकगण बड़े सोच विचार में पड़ गए और युद्ध से विमुख होने लगे[१]। जब सैनिकों का यह हाल देखा तब इस पर पूर्ण रूप से विचार किया। जब शत्रु भी पास पहुँच गए तब उन्होंने यह उपाय निश्चय किया। अर्थात् उन्होंने भगैलों और विद्रोहियों को छोड़-कर बचे हुए अमीरों, सुलतानों, खानों, बड़े और छोटे सब को एकत्र होने की आज्ञा दी। जब सब इकट्ठे हो गए तब कहा कि कुछ जानते हो कि हमारे और हमारी जन्मभूमि और देश के मध्य में कई महीने की राह है। ईश्वर उस दिन से बचावे और उसे न लावे क्योंकि यदि सैनिक गण परास्त हो जायँ तो हम कहाँ और हमारी जन्म भूमि और देश कहाँ? काम अजनबियों और परायों से पड़ा है। बस सबसे अच्छा यही है कि अपने लिये ये दो बातें ठीक कर लेनी चाहिएँ कि यदि शत्रु को परास्त किया तो गाजी[२] हुए और मारे गए तो शहीद हुए। दोनों प्रकार से अपनी मुक्ति है और पदवी बड़ी और बढ़कर है[४]।

---

(१) युद्ध में विजय पाने पर बाबर ने शरीफ को खूब फटकारा और कुछ देकर उसको अपने घर लौटा दिया। सन् १५१९ ई० में वह खोस्त (माहम का देश) से काबुल आया था और वहाँ से किसी बादशाही संबंधी के साथ भारत आया था।

(२) गाजी उन्हे कहते हैं जो दूसरे मतावालो को मारते है।

(३) शहीद वे हैं जो स्वधर्म के लिये मारे जाते हैं।

(४) मिस्टर अर्सकिन बाबर के शब्द यों लिखते हैं। 'हर एक मनुष्य मरता है, केवल परमेश्वर अमर है। जीवन रूपी मजलिस में जो आता है उसे बिदा होते समय मृत्यु रूपी प्याला पीना पड़ता है। प्रतिष्ठा के साथ मृत्यु मानहीन जीवन से अच्छी है।'

गुलबदन बेगम के लिखने के अनुसार बाबर ने अवश्य ही देश और गृह कि बातें भी चलाई होंगी जिसका लिखना स्त्री के ही उपयुक्त है।

सब ने एक मत हो मान लिया। स्त्री के तिलाक और कुरान की शपथ खाई, फातिहा पढ़ा और कहा कि बादशाह, ईश्वर के इच्छानुसार जब तक प्राण और शरीर में साँस रहेगा तब तक बलिदान चढ़ने और स्वामि भक्ति में कमी नहीं करेंगे।

राणा साँगा से युद्ध के दो दिन पहले ही बादशाह ने मदिरापान नहीं करने की शपथ खाई यहाँ तक कि कुल मना की हुई वस्तुओं की शपथ कर ली। चार सौ नाली युवकों ने जो वीरता, एकता और मित्रता का दावा रखते थे उस सभा में बादशाह के अनुरूप ही शपथ खाई। कुल धर्मविरुद्ध बरतन, सोने और चांदी के कटोरे, सुराही इत्यादि को तुड़वाकर दरिद्रों और भिखमंगों को बाट दिया गया।

हर ओर प्रातों में विज्ञापन-पत्र भेजे कि चुगी, अन्न पर के कर इत्यादि को कुल क्षमा कर दिया जिसमे कोई व्यापारियों आदि के आने जाने में रुकावट न डाले और बेखटके और बेरुकावट आवे जायें।

जिस दिन राणा साँगा से युद्ध होने को था उसी रात[१] को कासिम हुसेन सुलतान के, जो सुलतान हुसेन का नाती अर्थात् उसकी पुत्री आयशा सुलतान बेगम का पुत्र था, आने का समाचार आया कि वह खुरासान से आकर दस कोस पर पहुच गया है। बादशाह यह समाचार सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और पूछा कि कितने मनुष्य साथ हैं? जब ज्ञात हुआ कि तीस चालीस सवार हैं तब एक सहस्त्र शस्त्रधारी और सुसज्जित सवारों को आधी रात के समय भेजा कि उसी रात्रि को साथ मिलकर आवे जिससे शत्रु तथा दूसरे समझें कि सहायता समय पर आ पहुँची। जिसने यह राय और उपाय सुना बड़ा प्रसन्न हुआ।

---

(१) बाबर लिखता है कि कासिम हुसेन इसके पहले ही आया था और उसके साथ ५०० मनुष्य थे। मुहम्मद शरीफ भी इसीके साथ आया था। (आत्म० ३५२)

उसीके सवेरे सन् ९३३ हि० के जमादिउलअव्वल[1] महीने में सीकरी पहाड़ के नीचे जिसपर कुछ दिन के अनंतर फतहपुर बसा राणा साँगा से युद्ध हुआ जिसमें ईश्वरी कृपा से उन्होंने विजय पाई और वे गाज़ी[2] हुए।

राणा साँगा पर विजय के एक वर्ष बाद आकाम माहम बेगम काबुल से हिंदुस्तान आई और यह तुच्छ जीव भी उन्हीके साथ अपनी बहिनों के आगे ही आकर अपने पिता से मिला। जब आकाम कोल में पहुँची तब बादशाह ने दो पालकी तीन सवारों के साथ भेजी। वह शीघ्रता के साथ कोल से आगरे पहुँचीं और बादशाह का विचार था कि कोल जलाली तक स्वागत को जावें। सध्या की निमाज के समय एक मनुष्य ने आकर कहा कि बेगम साहब को दो कोस पर छोड़ा है। बादशाह घोड़े के तैयार होने तक नहीं ठहर सके और पैदल ही चल दिए। माहम के ननचः के पेश-खाने के आगे मिले और माहम ने चाहा कि पैदल होवे पर बादशाह नहीं ठहरे और स्वयं आकाम के साथवालों के संग पैदल ही अपने महल तक आए।

जिस समय आकाम बादशाह के पास जा रही थी मुझे आज्ञा दी कि दिन को बादशाह से मिलना।

······नौ[3] सवार, अठारह घोड़े, दो खाली पालकी जिन्हें बादशाह

---

(१) १३ जमादिउल अव्वल सन् ९३३ हि० = १६ मार्च सन् १५२७ ई०।

(२) इस विजय पर पहले पहल बाबर ने यह पदवी धारण की थी क्योंकि इस बार शत्रु मुसलमान नहीं थे।

(३) तौकूज का अर्थ नौ है। तुर्की प्रजा बादशाहों को नौ वस्तु भेंट देना शुभ समझती है।

ने भेजा था और एक पालकी जो काबुल से साथ आई थी—आकाम की सौ मुगलानी दासियाँ अच्छे घोड़ों पर सवार अच्छी प्रकार सजी हुई[१]।

मेरे पिता के खलीफा[२] अपनी स्त्री सुलतानम के साथ नौग्राम[३] तक स्वागत को आए। मैं पालकी में थी जब मेरे मामों ने मुझको एक बगीचे में उतारा और एक छोटी दरी बिछाकर उस पर बैठाया। मुझे सिखलाया कि जब खलीफा आवें तब तुम खड़ी होकर उनसे मिलना। जब वह आए मैं खड़ी होकर मिली। उसी समय उनकी स्त्री सुलतानम भी आई। मैंने नहीं जानकर चाहा कि उठूँ पर खलीफा ने यह बात कही कि यह तुम्हारी पुरानी दासी है इसके लिये खड़े होने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे पिता ने इस पुराने दास की प्रतिष्ठा बढाई कि उसके लिये ऐसी आज्ञा[४] दी है, वही बहुत है, दासों का क्या अधिकार है?

खलीफा की भेंट से मैंने पाँच सहस्र शाहरुखी और पाँच घोड़े लिए और उनकी स्त्री सुलतानम ने तीन सहस्र शाहरुखी और तीन घोड़े भेंट देकर कहा कि जलपान तैयार है यदि ग्रहण करिए तो दासों की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। मैंने मान लिया। अच्छे स्थान पर बडी और ऊँची जगह बनाकर उसपर लाल रंग का बिछौना बिछाया गया था जिसके बीच में गुजराती जरबफ्त लगा था। कपड़े और जरबफ्त के छ शामिआने लगे थे जो

---

(१) यह माहम बेगम के साथवालों का वर्णन है पर बेजोड़ होने से समझ पड़ता है कि दूसरी पुस्तक से उतारने में कुछ गड़बड़ हो गया है।

(२) ख्वाजा निजामुद्दीन अली बर्लास जो बाबर के वजीर भी थे। इन्हींके भाई जूनेद बर्लास की स्त्री शहरबानू बाबर की सौतेली बहिन थी।

(३) जमुना के पूर्व आगरे से दो कोस पर है। उस समय तक शाही महल पश्चिम ओर नहीं बन चुके थे (राजपुताना गजेटियर ३-२७४)

(४) खड़ी होकर भेंट करने की।

प्रत्येक एक एक रंग के थे और चारों ओर बराबर कनात तनी थी जिसके सब डंडे रंगीन थे। मै खलीफा के स्थान पर बैठी। भोजन में पचास भेड़ें भुनी हुई, रोटी, शरबत और बहुत मेवे थे। अंत में खा चुकने पर मैं पालकी पर चढ़कर अपने पिता बादशाह से जाकर मिली और पाँव पर गिर पड़ी। बादशाह ने बहुत कुछ पूछ ताछ की और कुछ देर तक पास बिठाया जिससे इस तुच्छ जीव को इतनी प्रसन्नता हुई कि उससे बढ़कर प्रसन्नता न होगी।

आगरे पहुँचने के अनतर तीन महीने बीत चुके थे जब कि बादशाह धौलपुर गए और माहम बेगम तथा मै धौलपुर की सैर को साथ गई। धौलपुर में एक बावली एक पत्थर के टुकड़े मे दस गज लबी और चौड़ी बनवाई थी। वहाँ से सीकरी गए जहाँ तालाब के बीच में ऊँचा स्थान बनने की आज्ञा दी। जिस समय वह बन गया नाव पर बैठकर वहाँ जाते, सैर करते और बैठते थे। यह अबतक वर्तमान है। सीकरी में एक बाग में चौखडी बनवाई थी जिसमे तौरखाना[1] बनवा कर उसमें वे बैठते और कुरान[2] लिखते थे।

मै और अफगानी आगाचा आगे पीछे बैठी हुई थी कि बेगम साहबः निमाज पढ़ने को चली गई। मैने अफगानी आगाचा से कहा कि मेरा हाथ खींचो। उसने खीचा और मेरा हाथ उखड़ गया और मैं पीडा से रोने लगी। अत में नस बैठानेवाले को लाकर मेरा हाथ बँधवाया और आगरे चले।

आगरे में पहुँचे थे कि समाचार आया कि बेगमे काबुल से आ रही है। आकः जानम जो मेरी बडी बूआ और पिता की बड़ी बहिन थीं

(१) तौर का अर्थ, तुर्की भाषा में जाली और मछली फँसाने का जाल है। तौरखान.—जालीदार घर या मसहरी।

(२) मुसहिफ कुरान को कहते है। मिसेज बेवरिज ने तुज़ुके-बाबरी भूल से लिख दिया है।

उनके स्वागत के लिये बादशाह नौग्राम तक गए। आकः जानम के साथ की कुल बेगमों ने उन्हीं के स्थान पर बादशाह से भेंट की। यहीं प्रसन्नता मनाई, धन्यवाद देने के लिये प्रार्थनाएँ कीं और आगरे को चली। सब बेगमों को मकान दिए और कुछ दिन के अनंतर जरअफशाँ बाग की सैर को गए।

उस बाग में स्नानघर था जिसको देखकर कहा कि राज्य और राजत्व से मेरा मन भर गया। अब मैं इस बाग में एकातवास करूँगा। मेरी सेवा के लिये ताहिर आफताबची बहुत है और राज्य मैं हुमायूँ को देदूँगा। उस समय आकाम बेगम और सब संतानों ने रो गाकर कहा कि ईश्वर आपको राजगद्दी पर बहुत-बहुत वर्ष तक अपनी रक्षा में रखे और सब संतान आपके चरण में बूढ़े हों।

कुछ दिन पर आलोर मिर्जा माँदे हुए जिनकी माँदगी पेट की पीडा से बढ गई। हकीमों ने बहुत कुछ दवा की पर रोग बढता ही गया। अत मे इसी रोग से नश्वर ससार से अमरलोक चले गए। बादशाह ने बहुत दुःख और शोक किया। आलोर मिर्जा की माता दिलदार बेगम अपने पुत्र के शोक में जो ससार मे अद्वितीय और एक ही था पागल हो गईं। जब शोक सीमा के बाहर हो गया तब बादशाह ने आकाम और दूसरी बेगमों से कहा कि चलो धौलपुर सैर करने चलें। स्वयं नाव पर बैठकर आराम से नदी पारकर धौलपुर चले। बेगमों ने भी चाहा कि नाव पर बैठकर जल से जावें।

इसी समय दिल्ली से मौलाना मुहम्मद फर्गली का प्रार्थना-पत्र आया जिसमे लिखा था कि हुमायूँ मिर्जा माँदे हैं, हाल विचित्र है। बेगम साहब यह समाचार सुनते ही बहुत जल्दी आवें क्योंकि मिर्जा बहुत घबड़ाए हुए हैं। बेगम साहब यह समाचार सुनते ही ऐसा घबड़ा गईं जैसे प्यासा पानी से दूर हो, और दिल्ली को चल दीं। मथुरा में भेंट हुई और जैसा सुना था उससे दसगुना निर्बल और सुस्त अपनी संसारदर्शा

आँखों से देखा। वहाँ से दोनों माता और पुत्र ईसा और मरियम की नाईं आगरे को चले।

जब वे आगरे पहुँचे तब मैने अपनी बहिनों के साथ उन देव योग्य स्वभाववाले से जाकर भेट की। पर सुस्ती पहले से अधिक होती गई थी इससे जब होश में आते थे। तब हम लोगों को पूछने और कहते कि बहिनें तुम अच्छी आई, आओ हम तुम एक दूसरे से मिलें क्योंकि हम अभी नहीं मिले हैं। तीन बार उन्होंने यह बात स्वय कही। जब बादशाह आए और मिले तब इनको देखते ही उनका चमकता हुआ मुख शोक से उतर गया और उनकी घबडाहट बढती ही गई।

उस समय बेगम साहब ने कहा कि हमारे पुत्र को आप भुला दीजिए। आप बादशाह हैं, आपको क्या दुःख है ? आपको अन्य कई पुत्र भी है। हमे इस कारण दुःख है कि हमको केवल यही[1] एक पुत्र है। बादशाह ने उत्तर दिया कि माहम ! यद्यपि और पुत्र है पर तुम्हारे हुमायूँ के समान हमे किसी पर भी प्रेम नहीं है। ससार मे अद्वितीय और कार्य्य-शालियों मे अपना बराबर नहीं रखनेवाले प्रिय पुत्र हुमायूँ के ही लिये हम इस राज्य और ससार की इच्छा रखते है, दूसरों के लिये नहीं।

जिस समय यह बीमार थे बादशाह ने हजरत मुर्तजाअली करमुल्ला की परिक्रमा आरभ की। यह परिक्रमा बुधवार से करते है पर इन्होंने दुख और घबडाहट से मगल ही को आरम कर दी। हवा बहुत गरम थी और मन और हृदय इनका घबडाया हुआ था। परिक्रमा में ही प्रार्थना की कि हे परमेश्वर ! यदि प्राण के बदले प्राण दिया जाता हो तब मै, बाबर, अपनी अवस्था और प्राण हुमायूँ को देता हूँ[2]। उसी दिन बाद-

(१) माहम बेगम के और सब पुत्र बचपन ही मे जाते रहे थे।

(२) इसी अवसर पर प्रस्ताव हुआ था कि बडा हीरा (कोहेनूर या वह हीरा जो हुमायूँ को ग्वालियर में मिला था) हुमायूँ पर निछावर

शाह फिर्दौसमकानी मौंदे हो गए और हुमायूँ बादशाह ने स्नान कर बाहर आ दरबार किया। बादशाह पिता को मौंदे हो जाने के कारण भीतर ले गए।

दो तीन मास तक वे पलंग पर ही रहे और इस बीच मिर्जा हुमायूँ कालिजर चले गए थे। जब बादशाह का रोग बढ़ा तब हुमायूँ बादशाह को बुलाने के लिये मनुष्य भेजा गया। वह झट पहुँचे और जब जाकर बादशाह की सेवा की तब उन्हें बहुत सुस्त देखा। हुमायूँ संताप के मारे बड़े दुखित हुए और दासों से कहने लगे कि एकबारगी इनका ऐसा हाल क्यों हो गया? वैद्यों और हकीमों को बुलवाकर कहा कि मैं इनको स्वस्थ छोड़कर गया था, एकाएक यह क्या हो गया? उन लोगों ने कुछ कह दिया।

पिता बादशाह हर समय पूछा करते थे कि हिंदाल[1] कहाँ है और क्या करता है? उसी समय एक ने आकर कहा कि मीर खुर्द बेग[2] के पुत्र मीर बर्दी बेग ने सलाम कहलाया है। उसी समय बड़े घबड़ाहट से बादशाह ने बुलवाकर पूछा कि हिंदाल कहाँ है? कब आवेगा? प्रतीक्षा ने कैसा दुःख दिया। मीर बर्दी ने कहा कि भाग्यवान् शाहजादा दिल्ली पहुँच गया है आज या कल सेवा में आवेगा। उसी समय बादशाह ने मीर बर्दी बेग से कहा कि अरे! अभागे हमने सुना है कि तेरी बहिन का

किया जाय। मिसेज बेवरीज ने इस अंश का ठीक अर्थ नहीं समझा है इससे उन्हें अनुवाद करने में गड़बड़ मालूम हुआ है।

(१) मूल ग्रंथ में हुमायूँ लिख गया है जो अशुद्ध है।

(२) हिंदाल के जन्म से ही यह उसका अतालीक नियत था (१५१९-३० ई०)। यह बाबर की पाठशाला का दारोगा था जिसका पुत्र ख्वाजः ताहिर मुहम्मद अकबर का मीर फरागत और दोहजारी मंसबदार था। मीर बर्दी (खिलवाड़ी) ही स्यात् इसका नाम लड़कपन में रहा हो।

काबुल में और तेरा लाहौर[1] में विवाह हुआ है। इन्हीं विवाहों के कारण मेरे पुत्र को जल्दी नहीं लाए और प्रतीक्षा हद के बाहर हो गई। फिर पूछा कि हिंदाल कितना बडा हुआ और कैसा है? मीर बर्दी बेग ने जो मिर्जा का ही जामा पहिरे हुए था कहा कि यह जामा शाहजादः का है जो मुझे कृपया दिया है। बादशाह ने पास बुलवाया कि देखूँ हिंदाल का डील डौल कितना है? वे हर समय कहते कि सहस्र शोक है कि हिंदाल को नहीं देखा। हर एक से जो आता था पूछते थे कि हिंदाल कब आवेगा?

रुग्णावस्था ही मे बेगम साहब को आज्ञा दी कि गुलरंग बेगम और गुलचेहरः बेगम का विवाह करना चाहिए। जब कि बूआजी[2] साहिबा आवे उन्हें जना देना कि बादशाह कहते हैं कि उनकी इच्छा है कि गुलरंग का ईसन तैमूर सुलतान से और गुलचेहर का तोख्ता बोगा सुलतान से विवाह कर दें। आका जानम मुस्कराती हुई आई। उनसे कहा कि बादशाह ने ऐसे कहा है कि उनकी ऐसी इच्छा है आगे जैसो उनकी इच्छा हो वैसा होवे। बेगम आका जानम ने भी कहा कि ईश्वर शुभ और सुफल करे और बादशाह का विचार बहुत ठीक है। स्वयं जोजम,[3]

---

(१) हिंदाल के साथ काबुल से आते समय रास्ते में यह काम हुआ था।

(२) अम्म' का अर्थ पिता की बहिन है जिसे बूआ कहते हैं। और माता के भाई की स्त्री को भी अम्मः कहते हैं जिसे मामी कहा जाता है। अंग्रेजी अनुवादिका ने भूल से बहिन अर्थ लेकर खानजादः बेगम लिख दिया है। जोड शब्द प्रेम और आदर सूचक है।

(३) मिसेज बेवरीज ने इस शब्द पर टिप्पणी करते लिखा है कि इस तुर्की शब्द के अर्थ करने में कठिनाई पड़ती है। उर्दू लिपि के कारण उसे जीजम, चीजम, चोचम जोचम आदि पढ़ सकते हैं। वस्तुतः यह

बदीउज्जमाल बेगम और आक बेगम दोनों बूआएँ दालान में गईं। साफ स्थान पर बिछौना बिछवाया और साइत देखकर माहम बेगम के ननचः ने दोनों सुलतानों[१] को घुटने बल बिठाकर दामादी में ले लिया।

इसी समय बादशाह के पेट की पीडा बढ़ गई और जब हुमायूँ बादशाह ने पिता का बुरा हाल देखा तब फिर वे घबड़ाने लगे। हकीमों को बुलाकर कहा कि देखो और रोग की औषधि दी। हकीमों ने इकट्ठे होकर कहा कि हम लोगों का दुर्भाग्य है कि औषधि काम नहीं देती, आशा है परमेश्वर अपने गुप्त कोष से कोई दवा जल्दी देवें। उसी समय जब नाडी देखी तब हकीमों ने कहा कि उस विष के चिह्न है जिसे सुलतान इब्राहीम की माता[२] ने दिया था। वह इस प्रकार हुआ कि उस अभागी राक्षसी ने अपने दासी के हाथ में एक तोला विष दिया था कि ले जाकर अहमद चाशनीगीर को दो और कहो कि किसी प्रकार बादशाह के भोजन मे डाल दे। उसको बहुत देने का प्रण किया था। यद्यपि बादशाह उस अभागी राक्षसी को माता कहते थे, मकान और जागीर देकर उस पर पूर्ण

शब्द जीजम है जिसे तुर्की में चीचम पढ़ेंगे और इसका अर्थ बड़ी बहिन है जिससे हिंदी का जीजी शब्द निकला है। यहाँ यह शब्द आका जानम अर्थात् खानजादा बेगम के लिए आया है जो बाबर की बड़ी बहिन थीं।

(१) बाबर के मामा अहमदखाँ का नवाँ पुत्र और तोख्ता बोगा दसवाँ पुत्र था। ये गुलबदन बेगम के पति खिज्र ख्वाजा खाँ के चाचा लगते थे।

(२) बूआ बेगम—यह उस सुलतान इब्राहीम लोदी की माता थी जिसे बाबर ने पानीपति के युद्ध में परास्त किया था। यह सिकंदर लोदी की स्त्री थीं। बाबर को विष देने के कारण इसका सर्वस्व छीन कर बादशाह ने इसे काबुल भेजा पर रास्ते ही में सिंध नदी में कूद कर इसने आत्महत्या कर ली। इसका पूरा वर्णन इकबाल नामा में दिया है।

कृपा रखते थे और उससे कहा था कि मुझे सुलतान इब्राहीम के स्थानपर समझे तिस पर भी उसने उन कृपाओं को नहीं माना क्योंकि वह जाति मूर्खतापूर्ण है। प्रसिद्ध है (मिसरा) सब वस्तु अपनी असलियत को लौटती है। अंत में वह विष ले जाकर उस रसोईदार को दिया गया जिसे ईश्वर ने अंधा और बहिरा बना दिया था और उससे वह रोटी पर फैलाया गया था। इसीसे वह थोड़ा खाया गया था। पर रोग की जड़ वही थी जिससे वे दिन पर दिन दुर्बल और सुस्त हुए जाते थे, माँदगी बढ़ती जाती थी और मुख भी बदल गया था। दूसरे दिन[1] सब अमीरों को बुलवाकर कहा कि बहुत वर्ष हुए मेरी इच्छा थी कि हुमायूँ मिर्जा को बादशाही देकर मैं स्वयं जरअफशाँ बाग में एकांतवास करूँ। ईश्वरी कृपा से वही हुआ पर यह नहीं कि मैं स्वस्थ अवस्था में ऐसा करता। अब इस रोग से दुखित होकर वसीअत करता हूँ कि सब हुमायूँ को हमारे स्थान पर समझें, उसका भला चाहने में कमी न करें और उससे एकमत होकर रहें। ईश्वर से आशा रखता हूँ कि कि हुमायूँ ! तुमको तुम्हारे भाइयों, सब संबंधियों और अपने और तुम्हारे मनुष्यों को ईश्वर को सौंपता हूँ और इन सब को तुम्हे सौंपता हूँ। इन बातों से सभी लोग रोने पीटने लगे और बादशाह की भी आँखों में आँसू भर आए।

इस बात को हरमवालियों और भीतर के आदमियों ने भी सुना। सब कोई रोने पीटने में लग गए। तीन दिन के अनंतर वे इस नश्वर संसार से अमरलोक चले गए। ५ जमादिउल्अव्वल सोमवार सन् ९३७ हि० (२६ दिसंबर सन् १५३० ई०) को मृत्यु हुई।

यह बहाना करके कि हकीम लोग देखने आते हैं हमारी बूआ और माताओं को बाहर लिवा गए। सब बेगमों और माताओं को बड़े गृह[2] में

---

(१) हुमायूँ के आने के अनंतर।

(२) अपने अपने स्थानों पर न जाकर सबने एक ही स्थान पर शोक मनाया।

ले गए। पुत्रों और आपसवालों आदि के लिये यह शोक का दिन था और वे रोने पीटने में लग गए। हर एक ने कोने में छिपकर दिन व्यतीत किया।

यह घटना छिपा रखी गई। अंत में आराइश खाँ नामक हिंदुस्तान के एक अमीर ने प्रार्थना की कि इस बात को छिपाना ठीक नहीं है क्योंकि हिंदुस्तान में यह चाल है कि जब बादशाह की मृत्यु होती है तब बाजार-वाले लूट मचाते है। स्यात् मुगलों के अनजान में घरों और महलों में घुसकर लूट मचावें। यह ठीक होगा कि एक आदमी को लाल वस्त्र पहिरा कर हाथी पर बैठा मुनादी की जाय कि बाबर बादशाह दरवेश हो गए हैं और राज्य हुमायूँ बादशाह को दे गए हैं। हुमायूँ बादशाह ने आज्ञा दी कि ऐसा हो। ढिंढोरा होते ही प्रजा को संतोष हो गया और सबने उनकी बढती के लिए प्रार्थना की। उसी महीने की ९ तारीख शुक्रवार[1] को हुमायूँ बादशाह गद्दी पर बैठे और कुल ससार ने मुबारकबादी दी।

इसके अनंतर माताओं, बहिनों और आपसवालों से मिलकर और समझाकर उनका शोक निवारण किया और आज्ञा दी कि हर एक मनुष्य अपने मसब, पद, जागीर और स्थान पर नियत रहे और पहले के अनुसार अपना कार्य्य करता रहे।

उसी दिन मिर्जा हिंदाल काबुल से आकर बादशाह से मिले। उस पर कृपाए कीं और बहुत प्रसन्न हुए। पिता के कोष से बहुत सी वस्तु मिर्जा हिंदाल को दी।

बादशाह पिता की मृत्यु के उपरात उनके मकबरे पर पवित्रता के

---

(१) ५ जमादिउल्अव्वाल सोमवार को यदि २६ दिसंबर था तो ९ जमादिउल्अव्वाल शुक्रवार को ३० दिसंबर होना चाहिए पर अंग्रेजी अनुवादिक ने २९ दिसंबर दिया है।

समय में पहिला जमघट[१] हुआ और मुहम्मद अली कोतवाल[२] को मकबरे का रक्षक बनाया गया। साठ अच्छे पढ़ने और आवाजवाले विद्वान हाफिजों[३] को नियुक्त किया कि पाँचों समय की निमाज इकट्ठे होकर पढ़ें, कुरान पूरा करें और बादशाह फिर्दौसमकानी की आत्मा के लिए फातिहा पढ़ें। सीकरी जो अब फतहपुर के नाम से प्रसिद्ध है वह कुल (अर्थात् उसकी कुल आय) और बिआना से पाँच लाख मकबरे के विद्वानों, हाफिजों आदि के व्यय के लिए नियत किया गया। माहम बेगम ने दो समय भोजन देना ठीक किया—सबेरे एक बैल, दो भेड और पाँच बकरी और दूसरी निमाज के समय पॉच बकरी। ढाई वर्ष तक वह जीवित रहीं और दोनों समय अपनी जागीर से मकबरे के लिये यह भोज देती रही।

जब तक माहम बेगम जीवित थी उन्हीं के गृह पर मैं बादशाह से मिलती थी। जब उनका स्वास्थ्य बिगड़ा तब मुझसे कहा कि बड़ी कठिनाई होगी कि मेरी मृत्यु के उपरांत बादशाह (बाबर की लड़कियाँ अपने भाई को गुलबर्ग बीबी के गृह मे देखेंगी। बेगम साहब की यह बात मानो बादशाह के हृदय में ही थी कि जबतक हिंदुस्तान में रहे सर्वदा हमारे गृह पर आकर हमलोगों से मिलते और असीम कृपा और स्नेह करते। मासूमा सुलतान बेगम, गुलचेहरः बेगम और गुलरंग बेगम आदि सब बेगमें विवाहिता थी इससे बादशाह मेरे गृह पर आते थे जहा वे आकर उनसे

---

(१) मूल का मार्का शब्द अर्क से बना है जिसका अर्थ मिलना, कनेठी देना और छीलना है। युद्ध में सैनिक लोग मिलते हैं इससे मार्का का अर्थ युद्ध स्थल भी किया गया है। मनुष्यों के हर प्रकार के समूह होने को भी मार्का कहते हैं।

(२ (मूल के असस का अर्थ नगर-रक्षक अर्थात् कोतवाल है।

(३) कुरान को कठाग्र रखनेवाले हाफिज कहलाते हैं।

भेंट करती थीं। अर्थात् पिता और बेगम साहब की मृत्यु[१] पर इस दुखी पर ऐसी कृपा की और असीम प्रेम दिखलाया कि अपनी अनाथता और अनाश्रयता भूल गई।

फिर्दौसमकानी की मृत्यु के अनंतर दस वर्ष[२] तक जिन्नत आशिआनी हिंदुस्तान में रहे। कुल प्रजा शांति, सुख और आज्ञा में रही[३]। फिर्दौसमकानी की मृत्यु के छ महीने बाद बब्बन और बायजीद[४] गौड की ओर से आगे बढ़े। यह समाचार सुनतेही बादशाह आगरे से उधर चले और बब्बन और बायजीद को परास्त कर[५] चुनार आए[६] जिस पर अधिकार कर आगरे पहुँचे।

---

(१) माहम बेगम की मृत्यु के समय गुलबदन बेगम की अवस्था लगभग आठ वर्ष की थी और जब वह तीन वर्ष की थी तभी गोद ली गई थी।

(२) चौसा युद्ध सन् १५३९ ई० मे हुआ था इससे राजत्व काल ९ वर्ष ही है यद्यपि वह सन् १५४२ ई० मे भारत के बाहर निकले थे।

(३) अपने भाई के राजत्व का वृत्तांत बढाकर लिखना स्वभाव के अनुसार ही है। तिसपर भी ठीक ठीक घटनाएँ ग्रंथ में देदी गई हैं।

(४) बब्बन और बायजीद दो नामी अफगान सरदार महमूद लोदी के साथ पूर्वी प्रांतों पर चढ़ आए थे, जब कि हुमायूँ कालिंजर विजय कर चुका था। वहीं से वह जौनपुर की ओर बढ़ा था।

(५) यह युद्ध ९३७ हि० (१५३१ ई०) में गोमती नदी के किनारे दौरा में हुआ था।

(६) प्रसिद्ध शेरखाँ सूरी के पुत्र जलालखाँ के अधीन था। चार मास के घेरे पर ९३९ हि० (१५३२ ई०) में उसने अधीनता स्वीकार कर ली।

माहम बेगम की बहुत इच्छा थी कि हुमायूँ के पुत्र को देखूँ। जहाँ सुंदर और भली लड़की होती बादशाह की सेवा में लगा देती थीं। खंदग चोबदार पुत्री मेवःजान मेरे दासत्व में थी। बादशाह फिर्दौसमकानी की मृत्यु के उपरात एक दिन उन्होंने स्वय कहा कि हुमायूँ, मेवःजान बुरी नहीं है अपने दासत्व में क्यों नहीं ले लेते। इस कथनानुसार उसी रात्रि को हुमायूँ बादशाह ने उससे विवाह कर लिया। तीन दिन के अनंतर बेगा बेगम[1] काबुल से आई और गर्भवती हो गई। ठीक

(१) बेगा (हाजी) बेगम बेगचिक मुगल—यादगार बेग की पुत्री और हुमायूँ की ममेरी बहिन थी जिससे उसने विवाह किया। सन् १५२८ ई० में प्रथम पुत्र अलअमान का जन्म हुआ जब हुमायूँ बदख्शां में था। बाबर ने जो पत्र इस समय लिखा था उसे अपनी पुस्तक मे दिया है। अलअमान बचपन ही मे मर गया। दूसरी सतान यही अकीक. बेगम थी जो चौसा युद्ध मे खोगई। बेगा बेगम ने हुमायूँ को उलाहना दिया था जिसका वर्णन इस ग्रंथ में आया है। हुमायूँ के साथ वह बगाल गई थी जहां इसकी बहिन, जाहिद बेग की स्त्री, भी साथ थी। चौसा युद्ध में यह भी पकड़ी गई थी पर शेरशाह ने प्रतिष्ठा के साथ अपने सेनापति खवास खाँ की रक्षा मे इसे हुमायूँ के पास भेज दिया। कब लौटाया सो ज्ञात नहीं पर सन् १५४५ ई० मे यह काबुल में थी। हुमायूँ के हिंदुस्तान पर फिर अधिकार कर लेने के बाद सन् १५५७ ई० मे सब बेगमों के साथ यह भी भारत आई। दिल्ली के पास पति का मकबरा बनवाकर बराबर वहीं रहती थी।

अकबर इसका माता के समान सम्मान करता था। १५६४—५ ई० में यह हज्ज को गई और तीन वर्ष बाद लौटी। इतिहासों में हाजी बेगम नाम लिखा है जिससे जान पड़ता है कि इसने कई बार हज्ज किया था। सन् १५८१ ई० मे गुलबदन बेगम के हज्ज से लौटने के पहले सत्तर

समय[1] पर पुत्री हुई और उसका अकीकः बेगम नाम रखा गया। माहम बेगम से मेवः जान ने कहा कि मैं भी गर्भवती हूँ। माहम बेगम ने दो प्रकार के यराक[2] तैयार किए और कहा कि जिसे पुत्र होगा उसे अच्छे प्रकार का दूँगी। उनको बँधवा दिया और सोने चाँदी के बदाम और अखरोट बनवाए। सर्दारी सामान[3] भी तैयार करवाया था और प्रसन्न थीं कि स्यात् इनमें से एक को पुत्र होवे। प्रतीक्षा करती थीं कि बेगा बेगम को अकीकः बेगम पैदा हुई। अब मेवःजान की प्रतीक्षा करने लगी पर दस महीने बीत गए और ग्यारहवाँ भी बीत चला। मेवःजान ने कहा कि मेरी मौसी उलुग बेग मिर्जा की स्त्री थीं। जिसे बारह महीने पर पुत्र प्रसव हुआ था और मैं भी स्यात् उसी के ऐसी हूँ। खेमे सिलवाए गए और तोशके भरवाई गई। अंत में मालूम हुआ कि वह झूठी है।

बादशाह जो चुनार को गए थे। सुख और प्रसन्नता के साथ लौट आए। माहम बेगम ने बड़ी मजलिस की और सब बाजार सजाए गए। इसके पहले बाजारवाले ही सजावट करते थे। इन्होंने प्रजा और सैनिकों को भी आज्ञा दी कि अपने स्थानों और गृहों को सजावे। इसके अनंतर हिंदुस्तान में नगर की सजावट प्रचलित हो गई।

वर्ष की अवस्था में इसकी मृत्यु हुई। अबुलफजल लिखता है कि इसका कार्य कासिम अली खां देखता था और बीमारी में अकबर उसे देखने गए थे। एक बार पहले भी सन् १५७४ ई० में अकबर से इन्होंने भेंट की थी।

(१) मूल ग्रंथ में एक वर्ष लिखा है पर वैसा अर्थ करना ठीक नहीं है। शायद भारत में आने के एक वर्ष बाद पुत्री हुई हो;

(२) यराक सैनिकों के शस्त्रादि को कहते हैं जैसे भाला, तलवार, तीर, कमान इत्यादि। इस शब्द का अर्थ सामान भी किया गया है।

(३) मूल में यराके अलकान के स्थान पर यराके यलकान लिख गया है जिसका अर्थ कान अर्थात् सर्दार का सामान है।

जड़ाऊ तख्त पर जिसपर चार सीढ़ियों से चढ़ते थे कारचोबी चंदवा लगा था और कारचोबी गद्दी और तकिया रखी थी। बड़े खेमों[1] का कपड़ा भीतरी ओर विलायती जरबफ्त का था और बाहरी ओर पुर्तगाली कपड़ा था। इन खेमों के डंडों पर सोने का मुलम्मा चढ़ा हुआ था और बहुत अच्छा लगता था। खेमे का झालर और परदा गुजराती कामदानी कपड़े का था। गुलाबजल[2] का कंटर, शमःदान, गिलास, गुलाबपाश आदि सोने और जडाव के बनवाए गए। इन सब सामान की तैयारी से मजलिस[3] बड़ी अच्छी तरह हुई।

१२ ऊँट, १२ खच्चर, ७० तेज घोड़े, १०० बोझ ढोने वाले घोड़े (भेंट किए)। सात हजार मनुष्यों को अच्छी खिलअत मिली और कई दिन खुशी रही।

उसी समय सुना कि मुहम्मद जमाँ मिर्जा[4] ने हाजी मुहम्मद खाँ कोकी के पिता को मार डाला है और विद्रोही होने की इच्छा रखता है।

---

(१) खर और बार का अर्थ बड़ा है और गाह का अर्थ खेमा है। खरगाह उस बड़े खेमे को कहते हैं जिसमें खुशी मनाई जाती या जलसा किया जाता है।

(२) जुलाब का अर्थ गुलाब या गुलकंद है इससे जुलाबजल का अर्थ गुलाब जल ही यहाँ है।

(३) यह मजलिस हुमायूँ की गद्दी के एक वर्ष बाद १९ दिसबंर सन् १५३१ ई० को हुई थी। निजामुद्दीन अहमद लिखता है कि बारह सहस्र खिलअते बँटी थीं जिनमें दो सहस्र खास थीं।

(४) बदीउज्जमां का पुत्र और सुलतान हुसेन मिर्जा बैकरा का पौत्र था। इसका विवाह बाबर की पुत्री मासूमा बेगम से हुआ था। यह चौसा युद्ध में गंगा जी में डूब मरा था।

बादशाह ने उन लोगों[1] को बुलाने के लिये आदमी भेजे और उन्हें पकड़वाकर बियाना में यादगार मामा को सौंपा, पर उसी के आदमियों ने मिलकर मुहम्मद जमाँ को भगा दिया। उसी समय सुलतान मुहम्मद मिर्जा[2] और नैखूब सुलतान मिर्जा[3] के लिये आज्ञा हुई कि दोनों की आँखों में सलाई फेर दी जाय। नैखूब अधा हो गया और सुलतान मुहम्मद की आँखों मे जिसने सलाई फेरी उसने आँखों पर चोट नहीं पहुँचाई। कुछ दिन बाद मुहम्मद जमाँ मिर्जा के साथ भाग गए[4]। ये लोग कुछ वर्ष भारत में रहे और सदा विद्रोह मचाते रहे।

बब्बन और बायजीद के युद्ध से जब बादशाह आए तब आगरे में लगभग एक वर्ष रहे और (इसके अनंतर) बेगम से कहा कि आजकल जी नहीं लगता यदि आज्ञा हो तो आप के साथ सैर को ग्वालियर[5] जावें। बेगम साहब, आजम मेरी माता, बहिनें मासूमः सुलतान बेगम जिसे हम माह चिचः कहती थीं और गुलरंग बेगम जिसे हम गुलचिचः कहती थीं सब ग्वालियर में बादशाह की चाचियों के पास ठहरी।

गुलचेहरः बेगम अवध में थीं जब इनका पति तोख्तः बोगा सुलतान ईश्वर की कृपा को पहुँचा (मर गया) और बेगम के अधीनस्थ मनुष्यों ने अवध से बादशाह को प्रार्थना-पत्र भेजा कि तोख्तः बोगा सुलतान मर

---

(१) सब विद्रोहियों के नाम आगे दिए हैं।

(२) सुलतान हुसेन मिर्जा का नाती था और मुहम्मद जमाँ इसका ममेरा भाई था।

(३) नैखूब और वलीखूब दोनों नाम इतिहास में मिलते हैं।

(४) भागकर सुलतान बहादुर गुजराती की शरण गए।

(५) इतिहासों से जाना जाता है कि ग्वालिअर का जाना बहादुर शाह को धमकाने के विचार से हुआ था। खावंद अमीर जाने का समय शाबान ९३९ हि० (फरवरी १५३३ ई०) निश्चित करता है।

गये, अब बेगम के लिये क्या आज्ञा है। बादशाह ने छोटे मिर्जा[1] को आज्ञा दी कि जाकर बेगम को आगरे लाओ, हम भी वहीं आते हैं।

उसी समय बेगम साहिबः ने कहा कि यदि आज्ञा हो तो बेगा बेगम अकीकः को बुलवाऊँ कि वे भी ग्वालियर देख लें। नौकर और ख्वाजा कबीर को भेजा कि बेगा बेगम और अकीक सुलतान बेगम को आगरे ले आवें। दो महीने ग्वालिअर में एक साथ बीत गए जिसके अनंतर आगरे को चले और शाबान[2] महीने में वहाँ पहुँच गए।

शव्वाल महीने में बेगम साहबः के पेट मे पीडा उठी। उसी महीने की तेरह को सन् ६४० हि* मे इस नश्वर ससार से अमरलोक को चली गई। सम्राट् पिता की सतानो को अनाथता का दुःख नया हुआ, विशेष कर मुझे जिसे उन्होंने स्वय पाला था। मुझको बडा दुख, घबराहट और कष्ट था जिससे दिन रात रोने, चिल्लाने और शोक करने में बीतता था। बादशाह ने कई बार आकर दुख और शोक निवारण करने के लिये समझाया और कृपाएँ कीं। दो वर्ष की थी जब बेगम साहबः ने मुझको अपने स्थान पर लाकर पालन किया और दस वर्ष की थी जब वे मरीं। एक वर्ष और उनके गृह पर रही।

जिस समय बादशाह धौलपुर की सैर को गए उस समय ग्यारहवें वर्ष मे मै माता के साथ थी। ग्वालियर जाने और इमारतों के बनवाने के पहले यह हुआ था।

बेगम साहबः का चालीसा बीतने पर बादशाह दिल्ली गए और दीन-

(१) मूल ग्रथ में मीरजायचः नही मिर्जाच. है जिसका अर्थ छोटा मिर्जा है। मीरजायचः का अर्थ मुख्य ज्योतिषी है।

(२) शाबान ९३९ हि० (फरवरी १५३३ ई०) में ग्वालिअर गए, शव्वाल (एप्रिल) में आगरे लौटे, १३ शव्वाल (८ मई) को माहम बेगम की मृत्यु हुई और ९४० हि० (जुलाई १५३३ ई०) में दीनपनाह दुर्ग बनना आरंभ हुआ।

पनाह दुर्ग[1] की नींव डाली और आगरे आए। आकः जान ने बादशाह से कहा कि मिर्जा हिंदाल के विवाह की मजलिस कब करोगे? बादशाह ने कहा बिस्मिल्ला (अर्थात् आरभ करो)। मिर्जा हिंदाल के विवाह के समय बेगम साहबः जीती थीं पर सामान तैयार नहीं होने से मजलिस रुक गई थी कि मर गईं। तब कहा कि तिलस्मी मजलिस का भी सामान तैयार है, पहले यह हो, तब मिर्जा हिंदाल की (मजलिस) होवे। बादशाह ने आकः जान से कहा कि बूआ साहब, आप क्या कहती हैं? उन्होंने कहा कि ईश्वर अच्छा और भला करे।

उस मजलिस-घर का विवरण जो नदी के तट पर बनाया गया था और जिसा नाम तिलस्मी-घर[2] रखा गया था।

अष्टकोणवाले बड़े गृह के बीच में आठ पहल का तालाब बना था जिसके मध्य मे अष्टकोणी चबूतरा बना हुआ था और उस पर विलायती गलीचे बिछे हुए थे। युवकों, सुंदर युवतियों, सुदर स्त्रियों, अच्छे सूरवाले गवैयों और पढनेवालो को आज्ञा दी कि तालाब (वाले चबूतरे) पर बैठें।

गृह के आँगन मे जडाऊ तख्त जिसे बेगम साहबः ने मजलिस में दिया था रखा गया और उसके आगे कारचोबी की तोशक बिछाई गई थी। बादशाह और आकःजान तख्त के आगे की तोषक पर बैठ गए। आकः जान के दाहिने ओर उनकी बूआएँ, सुलतान अबूसईद मिर्जा की पुत्रियाँ, बैठीं—

---

(१) ९४० हि० के मुहर्रम महीने के मध्य में साइत से हुमायूँ ने नींव डाली।

(२) ऐसे गृह को जिसमें आश्चर्यजनक तमाशे हों तिलस्मी-घर कहते है। यह हुमायूँ की राजगद्दी की खुशी में हुआ था और खाविंद अमीर ने अपने हुमायूँ नामा में इसका पूरा विवरण दिया है।

(१) फखजहाँ बेगम,
(२) बदीउज्जमाल बेगम,
(३) आक बेगम,
(४) सुलतानबख्त बेगम,
(५) गौहरशाद बेगम, और
(६) खदीजा सुलतान बेगम।

दूसरी तोशक पर मेरी बूआएँ जो कि फिर्दौस-मकानी की बहिनें थीं बैठीं (इनके ये नाम थे)—

(७) शहरबानू बेगम[1] और
(८) यादगार सुलतान बेगम[2],

---

(१) शहर बानू बेगम—यह उमर शेख मिर्जा और उम्मेद अदजानी की पुत्री, बाबर की सौतेली बहिन और उनसे आठ वर्ष छोटी थी। यह नासिर और मेहबानू की सहोदर बहिन, निजामुद्दीन अली खलीफा के भाई जुनेद बर्लास की स्त्री और संजर मिर्जा की माता थी। सन् १४९१ ई० में इसका जन्म हुआ था, १५३७–३८ ई० में यह विधवा हुई और १५४० ई० में इसकी मृत्यु हुई। अपने भतीजे यादगार नासिर के साथ सन् १५४० ई० में सिंध गई और जब वह कामराँ के पास भाग गया (शाह हुसेन अर्गुन ने काम निकलने पर उस धोखेबाज को निकाल दिया था) तब कामराँ ने शाह हुसेन को लिखा कि बेगम को पुत्र सहित भेज दो। आवश्यक वस्तुओं के न रहने से रेगिस्थान पार करने में इसके बहुत साथी मर गए और यह भी क्रौटा में ज्वर से मर गई।

(२) यादगार सुलतान बेगम—यह उमर शेख मिर्जा और आगा सुलतान आगाचः की पुत्री और बाबर की सौतेली बहिन थी। इसका पालन इसकी दादी ईसन दौलत् ने किया था। पिता की मृत्यु के बाद उत्पन्न होने के कारण यादगार नाम पड़ा। वह ९ जून सन् १४९४ ई० में मरा

(६) सुलतान हुसेन मिर्जा की पुत्री आयशा सुलतान बेगम,[१]

(१०) बादशाह की बूआ जैनब सुलतान बेगम की पुत्री उलुग बेग,

(११) आयशा सुलतान बेगम,

(१२) बादशाह के चाचा सुलतान अहमद मिर्जा की पुत्री सुलतानी बेगम,

(१३) बादशाह के चाचा सुलतान खलील मिर्जा की पुत्री और कलाँ खाँ बेगम की माता बेगा सुलतान बेगम[२],

(१४) माहम बेगम,

(१५) बादशाह के चाचा उलुग बेग मिर्जा काबुली की पुत्री बेगी बेगम,

---

था। सन १५०३ ई० मे शैबानी के अंदजान और अखसी विजय कर लेने पर यह अब्दुलतीफ उजबेग के हाथ कैद होगई। सन १५११ ई० में जब बाबर ने खतलान और हिसार विजय किया तब यह उसके पास लौट आसकी। विवाह के बारे मे कुछ पता नही। यह और इसकी माता तिलस्मी मजलिस में थी।

इसके अनंतर दाएँ ओर के दूसरे अतिथियों के नाम हैं।

(१) आयशा सुलतान बेगम--सुलतानहुसेन मिर्जा बैकरा और जुबोदः आगाचः (शैबानी सुलतानो के घराने) की पुत्री थी। इसका विवाह कासिम सुलतान उजबेग, शैबान सुलतान, से हुआ जिससे कासिम हुसेन सुलतान पुत्र हुआ। कासिम सुलतान की मृत्यु पर उसके छोटे भाई बुरान सुलतान ने उससे सगाई करली जिससे अब्दुल्ला सुलतान पुत्र हुआ। यह सन् १५३९ ई० में चौसा में खो गई।

(२) अबू सईद की पोती और बाबर की चचेरी बहिन थी।

(१६) सुलतान मसऊद मिर्जा की पुत्री खानजादा बेगम[1] जो बादशाह की बूआ पायंदा मुहम्मद सुलतान बेगम[2] की नतिनी थीं,

(१७) बदीउज्जमाल बेगम की पुत्री शाह खानम,

(१८) आक बेगम की पुत्री खानम बेगम,

(१६) बादशाह के बड़े मामा सुलतान महमूद की पुत्री जैनब सुलतान खानम,

(२०) बड़े बादशाह के छोटे मामा सुलतान अहमद खाँ जो इलाचः खाँ के नाम से प्रसिद्ध था उसकी पुत्री मुहिब्ब सुलतान खानम,

(२१) मिर्जा हैदर की बहिन और बादशाह की मौसी की पुत्री खानिश,

---

(१) खानजादा बेगम बैकरा—यद्यपि बाबर ने पायंदा मुहम्मद सुलतान बेगम के किसी लड़की की सुलतान मसऊद मिर्जा के साथ विवाह होने की बात नहीं लिखी है परंतु गुलबदन बेगम के ऐसा होना लिखने से उसकी बात अवश्य मान्य है, क्योंकि ऐसे सबंधो का स्त्रियों को ही ध्यान अधिक रहता है। सुलतान मसऊद का पायंदा बेगम की द्वितीय पुत्री कीचक बेगम (पुकारने का नाम हो सकता है) पर बड़ा प्रेम था और यद्यपि पायंदा बेगम मसऊद से चिढ़ी हुई थी पर किसी पुस्तक में इस विवाह के प्रतिकूल कुछ नही लिखा मिलता है। मसऊद के अंधा होने के अनंतर उसका विवाह सआदत बख्श के साथ हुआ था। कीचक बेगम को तिलाक देने पर उसका विवाह मुल्ला ख्वाजा के साथ हुआ था।

(२) पायंदा मुहम्मद सुलतान बेगम—अबू सईद मिर्जा की पुत्री, बाबर की बूआ और सुलतान हुसेन बैकरा की स्त्री थी जिसने इसकी बहिन को तिलाक देकर इससे विवाह किया था। हैदर मिर्जा बैकरा, आक बेगम, कीचक बेगम, बेगा बेगम और आगा बेगम की माँ थी। सन् १५०७-८ ई० में जब उजबेगों ने खुरासान ले लिया तब यह एराक गई जहाँ कष्ट से इसकी मृत्यु हुई।

(२२) बेगा कलाँ बेगम[१],

(२३) कीचक बेगम[२],

(२४) शाह बेगम[३] जो दिलशाह बेगम की माता और बादशाह की बूआ फखजहाँ की पुत्री थी,

(२५) कचकनः बेगम,

(२६) सुलतान बख्त बेगम की पुत्री आफाक बेगम[४],

(२७) बादशाह की बूआ मेहलोक बेगम,

(२८) शाद बेगम[५] जो सुलतान हुसेन मिर्जा की नतिनी और माता की ओर से बादशाह की बूआ थी,

(२६) सुलतान हुसेन मिर्जा की पोती और मुजफ्फर मिर्जा की पुत्री

---

(१) बेगा कलाँ बेगम–इसके बारे में ठीक वृत्तांत नहीं मालूम हुआ। सुलतान महमूद मिर्जा और खानजादा तर्मिजी की पुत्री, हैदर मिर्जा बैकरा की स्त्री और शाद बेगम की माँ बेगा बेगम मीरानशाही हो सकती है ।

(२) कीचक बेगम—फखजहाँ बेगम मीरानशाही और मीर अलाउल् मुल्क तर्मिजी की पुत्री थी। ख्वाजा मुईन अहरारी की स्त्री और मिर्जा शरफुद्दीन हुसेन की माँ थी ।

(३) शाह बेगम—मीरअलाउल् मुल्क तर्मिजी की पुत्री और कीचक बेगम की बहिन थी ।

(४) आफाक बेगम—सुलतान अबू सईद मिर्जा की नतिनी थी। पिता का नाम ज्ञात नहीं। बाबर ने लिखा है कि सुलतान बख्त की एक पुत्री सन् १५२८ ई० के अक्तूबर में भारत आई थी और उसका नाम आदि गुलबदन बेगम ने लिखा है ।

(५) शाद बेगम—सुलतान हुसेन मिर्जा के पुत्र हैदर बैकरा और बेगम मीरानशाही की पुत्री और आदिल सुलतान की स्त्री थी ।

मेहरअंगेज बेगम[1]। (शाद बेगम और ये) बड़ी मित्र थीं, मर्दानः कपड़ा पहिरतीं, कई प्रकार के गुण जानती थी जिनमे से धनुष का चिल्लः बनाना, चौगान खेलना, तीर चलाना और कई बाजे बजाना है,

(३०) गुल बेगम,
(३१) फौक बेगम,
(३२) जान सुलतान बेगम,
(३३) अफरोज बानू बेगम,
(३४) आगा बेगम,
(३५) फीरोजः बेगम,
(३६) बर्लास बेगम,

और भी बहुत बेगमें थीं जिनकी सख्या ९६ तक थी जो सब वेतनभोगी थीं और कुछ दूसरी भी थी।

तिलस्मी मजलिस के अनतर मिर्जा हिंदाल की मजलिस हुई। पूर्वोक्त बेगमों मे से कई विलायत[2] चली गईं और कुछ जो उस मजलिस में थीं बहुधा दाहिने ही ओर बैठी थी। हमारी[3] बेगमो मे से—

---

(१) मेहरअंगेज बेगम—खदीजा बेगम की पुत्री थी। सन् १५०७ ई० के जून मे जब शैबानीखां ने हिरात विजय किया तब उबेदुल्लाखाँ उजबेग ने इनसे विवाह कर लिया।

(२) काबुल आदि देश।

(३) न० ३६ तक की बेगमें दूर की रहनेवाली थीं जो पहली मजलिस होने पर अपने अपने देश चली गईं। इसके अनंतर जिन बेगमों का नाम आया है वे बादशाह के साथ रहनेवाली थीं जैसा कि गुलबदन बेगम के 'हमारी बेगमो' लिखने से ज्ञात होता है। इस सूची में दोनों मजलिसो मे रहनेवाली बेगमो के नाम दिए गए हैं।

(३७) आगा सुलतान आगाचः[1], यादगार सुलतान बेगम की माता ।

(३८) आतून मामा[2],

(३९) सलीमा,

(४०) सकीना,

(४१) बीबी हबीबः,

(४२) हनीफः बेगः,

बादशाह के बाईं ओर कारचोबी की तोशक पर बैठी हुई स्त्रियाँ—

(४३) मासूमः सुलतान बेगम,

(४४) गुलरंग बेगम,

(४५) गुलचेहरः बेगम,

(४६) गुलबदन (बेगम), यह तुच्छ और दुखी,

(४७) अकीकः सुलतान बेगम,

(४८) आजम, जो हमारी माता दिलदार बेगम थीं,

---

(१) आगा सुलतान आगाच.—उमर शेख मिर्जा (मृत्यु सन् १४९४ ई०) की स्त्री और बाबर की सौतेली बहिन यादगार सुलतान की माँ थी। दोनों मजलिसों में थी।

(२) आतून मामा–सन् १५०१ ई० में बाबर ने एक आतून का नाम लिखा है जो समरकंद से काशगर पैदल आई और पुरानी स्वामिनी कतलक-निगार खानम से मिली। शैबानी की विजय पर उसके लिये घोड़ा नहीं होने के कारण वह वहीं छुट गई थी। गुलबदन बेगम ने भी मामा लिखा है जिससे यह वही पुरानी सेविका समझ पड़ती है। आतून उस स्त्री को कहते हैं जो लड़कियों को पढ़ना, लिखना, सीना और जाली निकालना सिखलाती है।

(४६) गुलबर्ग बेगम[१],
(५०) बेगा बेगम,
(५१) माहम की ननचः,
(५२) सुलतानम, अमीर खलीफा की स्त्री,
(५३) अलूश बेगम,
(५४) नाहीद बेगम,
(५५) खुरशेद कोका और सम्राट् पिता के धाय-भाई की पुत्रियाँ.
(५६) अफगानी आगाचः,
(५७) गुलनार आगः[२],
(५८) नाजगुल आगाचः[३],
(५६) मखदूम आगः, हिंदू बेग की स्त्री,

(१) गुलबर्ग बेगम—बाबर के खलीफा निजामुद्दीन अली बर्लास की पुत्री और जूनेद बर्लास की भतीजी थी। स्यात् खलीफा की स्त्री सुलतानम ही की पुत्री रही हो। सन् १५२४ ई० में पहले मीर शाह हुसेन अर्गून से विवाह किया पर सुखी नहीं होने पर तिलाक दे अलग हो गई। चौसा युद्ध (१५३९ ई०) के कुछ पहिले हुमायूँ से विवाह किया। सिंध में साथ रही और वहाँ से सन् १५४३ ई० में सुलतानम के साथ मक्का गई। मृत्यु पर दिल्ली में गाडी गई।

(२) गुलनार आग –बाबर के हरम में थी। शाह तहमास्प ने सन् ५२६ ई० में दो चर्किस दासियाँ (दूसरी का नाम नाजगुल था) बादशाह को भेंट दी थी उनमें से यह एक हो सकती है। यह हिंदाल की मजलिस में थी और हुमायूँ और उसके हरमवालियों के साथ रहती थी। सन् १५७५ ई० में गुलबदन बेगम के साथ हज्ज को गई।

(३) नाजगुल आगाचः—देखो नोट गुलनार आगः पर।

(६०) फातिमा सुलतान अनगः[1], रौशन कोका की माता,

(६१) फखुन्निसा अनगः, नदीम कोका[2] की माता और मिर्जा कुली कोका की स्त्री,

(६२) मुहम्मदी कोकः की स्त्री,

(६३) मुवय्यद बेग की स्त्री,

बादशाह की धाय-बहिनें—

(६४) खुर्शेद कोकः,

(६५) शरफुन्निसा कोकः,

(६६) फतह कोकः,

(६७) राबेश्रा सुलतान कोकः,

(६८) माहेलका कोकः,

हमारी धाएँ और धाय-बहिनें, बेगमों के साथवाली, अमीरों की स्त्रिएँ और साथवाली जो दाहिने हाथ की ओर थीं—

(६९) सलीमा बेगः,

(७०) बीबी नेकः,

(७१) खानम आगः ख्वाजा अब्दुल्ला मुर्वारीद की पुत्री,

(७२) निगार आगः, मुगल बेग की माता,

---

(१) फातिमः सुलतान—ख्वाजा मुअज्जम की स्त्री ज़ोहरा भी इसी की पुत्री थी। बायजीद बिश्रात में इसे हुमायूँ के हरम का उर्दूबेगी लिखा है जिसका अर्थ ब्लौकमैन ने शस्त्रधारी स्त्री किया है। यह हिंदाल की मजलिस में थी और सन् १५४९ ई० में हुमायूँ की बीमारी में उसने उसकी सेवा की थी। विवाह संबंध में यह हरम बेगम के यहाँ गई और अकबर के समय में भी थी जब इसकी पुत्री को ख्वाजः मुअजम ने मार डाला था।

(२) इसी नदीम कोका की स्त्री माहम अनगः थी।

(७३) नार सुलतान आगः,
(७४) आगः कोकः, मुनइमखाँ की स्त्री,
(७५) ऐश बेगः, मीर शाह हुसेन की पुत्री,
(७६) कीसक माहम,
(७७) काबुली माहम,
(७८) बेगी आगः,
(७९) खानम आगः,
(८०) सआदत सुलतान आगः,
(८१) बीबी दौलत-बख्त[१],
(८२) नसीब आगः,
(८३) ऐश काबुली,

और बहुत सी बेगः और आगः जो अमीरों की स्त्रियाँ थीं इस ओर बैठीं और सब उस मजलिस में थीं।

तिलस्मी-घर इस प्रकार था। बड़ा अष्टकोणी गृह जिसमें मजलिस हुई उसी के सामने छोटा अठपहला घर भी था। दोनों बहुत प्रकार के सामान और सजावट से पूर्ण थे। बड़े अष्टकोणी मजलिस-घर में जड़ाऊ तख्त रखा गया जिसके ऊपर और नीचे कारचोबी की मसनद लगी थी और उतार चढ़ाव के मोतियों की डेढ़ गज लम्बी लड़ियाँ लटकती थीं जिनके नीचे शीशे की दो दो गोलियाँ थीं। लड़ियाँ लगभग तीस चालीस के थीं।

---

(१) दौलत-बख्त हुमायूँ की गृहस्थी की कोई परिश्रमी और अच्छे दर्जे की सेविका थी जो हुमायूँ को स्वप्न में दिखलाई पड़ी थी और जिसके नाम पर बख्तुन्निसा का नाम रखा गया था। बेगमों के फर्जा जाने के समय यह आगे गई थी और खान पान का सामान इसी के अधीन था।

छोटे अष्टकोणी गृह में जड़ाऊ छपरखट[1] रखा था। पानदान[2] सुराही, गिलास, जडाऊ, सोने और चाँदी के बर्तन आलों पर रखे हुए थे। एक ओर पश्चिम में दीवानखानः, दूसरी और पूर्व में बाग, तीसरी ओर दक्षिण में बड़ा अष्टकोणी गृह और चौथी ओर उत्तर में छोटा गृह था। इन तीनों गृहों के ऊपर एक-एक और घर थे। इनमें एक को राजगृह कहते थे। इसमें नौ युद्धीय सामान थे—जैसे जड़ाऊ तलवार, कवच, खंजर, जमधर, धनुष और तूणीर—जो सब जडाऊ थे और उनके कारचोबी मियान भी लटकते थे।

दूसरे घर[3] में जिसे पवित्रता का गृह कहते थे निमाज पढ़ने का स्थान पुस्तकें, जड़ाऊ कलमदान, सुंदर जिल्दें और अच्छी चित्र-पुस्तकें, जिनमें चित्र और लेख अच्छे थे, रखी हुई थीं।

तीसरे घर में जिसे सुखागार कहते थे, जड़ाऊ छपरखट और चंदन के बर्तन थे, अच्छी तोशकें बिछी थीं जिनके पायताने अच्छी-अच्छी निहालियाँ रखी थीं और उनके आगे दस्तरख्वान बिछे थे जो सब अच्छे जरक्फ्त के थे। बहुत प्रकार के मेवे और शर्बत आदि सभी सुख के सामान सज्जित थे।

जिस दिन तिलस्मी-घर में मजलिस थी (उस दिन) आज्ञा दी कि सब मिर्जा, बेगम और अमीर भेंट लावें। आज्ञानुसार सब लाए। तब आज्ञा दी कि इस भेट का तीन भाग करो। तीन थाली अशरफी और छ थाली

---

(१) गुलबदन बेगम ने कई हिंदी शब्दों का भी व्यवहार किया है।

(२) इससे जान पड़ता है कि मुगलो में इस समय पान खाना जारी होगया था।

(३) इस प्रकार से तीन विभाग करने का कारण और उसका पूरा विवरण खाविंद अमीर ने अपने हुमायूँनामा में दिया है। इलियट डाउसन जिल्द ५ पृ० ११९।

शाहरुखी हुई। एक थाली अशरफी और दो थाली शाहरुखी हिंदू बेग को दी कि यह भाग राज्य का है इसे मिर्जो, अमीरों, मंत्रियों और सैनिकों में बाँट दो। एक थाली अशरफी और दो थाली शाहरुखी मौला मुहम्मद फरगरी को दी कि यह भाग पवित्रता का है इसको बड़ों, भद्रों, विद्वानों, महात्माओं, जोगियों, शेखों, साधुओं, सतों, मँगतों और दरिद्रों को दो। एक थाली अशरफी और दो शाहरुखी को कहा कि यह भाग सुख का है इससे हमारा है, आगे लाओ। लाया गया तब कहा कि गिनने की क्या आवश्यकता है ? पहले अपने हाथ से उसे छू दिया और कहा कि अब एक थाली अशरफी और एक थाली शाहरुखी की बेगमों के आगे ले जाओ कि हर एक बेगम एक एक मुट्ठी ले लेवे। बची दो थाली शाहरुखी और सब अशरफी जो दो सहस्र के लगभग थी और शाहरुखी जो दस सहस्र के लगभग रही उस सबको लुटा दिया और निछावर किया। पहले वलीनेअमतों के आगे और फिर दूसरों के आगे ले गए। मजलिस-वालों मे से किसी ने भी सौ या डेढ़ सौ से कम नही पाया होगा। उन लोगों ने जो हौज मे थे अधिक पाया।

बादशाह ने कहा कि आकः जानम यदि आज्ञा हो तो हौज मे जल आवे। आक. जान ने कहा कि बहुत ठीक और स्वय आकर ऊपर की सीढ़ी पर बैठ गई। और लोग अनजान थे कि एकाएक टोंटी खुलते ही जल आने लगा। युवा लोगों मे अच्छी घबराहट पैदा हो गई तब बादशाह ने कहा कि डर नहीं है हरएक एक एक लड्डू और एक एक कतरी माजून[१] की खावे और वहाँ से बाहर आवे। इसी बीच जिसने खा लिया झट बाहर आया। जल टहने तक पहुँच गया था। अत में सब माजून खाकर बाहर आए ! भोजन का सामान लाया गया और आदमियों

---

(१) भाँग का पुट देकर जो मिठाई बनती है उसे माजून कहते हैं।

को देने के लिए सरोपा रखे गए। माजून खानेवालों आदि को पुरस्कार और सरोपा[1] दिया गया।

तालाब के किनारे पर एक कमरा था जिसकी खिड़कियाँ अभ्रक की बनी हुई थी। जवान लोग उसमें बैठे और बाजीगरों ने खेल दिखाए। जनानःबाजार भी लगा था और नावें भी सजी गई थीं। एक नाव के छ कोनों में मनुष्यों के छ चित्र बँधे हुए थे और छ कुँज बने थे, एक नाव में बालाखाना बना हुआ था और उसके नीचे बाग लगाया था जिसमें कलगः, ताजखरोस, नाफर्मान और लालः लगे हुए थे और एक में आठ नावें इस प्रकार लगाई गई थीं कि आठ टुकड़े हो जाती थीं। अर्थात् ईश्वर ने बादशाह के हृदय में इस प्रकार की नई वस्तुएं बनवाने की बुद्धि दी थी कि जो देखता था चकित हो जाता था।

मिर्जा हिंदाल की मजलिस[2] का दूसरा विवरण यह है।

सुलतान बेगम[3] मेहदी ख्वाजा की बहिन थी। पिता के बहनोई को जाफर ख्वाजा के सिवाय दूसरा पुत्र नहीं था और न हुआ। आकः जानम ने सुलतानम का अपनी रक्षा में पालन किया था और जब दो वर्ष की थी तब खानजादः बेगम ने उसे अपनी रक्षा मे ले लिया था, बड़ा प्रेम रखती थी, भतीजी से बढ़कर जानती थी। उसने मजलिस की बड़ी तैयारी की थी।

खेमः, मसनद, पाँच तोशक, पाँच तकिया, एक बड़ी तकिया, दो गोल तकिया, कौशकः और परदा तथा तीन तोशक सहित बड़ा खेमा जो

---

(१) सिर से पाँव तक के सब कपड़ों को सरोपा कहते हैं। इसी समय १२००० सरोपा बाँटे गए थे।

(२) जौहर इसका सन् ९४४ हि०, १५३७ ई० में होना लिखता है।

(३) इसीके साथ हिंदाल का विवाह हुआ था।

सब कारचोबी का था। मिर्जाओं के लिये सरोग, कारचोबी की टोपी, कमरबंद, अंगौछा, कारचोबी का रूमाल और कवच का कारचोबी का ढकनेवाला।

सुलतान बेगम के लिए नौ नीमेअस्तीन थी जिनमें रत्नों की घुंडियाँ थीं। एक में लाल, एक में माणिक, एक में पन्ना, एक मे फीरोजा, एक में पुखराज और एक में लहसुनिया की थीं। मोती की नौ मालाएं एक पोशाक (तुर्की) और चार बुडीदार कुरती, एक जोड चुन्नी की बाली और एक जोड़े मोती की, तीन पंखा, एक शाही छत्र, एक शाख, दो पुस्तकें, दूसरे सामान, वस्तु, कारखाने आदि जो खानजादः बेगम ने सचित किए ये सब दे दिए। ऐसी मजलिस की कि उसके समान मेरे पिता के और किसी सतान की नही हुई थी। सब संचित करके दिया— नौ तेज घोड़े जिनके जीन और लगाम जडाऊ और कारचोबी के थे और सोने और चाँदी के बर्तन तथा तुर्की, चरकिस, रूसी और हबशी गुलाम हर एक नौ नौ थे।

बादशाह के बहनोई (महदी ख्वाजः) ने मिर्जा को जो भेट दी थी वह यह थी—नौ तेज घोड़े जिनपर जडाऊ और कारचोबी के जीन और लगाम थीं और सोने तथा चाँदी के बरतन, अठारह अन्य बोझ उठानेवाले घोड़े जिनकी जीन और लगाम मखमल, जरबफ्त और पुर्तगाली कपड़े की थी, तुर्की हबशी और हिंदी गुलाम नौ नौ और तीन हाथी।

मजलिस के पूर्ण होने के अनतर समाचार आया कि सुलतान बहादुर का वजीर खुरासान खाँ[1] बिआना तक आक्रमण करके आ गया

(१) मिर्जा मुकीम खुरासान खाँ। तबकाते-अकबरी में लिखा है कि गुजराती सेनापति तातार खाँ लोदी बिआने पर भेजा गया था जिसे मिर्जा हिंदाल ने परास्त किया था। इलियट और डाउसन जिल्द ५ पृष्ठ १९०।

है। बादशाह ने मिर्जा अस्करी को फक्रेअली बेग, मीर तर्दी बेग आदि कुछ अमीरों के साथ भेजा। इन लोगों ने बिआना जाकर युद्ध किया और खुरासान खाँ को परास्त किया। कुछ दिन के अनंतर बादशाह स्वयं गुजरात को सही सलामत चले। १५ रज्जब सन् ९४१ हि०[1] (२९ जनवरी १५३५ ई०) को गुजरात जाने की दृढ़ इच्छा की। जरअफशाँ बाग में पेशखाना तैयार किया जिसमें सेना एकत्र होने तक एक मास ठहरे।

दरबार के दिन जो अतवार और मंगल को था, वे नदी के उस पार जाते थे और जबतक बाग में रहते थे बहुधा आजम, बहिनें और बेगमें मिलने आती थी। सबके ऊपर मासूमा सुलतान बेगम का खेमा था जिसके अनंतर गुलरंग बेगम और आजम[2] का एक स्थान पर था। माता के खेमे के अनंतर गुलबर्ग बेगम, बेगा बेगम[3] आदि के खेमे थे।

कारखाने तैयार कराए। बाग में जब मजलिसी और दरबारी खेमे तैयार हुए, तब प्रथमबार उन्हे देखने को बे बाहर निकले। बेगमें और बहिनें भी आईं। मासूमा सुलतान बेगम के खेमें के पास आ गए थे इससे उनके खेमे में गए। सब बेगमें और बहिनें बादशाह के साथ थीं क्योंकि जब किसी बेगम या बहिन के गृह पर जाने तब सब बेगमें और बहिनें

---

(१) अबुलफजल ने सेना एकत्र करने का समय जमादिउल्-अव्वल सन् ९४१ हि० (नवंबर १५३५ ई०) लिखा है। इससे ज्ञात होता है कि बेगम ने रवान· होने की तारीख लिखी है।

(२) दिलदार बेगम।

(३) हुमायूँ की स्त्री और अकीकः बेगम की माता थी। इस क्रम को लिखकर गुलबदन बेगम ने दिखलाया है कि बाबर की पुत्रियों और विधवाओं को हुमायूँ की बेगमों से अधिक प्रतिष्ठित स्थान मिलता था।

भी साथ जाती थीं। दूसरे दिन मेरे खेमें में आए और तीन पहर[1] रात्रि तक मजलिस रही। बहुधा सभी बेगमें, बहिनें, बेगः आगः आगाचः, गाने वाली और पढ़नेवाली थीं। तीन पहर के अनंतर बादशाह ने आराम किया और बेगमों और बहिनों ने भी वहीं शयन किया।

बेगा बेगम ने जगाया कि नमाज का समय है। बादशाह ने कहा कि वजू के लिये जल उसी खेमे में तैयार हो। बेगम ने जानकर कि बादशाह जाग गए उलाहना दिया कि बाग मे आए हुए पर आप एक दिन भी मेरे खेमे मे नही आए। मेरे खेमे के रास्ते मे काँटे नहीं बोए हैं और आशा करती हू कि मेरे खेमे मे भी आकर मजलिस करेंगे। हम अनाथ पर कब तक ऐसी कृपा न रहेगी। हमें भी हृदय है। औरो के यहाँ तीन बार गए और दिन रात्रि वहाँ प्रसन्नता मे व्यतीत किया। बादशाह ने कुछ नही कहा और निमाज को चले गए।

एक पहर दिन चढ़ गया था तब बहिनो, बेगमों, दिलदार बेगम, अफगानी आगाचः, गुलनार आगाचः, मेवः जान, आगः जान और धायों को बुलावाया। जब कि हम सब गए और बादशाह कुछ नहीं बोले तब सब ने जाना कि वह क्रोधित है। कुछ देर के अनतर कहा कि बीबी सबेरे तुमने हमसे किस दुःख पाने का उलाहना दिया था और वह स्थान उलाहना देने का नहीं था। तुम जानती हो कि मै तुम्ही लोगों के बड़ों के स्थान पर हूँ और उनके चित्त को प्रसन्न रखना मुझे आवश्यक है, तिस-पर भी उनसे लज्जित हूँ कि देर में देखने जाता हूँ। मेरी यह सर्वदा इच्छा थी कि तुम लोगों से पत्र माँगू पर अच्छा हुआ कि तुमने आपही कह दिया। मै अफीमची हूँ, यदि आने जाने में देरी हो तो मुझसे दुखी न होवें और

---

(१) गुलबदन बेगम ने पहर शब्द का व्यवहार किया है जिस पर बाबर ने आलोचना की है, क्योंकि यह समय का एक नए प्रकार का विभाग है। आत्मचरित्र पृ० ३३१)

नहीं तो पत्र लिखकर देवें कि आपकी इच्छा आवें या न आवें हम सुखी हैं और धन्यवाद देती है। गुलबर्ग बेगम ने उसी समय उस आशय का पत्र लिख कर दिया और (बादशाह ने) उनसे मिलने का समय ठीक कर दिया। बेगा ने कुछ तर्क किया कि दोष से मेरे उलाहने को अधिकतर बुरा मत समझिए। उलाहना देने से मेरी केवल यही इच्छा थी कि आप अपनी कृपा से मेरी प्रतिष्ठा बढ़ावेंगे पर आपने उस बात को यहाँ तक पहुँचा दिया। हम क्या कर सकती है? आप बादशाह हैं। फिर पत्र लिखकर दिया और बादशाह ने मिलने का समय नियत कर दिया।

१४ शाबान को वे जरअफ़शा बाग से कूच कर गुजरात को चले और सुलतान बहादुर के सिर पर पहुँच गए। मनहसूर[१] में सामना हुआ और युद्ध होने पर सुलतान बहादुर को परस्त किया जो भागकर चपानेर[२] गया। अंत में बादशाह ने स्वय पीछा किया तब वह चपानेर छोड़कर अहमदाबाद की ओर गया।

बादशाह ने अहमदाबाद पर अधिकार कर लिया और कुल गुजरात को अपने आदमियों मे बाँट दिया मिर्जा अस्करी को अहमदाबाद, कासिम हुसेन सुलतान[३] को भड़ोच और यादगार नासिर मिर्जा[४] को पत्तन दिया।

---

(१) मनहसूर (मंदसूर) मालवा प्रांत के अंतर्गत है और यहीं के एक तालाब के तट पर युद्ध हुआ था। (इलिअट डाउसन जिल्द ५ पृ० १९१)

(२) सुलतान बहादुर मदसूर से दुर्ग मांडू गया जिसे हुमायूँ के ले लेने पर वह चंपानेर गया। वहाँ से खमात होता हुआ ड्यू गया था। (जौहर)।

(३) सुलतान हुसेन मिर्जा बैकरा की पुत्री आयशा सुलतान बेगम का पुत्र जो उजबेग जाति का था।

(४) बाबर के सौतेले भाई नासिर का पुत्र था जो उसकी मृत्यु के

स्वयं कुछ मनुष्यों के साथ सैर के लिए वे चंपानेर से खंभात[१] गए। कुछ दिन के अनंतर एक स्त्री[२] ने समाचार दिया कि क्या बैठे हैं[३], खंभाती इकट्ठे होकर आप पर आक्रमण करेंगे, आप सवार होइए। शाही अमीरों ने उस झुंड पर आक्रमण कर उन्हें परास्त किया और कुछ को मार डाला। इसके अनंतर वे बड़ौदा आए जहाँ से चंपानेर[४] गए।

अनंतर पैदा हुआ था। इसी से इसका यादगार नासिर नाम रखा गया। यह हुमायूँ का चचेरा भाई था।

(१) जागीर बाँटने के पहले ही यह सैर हुई थी। बहादुर के पीछा करने का जो क्रम गुलबदन बेगम ने दिया है वह तबकाते-अकबरी आदि ग्रंथों से मिलता है। हुमायूँ ने यही प्रथम बार समुद्र देखा था और स्यात् इसी कारण बेगम को भी यह वृत्तांत अधिक याद था।

(२) अबुलफजल 'वृद्धा' स्त्री लिखता है। तबकाते-अकबरी में लिखा है कि उसका पुत्र हुमायूँ के यहाँ कैद था और उसी के छुटकारा पाने की आशा से उसने पता दिया था।

(३) अबुलफजल लिखता है कि बहादुर के दो सर्दार मलिक अहमद और रुक दाऊद ने कोलीवाड़ा के पाँच छ सहस्र कोल और भीलों को बटोरकर आक्रमण किया था। इस आक्रमण से क्रोधित होकर हुमायूँ ने शत्रु के नगर खंभात को लूटा था।

(४) चार महीने के घेरे के अनंतर रात्रि में दुर्ग के एक ओर जहां वह बहुत ऊँचा और सीधा था लोहे के बड़े बड़े अस्सी नब्बे काँटे गाड़े गए और इन्हीं के सहारे ३०० सैनिक दुर्ग में घुस गए। इनमें ४० वाँ मनुष्य बैराम खाँ और इकतालीसवें स्वयं हुमायूँ थे। इस प्रकार की वीरता का अफीम ने नाश कर दिया। चंपानेर का अध्यक्ष इख्तार खाँ था और यह दुर्ग सन् १५३६ ई० (९४३ हि०) में लिया गया था।

बैठे हुए थे[१] कि गड़बड़ मचा और मिर्ज़ा अस्करी के मनुष्य जो अहमदाबाद में थे बादशाह के आगे आए। उन्होंने प्रार्थना की कि मिर्ज़ा अस्करी[२] और यादगार नासिर मिर्ज़ा एकमत होकर आगरे जाना चाहते है। जब बादशाह ने यह सुना तब आवश्यक समझ वे आगरे चले और गुजरात के कामों का कुछ विचार न कर कूच करते हुए आगरे आए। एक वर्ष तक[३] आगरे में रहे।

इसके अनंतर चुनार की ओर गए और उसे तथा बनारस को ले लिया[४]। शेरखा झारखड[५] मे था। उसने बादशाह की सेवा मे प्रार्थना कराई कि मै आपका पुराना दास हू और यदि सीमाबद्ध स्थान मिले तो वहाँ बास करू।

बादशाह इसी विचार मे थे कि गौड-बगाल का बादशाह[६] घायल हो

---

(१) हुमायूँ गुजरात में जागीर आदि बाँटकर माँडू लौट आया था और यहीं ठहरा था। यहाँ स्यात् उसने बेगम आदि को भी बुलवा लिया था।

(२) इस समय तक अस्करी अहमदाबाद ही में था और एक सर्दार हिंदूबेग ने उसे अपने नाम खुतबा पढ़वाने की सम्मति दी जिसे उसने नही माना। सुलतान बहादुर के फिर आक्रमण करने पर ये सब बिना युद्ध किए ही आगरे लौट चले।

(३) इस एक वर्ष में शेरखाँ ने बहुत बल बढ़ा लिया था। गुलबदन बेगम का इस समय की ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन अधिक महत्व का नही है।

(४) शेर खाँ का पुत्र कुतुबखाँ इस ओर का अध्यक्ष था।

(५) मूल में परकंदः लिखा है पर ठीक नाम झारखंड है जो छोटा नागपुर प्रांत में है।

(६) गंगाजी और सोन नदी के संगम पर मनीश्रा में सय्यद मदमूद शाह बंगालवाले ने आकर बादशाह से भेंट की थी।

भागकर बादशाह के आगे आया। बादशाह उस विचार को त्यागकर कूच करते हुए गौड़ बंगाल की ओर चले। शेरखाँ भी यह जानकर कि बादशाह गौड़[1]-बंगाल गए स्वयं भी अकेले फुर्ती से चलकर गौड़ पहुँचा और अपने पुत्र से जा मिला। उसका पुत्र और सेवक खवास खाँ गौड में थे। उसने खवास खाँ और अपने पुत्र[2] को भेजा कि जाकर गढ़ी[3] को दृढ़ करो। ये आए और गढ़ी पर अधिकार कर लिया। बादशाह ने जहाँगीर बेग को पहले ही लिखा था कि एक मंजिल आगे चलो। जब वह गढ़ी पर पहुँचा तब युद्ध हुआ जिसमें जहाँगीर बेग घायल हुआ और बहुत से मनुष्य मारे गए।

अंत में बादशाह खलगाँव मे तीन चार दिन तक रहे और तब यह उचित जान पड़ा कि कूच करके आगे बढ़ें और गढ़ी के पास उतरें। तब कूच करके आगे बढ गढी के पास जा उतरे। रात्रि में शेरखाँ[4] और खवासखाँ भागे और दूसरे दिन बादशाह गढी में गए। गढ़ी से आगे बढ़ गौड़-बंगाल गए और गौड़ लेलिया।

नौ मास तक वे गौड में रहे और उसका नाम जिन्नताबाद[5] रखा।

---

(१) शेरखाँ गौड़ मे ही था जिसे विजय कर वह शांति स्थापित करने में लगा हुआ था।

(२) शेरखाँ ने जलालखाँ नामक अपने पुत्र को गौड़ से भेजा था।

(३) बगाल और बिहार के बीच में एक दर्रा है जिसके एक ओर गंगाजी और दूसरी ओर पहाड़ है। इसका नाम तेलिया गढ़ी भी है।

(४) शेरखाँ नही उसका पुत्र जलालखां भागा था।

(५) गौड की जल-वायु हुमायूँ को इतनी अच्छी लगी कि उसने उस नगर का नाम जिन्नताबाद अर्थात् स्वर्ग का नगर रक्खा। यद्यपि साम्राज्य का चारो ओर नाश हो रहा था तिसपर भी हुमायूँ दूर देश में जाकर वहाँ महल में सुख करता रहा। तबकाते-अकबरी में लिखा है कि बादशाह वहाँ तीन मास रहे।

अभी गौड में सुख से थे कि समाचार पहुँचा कि अमीर गरा भागकर मिर्जा हिंदाल[1] से मिल गए।

खुसरू बेग,[2] जाहिद बेग[3] और सय्यद अमीर[4] मिर्जा ने आकर प्रार्थना की कि बादशाह दूर गये हैं और मुहम्मद सुलतान मिर्जा और उसके पुत्र उलुग मिर्जा और शाह मिर्जा ने फिर सिर उठाया[5] है और सर्वदा एक स्थान पर रहते है। ऐसे समय में शेखों का रक्षक शेख बहलोल[6] अस्त्र शस्त्र और युद्धीय सामान तहखाने मे छिपाकर

---

(१) इनकी अवस्था इस समय १९ वर्ष की थी और यह घटना सन् १५३८ ई० (९४५ हि०) में हुई। अवसर भी अच्छा था क्योंकि राजधानी और बादशाह के बीच में शेरखाँ डटा हुआ था।

(२) बाबर ने इसे सन् १५०७–८ ई० में हिरात से आया हुआ लिखा है। खुसरू कोकल्तास नाम के दो मनुष्य थे पर वे समसामयिक नही थे। सन् १५०२-३ ई० के लगभग एक की मृत्यु हो जाने पर दूसरे का अभ्युदय हुआ।

(३) हुमायूँ की स्त्री बेगा बेगम की बहिन का पति था। बंगाल का सूबेदार नियुक्त होने पर जब उसने बादशाह की इस नियुक्ति की आज्ञा को नही माना तब उसे प्राणदंड की आज्ञा मिली जिस पर इन दो सर्दारों के साथ भागकर वह हिंदाल के पास चला आया। सन् १५४७ ई० में कामरां ने इसे गजनी मे मरवा डाला।

(४) बाबर की पुत्री गुलरंग बेगम का पति और सलीमा सुलतान बेगम का पति सय्यद नूरुद्दीन मिर्जा यही था।

(५) हिंदाल ने इन्हें हालहो मे परास्त किया था। हिंदाल के विद्रोह के कारण आदि को पूरी तरह जानने के लिए अर्सकाईन का जौहर देखना चाहिए।

(६) शेख फूल भी नाम था। यह हुमायूँ का प्रियपात्र था। हुमायूँ ने उसे हिंदाल को विद्रोह से दूर रखने और समझाने के लिए भेजा था।

और छकड़ों में लादकर शेरखाँ और मिर्ज़ाओं को भेजता है। मिर्ज़ा हिंदाल ने विश्वास नहीं किया और अंत में इसे निश्चय करने के लिए मिर्ज़ा नूरुद्दीन मुहम्मद को भेजा अस्त्र शस्त्र पाए गए और शेख बहलोल मारा गया। जब यह समाचार बादशाह को मिला तब वे आगरे को चले। वे गंगाजी के उस किनारे से आते थे।

जब मुँगेर के बराबर पहुँचे तब अमीरों[1] ने प्रार्थना की कि आप बड़े बादशाह हैं, जिस रास्ते आए है उसीसे चलिए जिससे शेरखाँ यह न कहे कि अपने आने का रास्ता रहते ही दूसरे रास्ते गए। फिर बादशाह मुंगेर को चले और अधिकतर अपने आदमियों और परिवार को नाव पर साथ लिए हाजीपुर पटना तक पहुँचे।

जाते समय कासिम सुलतान वहाँ रह गए थे। उसी समय समाचार पहुँचा कि शेरखाँ आ पहुँचा है। हर एक युद्ध में शाही सेना विजयी रहती थी। इसी समय जौनपुर से बाबा बेग, चुनार से मीरक बेग और अवध से मुगल बेग आकर तीनों अमीर साथ हुए जिससे अन्न महँगा हो गया।

अत में ईश्वर की इच्छा ही ऐसी थी कि जब ये लोग निःशंक ठहरे हुए थे शेरखाँ ने पहुँच कर आक्रमण कर दिया। सेना परास्त हुई[2] और

षड्यन्त्रियों ने दोनों भाइयों में वैर बढ़ाने के लिए बात बनाकर उसे मार डाला था (अकबरनामा, जिल्द १ पृ० १८८)।

(१) मुवैयद बेग दुलदई बर्लास ने यह सम्मति दी थी। यद्यपि वह स्वयं क्रूर और अयोग्य था पर हुमायूँ का प्रियपात्र होने से उसकी यह बात मान ली गई, जो चौसा युद्ध में पराजय का एक कारण थी।

(२) गुलबदन बेगम ने यहाँ स्वभावतः बहुत ही संक्षेप में वृत्तांत दिया है। गंगा जी और सोन नदी के सगम के पास चौपट घाट पर २७ जून सन् १५३९ ई० (९ सफर सन् ९४६ हि०) को चौसा युद्ध हुआ था। हुमायूँ यहाँ से सीधा आगरे को गया था।

बहुत संबंधी और मनुष्य पकड़े गए। बादशाह के हाथ में भी घाव लगा। चुनार में तीन दिन ठहरकर वे आरेल आए। जब नदी के किनारे पहुँचे तब चकित हुए कि नाव बिना किस प्रकार पार उतरें। इसी समय राजा[१] ने पाँच छ सवारों के साथ आकर इनको एक उतार से पार किया। चार पाँच दिन से सैनिकगण बिना भोजन और मदिरा के थे। अंत में राजा ने बाजार लगवा दिया जिससे सेनावालों के कुछ दिन आराम से बीत गए और घोड़े भी ताजे हो गए। जो पैदल हो गए थे उन्होंने नया घोड़ा खरीद लिया। अर्थात् राजा ने अच्छी और योग्य सेवा की और दूसरे दिन बादशाह उसे बिदा कर स्वयं जमुनाजी के किनारे आराम से दोपहर के निमाज के समय पहुँच गए। एक स्थान पर उतार पाकर सेना पार हुई और कुछ दिन पर कड़ा पहुँची। यहाँ से अन्न मिलने लगा क्योंकि अब शाही देश था। सेना के आदमी संतुष्ट होने के उपरांत कालपी गए जहाँ से आगरे को चले। आगरे पहुँचने के पहले ही सुना कि शेरखाँ चौसा की ओर से आता है। आदमियों को बड़ी घबड़ाहट हुई।

उस (चौसा के युद्ध के उपरात) गड़बड़ में कितनों का कुछ भी पता नहीं लगा। उनमें सुलतान हुसेन मिर्जा की पुत्री आयशा सुलतान बेगम, बचका[२] जो सम्राट पिता की खलीफा थी, बेगा जान कोका, अकीकः बेगम[३], चाँदबीबी जिसे सात महीने का गर्भ था और शादबीबी थीं,

---

(१) राजा वीरभानु बघेला जिसने अपनी सेना के साथ हुँमायूँ के पीछा करनेवाले मीर फरीद गोर को भगा दिया था (जौहर)।

(२) बचका—बाबर के महल की खलीफा अर्थात् मुख्य दासी थी। सन् १५०१ ई० में बाबर के साथ यह समरकंद से बचकर निकली थी। यह इस युद्ध में बेपता हो गई।

(३) अकीकः बेगम–हुँमायूँ और बेगा बेगम की दूसरी संतान थी। आगरे में सन् १५३१ ई० में जन्म हुआ था। सन् १५३४ ई० में माता

जिनमें ये तीन[१] शाही हरम की थीं। इनमें से किसी का कुछ भी पता न लगा कि वे डूब गई या क्या हुई। बहुत खोज हुई पर कुछ भी पता नहीं चला।

ये (बादशाह) भी चालीस[२] दिन तक बीमार पड़े रहे जिसके अनंतर अच्छे हुए। इसी समय खुसरू बेग, दीवाना बेग, जाहिद बेग और सैयद अमीर को जो बादशाह के पहले ही आए थे मिर्जा मुहम्मद सुलतान और उसके पुत्रों की खबर मिली कि ये कन्नौज आए हैं।

शेख बहलोल के मारे जाने के अनंतर मिर्जा हिंदाल दिल्ली गए। मीर फ़क़अली और दूसरे भला चाहनेवालों को साथ लेकर मुहम्मद सुलतान मिर्जा और उसके पुत्रों का दमन करने गए। मिर्जे उस ओर से भागकर कन्नौज को आए। मीर फ़क़अली यादगार नासिर मिर्जा को दिल्ली में ले गया परंतु मिर्जा हिंदाल और मिर्जा यादगार नासिर में मेल मिलाप नहीं था। मीर फ़क़अली ने जब ऐसी कार्रवाई की तब मिर्जा हिंदाल ने क्रोध में आकर दिल्ली को घेर लिया।

मिर्जा कामराँ ने जब यह समाचार सुना तब इनको भी बादशाही की इच्छा पैदा हुई और वह बारह सहस्र सशस्त्र सवार साथ लेकर दिल्ली को चला। जब दिल्ली पहुँचा तब मीर फ़क़अली और मिर्जा यादगार नासिर ने

के साथ ग्वालिअर गई और मजलिस में थी। आठ वर्ष की अवस्था में चौसा में खो गई। केवल गुलबदन बेगम ने इसके बारे में इतना लिखा है।

(१) स्यात एक नाम छुट गया हो या दो के स्थान पर तीन लिख गया हो। अक़ीक़ः बेगम भी हुमायूँ की पुत्री होने के कारण शाही हरम या महल में गिनी जा सकती है।

(२) घाव और पराजय के शोक से कुछ दिन बीमार रहे। शोक का चालीस दिन लिख दिया है।

दिल्ली का फाटक बंद कर दिया। दो तीन दिन के अनंतर मीर फ़ुक़अली ने प्रतिज्ञा कराकर मिर्ज़ा कामराँ से भेंट की और प्रार्थना की कि बादशाह और शेरखाँ की ये दो बातें[1] सुनी गई हैं। मिर्ज़ा यादगार नासिर अपने स्वार्थ के कारण आपकी सेवा में नहीं आया। आपको यही चाहिए कि मिर्ज़ा हिंदाल को ऐसे समय पकड़कर आगरे जायँ और दिल्ली में बैठने का विचार न करें। मिर्ज़ा कामराँ ने मीर फ़ुक़अली की बात को पसंद करके उसे सरोपा देकर दिल्ली को बिदा किया और आप मिर्ज़ा हिंदाल को पकड़कर[2] आगरे आया और फ़िर्दौस-मकानी (के मकबरे) का दर्शन कर[3] और माता बहिनों से भेंटकर गुलअफ़शाँ बाग में उतरा।

इसी समय नूरबेग आया और समाचार लाया कि बादशाह आते हैं[4]। शेख बहलोल को मारने के कारण मिर्ज़ा हिंदाल जो छिपा हुआ था स्वयं अलवर[5] चला गया।

कुछ दिन के उपरांत मिर्ज़ा कामराँ ने गुलअफ़शाँ बाग से आकर बादशाह की सेवा की। जिस दिन बादशाह आए उसी रात्रि को हमलोगों ने जाकर भेंट की। इस तुच्छ को देखकर उन्होंने कहा कि हमने तुमको पहले इस लिए नहीं पहिचाना कि जब मैं विजयी[6] सेना को गौड़-बंगाला

---

(१) चौसा युद्ध के पराजय आदि की बातें।

(२) कामराँ के दिल्ली पहुँचने पर हिंदाल मिर्ज़ा आगरे गया पर जब मिर्ज़ा कामराँ वहाँ आया तब वह अपनी जागीर अलवर को चला गया (अकबरनामा)।

(३) अभी तक बाबर का शव काबुल नहीं गया था क्योंकि यह घटना सन् १५३९ ई० की है।

(४) चौसा युद्ध के अनंतर लौटकर।

(५) अपनी जागीर पर।

(६) चौसा युद्ध के बाद यह विशेषण अच्छा नहीं मालूम होता।

ले गया था तब तुम टोपी पहिरती थीं और अब घूंघुट को देखकर नहीं पहिचाना[1]। गुलबदन! हम तुमको बहुत याद करते थे और कभी दुखित हो कहते थे कि अच्छा होता जो साथ लाते पर जब गड़बड़ हुआ तब धन्यवाद करते और कहते थे कि परमेश्वर धन्य है कि गुलबदन को साथ नहीं लाए। यद्यपि अकीकः छोटी थी तिसपर भी सहस्र दुःख और शोक होता है कि मैं क्यों उसे सेना के साथ लाया।

कई दिन पर बादशाह माता से मिलने आए। उनके साथ कुरान था और उन्होंने आज्ञा दी कि एक साइत के लिए दासियाँ हट जायँ। वे हट गईं और एकांत हुआ। तब बादशाह ने आजम से, मुझसे, अफगानी आगाचः, गुलनार आगाचः, नाजगुल अगाचः और मेरी धाय से कहा कि हिंदाल मेरा बल और स्तम है यहाँ तक कि मेरी आँखों का तेज, भुजा का बल प्रेम और स्नेह का पात्र है। अच्छा हुआ। अपने शेख बहलोल को मारने के बारे में मैं मिर्जा हिंदाल से क्या कहूँ। जो कर्म में लिखा था सो हुआ। अब मेरे हृदय में कुछ भी हिंदाल की ओर से मालिन्य नहीं है और यदि सत्य न मानो[2]—। कुरान को उठाया ही था कि माता दिलदार बेगम और मैंने उसे उनके हाथ से ले लिया और सबने कहा कि ठीक है आप क्यों ऐसा कहते हैं? फिर कहा कि गुलबदन कैसा हो जो अपने भाई

---

(१) इस अदल बदल से ज्ञात होता है कि गुलबदन बेगम का इसी बीच में विवाह हो गया था क्योंकि अब वह सत्रह अठारह वर्ष की हो गई थी अविवाहित अवस्था में टोपी आदि पहिरने से पूरा मुख दिखलाता है पर विवाह होने पर लचक कसवा नामक किसी प्रकार का वस्त्र ओढ़ती थीं जिससे मुख कुछ छिप जाता था, नहीं तो हुमायूँ को पहिचानने में देर नहीं लगती।

(२) इस कथन से मालूम होता है कि हुमायूँ का गुलबदन बेगम, हिंदाल और शेख पर कितना प्रेम था।

मुहम्मद हिंदाल मिर्जा को तुम जाकर लिवा आओ। मेरी माता ने कहा कि यह लड़की अल्पवयस्क है इसने कभी (अकेले) यात्रा नहीं की है, यदि आज्ञा हो तो मैं जाऊँ। बादशाह ने कहा कि हम आप को कैसे कष्ट दें और यह स्वयं प्रकट है कि संतानों को क्षमा करना माता पिता के योग्य है। यदि आप जावें तो हम सब पर कृपा होगी।

अंत में उन्होंने मिर्जा हिंदाल को बुलवाने के लिए माता को अमीर अबुलबका के साथ भेजा। मिर्जा हिंदाल ने इस समाचार को सुनते ही स्वागत करके माता को प्रसन्न किया और साथ ही अलवर से आकर बादशाह की सेवा की। शेख बहलोल के बारे में कहा[1] कि शस्त्र और युद्धीय सामान शेरखाँ को भेजता था इससे जाँचकर मैंने शेख को मार डाला।

कुछ दिन के अनंतर समाचार आया कि शेरखाँ लखनऊ के पास पहुँच गया है। उस समय बादशाह का गुलाम एक मसकची था। चौसा के पास जब बादशाह नदी में घोड़े से जुदा हुए तब इसने अपने को पास पहुँचाकर और सहायता करके उन्हें भँवर से बचा लिया था। अंत में बादशाह ने उस मसकची को तख्त पर बैठाया और उसका ठीक नाम नहीं सुना गया, यद्यपि कुछ लोग उसे निजाम और कुछ सुंबुल कहते हैं। निदान बादशाह ने उस दास को तख्त पर बिठाया और आज्ञा दी कि सब अमीर उसे सलाम करें। दास ने हर एक को जो चाहा बाँटा और मंसब दिया। दो दिन तक उसे बादशाही दी। मिर्जा हिंदाल उस दरबार में नहीं थे। वे लड़ाई का सामान इकट्ठा करने अलवर लौट गए थे। मिर्जा कामराँ भी नहीं आए क्योंकि वे बीमार थे और उन्होंने कहला भेजा

---

(१) दरबार में जहाँ सभी शाहज़ादे और सर्दार एकत्रित थे हुमायूँ ने कामराँ से पूछा कि हिंदाल ने क्यों विद्रोह किया ? कामर ने वही प्रश्न हिंदाल से किया जिसने बड़ी लज्जा के साथ अपनी छोटी अवस्था, कुमंत्रों की राय आदि कारण बतला क्षमा मांगी (जौहर)।

कि गुलाम को और कुछ पुरस्कार देना चाहता था। क्या उसे तख्त पर बैठाना चाहिए था? ऐसे समय जब कि शेरखाँ पास पहुँचा है यह क्या काम आप करते हैं!

उन्हीं दिनों मिर्जा कामराँ का रोग ऐसा बढ़ गया और वे ऐसे निर्बल और दुबले हो गए थे कि उनका मुँह नहीं पहिचान पड़ता था और जीवन की आशा नहीं रह गई थी। ईश्वर की कृपा से कुछ अच्छे हुए। मिर्जा को सशय हो गया कि बादशाह की सम्मति से किसी माता[1] ने उन्हें विष दे दिया है। बादशाह ने भी इस बात को सुना। एक बार वे मिर्जा कामराँ को देखने आए और शपथ खाकर उन्होंने कहा कि कभी यह मेरे विचार में नहीं आया और न किसी से ऐसा कहा है। शपथ पर भी मिर्जा कामराँ का हृदय शुद्ध नही हुआ और रोग दिन पर दिन बिगड़ता गया यहाँ तक कि वे बोल नहीं सकते थे।

जब समाचार मिला कि शेरखाँ लखनऊ से आगे बढा है तब बादशाह कूँच कर कन्नौज को चले और आगरे में मिर्जा कामराँ[2] को अपने स्थान पर छोड़ गए। कुछ दिन पर मिर्जा कामराँ ने यह सुनकर कि बादशाह पुल बाँध गंगा जी पार हो गए आगरे से कूच कर दिया।

हम लोग लाहौर की ओर ठहरे हुए थे कि मिर्जा कामराँ ने बादशाही फर्मान भेजा कि तुम को[3] आज्ञा है कि मेरे साथ लाहौर जाओ। मिर्जा कामराँ ने[4] बादशाह से मेरे लिए कहा होगा कि मेरा रोग बहुत बड़ा है और मैं निर्बल, निस्सहाय और बिना सहानुभूति रखनेवाला हूँ। यदि

---

(१) बाबर की बिधवा स्त्रियों में से किसी एक ने।

(२) हुमायूँ कामराँ पर आगरा आदि की रक्षा का भार छोड़ गया था पर उसने कपट किया।

(३) गुलबदन बेगम को।

(४) जब दोनों भाई आगरे ही में थे।

गुलबदन बेगम को आज्ञा हो कि मेरे साथ लाहौर जायँ तो बड़ी कृपा और दया होगी। बादशाह ने उनके सामने कहा होगा कि जावें। जब बादशाह लखनऊ को दो तीन मंजिल बढे तब मिर्जा ने शाही फर्मान[1] दिखाया और कहा कि तुम मेरे साथ चलो। मेरी माता ने उसी समय[2] कहा होगा कि इसने हम लोगों से कभी अलग यात्रा नहीं की है। उन्होंने कहा कि यदि अकेले यात्रा नहीं की है तो आप भी साथ चलिए। उन्होंने पाँच सौ सैनिक, बड़े खोजे और अपने दोनों अनंगों और कोकों को भेजा कि यदि साथ न चलें तो एक मंजिल स्वयं आवें। अंत में उस मंजिल पर पहुँचने पर शपथ खाकर कहा कि मैं तुमको नहीं छोड़ूँगा।

अंत में बहुत रोने पीटने पर भी मैं माताओं, अपनी माता, बहिनों, पिता के मनुष्यों और भाइयों से बलात् अलग की गई जिसके साथ छोटी अवस्था से बड़ी हुई थी। इस प्रकार की बादशाही आज्ञा देखकर मैं चुप हो रही और बादशाह को प्रार्थनापत्र लिखा कि मैं बादशाह से ऐसी आशा नहीं रखती थी कि इस तुच्छ जीव को अपनी सेवा से दूर करके मिर्जा कामराँ को दे देंगे। इसके उत्तर में बादशाह ने सलामनामः भेजा जिसका आशय था कि मैं नहीं चाहता था[3] कि तुमको अलग करूँ पर जब मिर्जा ने बहुत हठ और विनय किया तब आवश्यक हुआ कि तुम्हें

---

(१) पूर्वोक्त फर्मान।

(२) फर्मान देखने के अनंतर की यह बातचीत दिलदार बेगम और कामराँ के बीच हुई थी जिसने आगरे से कूच करने के पहले यह बातचीत उठाई होगी। हुमायूँ ने प्रसन्नता से यह आज्ञा नहीं दी थी और इस बहाने का वह ऐसा कोरा उत्तर न देता।

(३) गुलबदन बेगम का पति खिज्र ख्वाजा खाँ कामराँ के दमाद आक सुलतान (यासीनदौलात्) का भाई था। गुलबदन के स्नेह के साथ उसके पति की सेना की भी उसे आवश्यकता थी।

मिर्जा को सौंपूँ क्योंकि अभी हम भी भारी काम में लगे[१] हुए हैं। ईश्वरेच्छा से जब यह काम निपटेगा तब पहले तुम्हें बुलवाऊँगा।

जब मिर्जा लाहौर चले तब अमीरों और व्यापारियों आदि में से बहुतों ने अपने स्त्री और बालबच्चों को मिर्जा कामरां के साथ लाहौर भेज दिया।

लाहौर पहुँचने पर समाचार आया कि गंगाजी के तट पर युद्ध हुआ और शाही सेना परास्त हुई[२]। इतना ही अच्छा हुआ कि बादशाह अपने भाइयों और आपसवालों के साथ उस घटना[३] से बचकर निकल गए।

दूसरे संबंधीगण जो आगरे में थे अलवर होते हुए लाहौर चले[४]। उस समय बादशाह ने मिर्जा हिंदाल से कहा कि प्रथम घटना[५] में अकीकः बीबी खो गई थीं जिससे बहुत दुखित हुआ था कि अपने सामने क्यों नहीं उसे मार डाला। अब भी स्त्रियों का ऐसे समय साथही रक्षा के स्थान पर पहुँचाना कठिन है। अंत में मिर्जा हिंदाल ने प्रार्थना की कि माता और

---

(१) शेरखाँ की शत्रुता जिसका अन्त कन्नौज युद्ध में होगया। इस प्रकार गुलबदन बेगम की कष्टमय यात्रा से रक्षा होगई।

(२) १७ मई सन् १५४० ई० को युद्ध हुआ। मिर्जा हैदर ने अपने तारीखेरशीदी में इस युद्ध का अच्छा वर्णन दिया है। दाहिना भाग मिर्जा हिंदाल के अधीन था जिसने शेरखाँ के पुत्र जलाल खाँ को परास्त कर दिया। बाईं ओर मिर्जा अस्करी को खवास खाँ ने पराजित किया और मध्य में स्वयं हुमायूँ के भी हार जाने पर इन्हें भी उनके साथ भागना पड़ा।

(३) चौसा युद्ध के समान इस युद्ध में भी हुमायूँ डूब चुके थे। यहाँ शमसुद्दीन मुहम्मद गजनवी ने बचाया था जिसकी स्त्री जीजी अनगः अकबर की धाय थी।

(४) मिर्जा हिंदाल की रक्षा में।

(५) चौसा युद्ध।

बहिनों को मारना कैसा पाप है सो आप पर प्रकट है पर जब तक प्राण है तब तक उनकी सेवा में परिश्रम करता हूं और आशा करता हूं कि ईश्वर की कृपा से माता और बहिन के पद में इस अपने तुच्छ प्राण को निछावर करूँगा।

अंत में बादशाह मिर्जा अस्करी, यादगार नासिर मिर्जा और अमीरगण जो युद्धस्थल से बच गए थे उनके साथ फतहपुर गए[1]।

मिर्जा हिंदाल अपनी माता दिलदार बेगम, बहिन गुलचेहरः बेगम अफगानी आगाचः, गुलनार आगाचः, नाजगुल आगाचः और अमीरों के स्त्री बालबच्चों को आगे करके ले चले कि गँवारों ने इनपर आक्रमण किया। इनके कुछ घुड़सवार सैनिकों ने आक्रमण कर उन्हें परास्त किया और एक तीर इनके अच्छे घोड़े को लगा बहुत मार काट हुई और गँवारों के कैद से निर्बलों को बचाकर अपनी माता और बहिन को तीस अमीरों और मनुष्यों के साथ आगे (लाहौर को) भेजकर वे अलवर आ पहुँचे।

कपड़े और तंबू आदि कुछ सामान जो आवश्यक थे साथ लेकर लाहौर चले। मिर्जाओं और अमीरों को भी जो चाहता था साथ लेकर वे थोड़े दिनों में लाहौर पहुँचे।

बादशाह ख्वाजः गाजी[2] के बाग में उतरे जो बीबी हाजताज[3]

---

(१) इनमें हैदर मिर्जा भी था जिसने लिखा है कि भागनेवाले बड़े उत्साहहीन थे और उनके हृदय टूट गए थे। बाबर के विजयस्थल फतहपुर ने इस दुःख को कुछ बढ़ाया ही होगा। बाबर के बनवाए हुए बाग में ही ये ठहरे थे।

(२) अबुलफजल लिखता है कि हिंदाल ख्वाजा गाजी के बाग में और हुमायूँ ख्वाजा दोस्त मुंशी के बाग में उतरे थे।

(३) मुहम्मद के दामाद अली के भाई आकिल की पुत्रियाँ—बीबी हाज, बीबी ताज, बीबी हूर, बीबी नूर, बीबी गौहर और बीबी शमबाज इमाम

के पास है। प्रतिदिन शेरखाँ का समाचार मिलता रहा। तीन महीने तक वे लाहौर में थे और प्रतिदिन पता लगता था कि शेरखाँ दो कोस तीन कोस आया यहाँ तक कि वह सरहिंद पहुँच गया।

बादशाह ने मुजफ्फर बेग तुर्कमान नामक अमीर को काजी अब्दुल्ला के साथ शेरखाँ के पास (यह कहलाने) भेजा कि क्या यह न्याय है। कुल देश हिंदुस्थान को तुम्हारे लिए छोड़ दिया है, एक लाहौर बचा है। हमारे और तुम्हारे मध्य में सीमा सरहिंद रहे। उस अन्यायी और ईश्वर से न डरनेवाले ने नहीं मानकर कहा कि काबुल तुम्हें छोड़ दिया है तुम्हें वहाँ जाना चाहिए।

मुजफ्फर बेग उसी समय चल दिया और एक मनुष्य भेजकर कहलाया कि कूच करना चाहिए। समाचार पहुँचते ही बादशाह चले। वह दिन मानों प्रलय का था कि सजे हुए स्थानों और सब सामानो को वैसेही छोड़ दिया पर सिक्का जो साथ था उसे जितना ले जा सके ले लिया। ईश्वर को धन्यवाद है कि लाहौर की नदी (रावी) का उतार मिल गया जिससे सब मनुष्य पार उतर गए और कुछ दिन तट पर ठहरे थे जब कि शेरखाँ का दूत आया। सबेरे भेंट करना निश्चित किया तब मिर्जा कामराँ ने प्रार्थना की कि कल मजलिस होगी और शेरखाँ का एलची आवेगा। यदि आपके

हुसेन के कर्बला में मारे जाने पर वहाँ से भारत भाग आईं और लाहौर के पास ठहरी। उन्होने नगर के कुछ लोगों को मुसलमान बनाया जिससे वहाँ के हिंदू अध्यक्ष ने क्रोधित होकर अपने पुत्र को उन्हें निकालने भेजा पर वह भी वहीं रह गया। तब अधिक क्रोधित होकर कुछ सैनिक साथ ले अध्यक्ष स्वयं उनपर गया पर उन स्त्रियों के प्रार्थना करने से पृथ्वी फट गई और वे उसी में समा गईं (खजीनतुलअसफिया जिल्द २, पृ० ४०७)।

गलीचे के कोने पर बैठूँ[1] तब मेरे और भाइयों के मध्य की विभिन्नता मेरी प्रतिष्ठा का कारण होगी।

हमीदा बानू बेगम[2] कहती हैं कि इस रुबाई को बादशाह ने लिखकर

---

(१) कामराँ दूत को यह दिखलाना चाहता था कि वह हिंदाल आदि के समान न होकर हुमायूँ की बराबरी का दावा रखता है। कामराँ के अधीनस्थ पंजाब में उस समय हुमायूँ था इससे वह उसके बराबर बैठने का विचार कर रहा था। कामराँ के कपट और धोखे का बहुत कुछ वृत्तांत इसी पुस्तक में आया है। इसी समय कामराँ को मारडालने की लोगों ने सम्मति दी थी पर हुमायूँ ने नहीं माना। बहुत कष्ट झेलने पर अंत में बादशाह को उसे अंधा करने की आज्ञा देनी पड़ी।

(२) हमीदा बानू बेगम—यह हुमायूँ की स्त्री और अकबर की माता थीं। इनके वंश का पूरा और ठीक वृत्तांत लिखने में कुछ कठिनाई है परंतु यह अहमद जामी जिंदःफील के वंश की थीं। इनके पिता का नाम शेख अली अकबर उपनाम मीर बाबा दोस्त था जो हिंदाल का शिक्षक था। इसके भाई का नाम ख्वाजा मुअज्जम था। ये दोनों भी हुमायूँ के साथ पारस गए थे। माहम बेगम भी अहमद जामी के ही वंश की थीं। शहाबुद्दीन अहमद नैशापुरी की स्त्री बानू बेगम से माहम अनगा से कुछ संबंध था और हमीदा बेगम से भी कुछ नातेदारी थी। बेगा (हाजी) बेगम भी अहमद जामी जिंदःफील के ही वंश में थी।

सन् १५४१ ई० के आरंभ में चौदहवें वर्ष की अवस्था में हमीदा बेगम का विवाह हुमायूँ के साथ पाटन में हुआ। सिंध में यह साथ रहीं जहाँ से अमरकोट तक रेगिस्तान की कड़ी यात्रा की। यहाँ १५ अक्तूबर सन् १५४२ ई० को अकबर का जन्म हुआ। दिसंबर में जूनगाँव गईं जहाँ से सन् १५४३ ई० में कंधार को चलीं, पर शाल मस्तान में पुत्र को छोड़ हुमायूँ के साथ फारस का रास्ता लिया। रास्ते में फारस के सूबेदारों ने

मिर्जा को भेजा था और मैंने सुना था कि शेरखाँ को उत्तर में लिखकर दूत के हाथ भेजा था[1]। रुबाई (का अर्थ) यह है कि—

बड़ा स्वागत किया। शाह तहमास्प और उसकी बहिन ने हमीदा बेगम के साथ अच्छा व्यवहार किया। सन् १५४४ ई० में सब्जवार कैंप में एक पुत्री उत्पन्न हुई। फारस की यात्रा का वृत्तांत गुलबदन बेगम ने इन्हीं से मालूम किया होगा। फारस से लौटने पर १५ नवंबर सन् १५४५ ई० को अपने पुत्र को देखा। इसी के बाद हुमायूँ ने माहचूचक बेगम से विवाह किया था। सन् १५४८ ई० में जब हुमायूँ तालिकान जा रहा था तब यह अकबर सहित गुलबिहार तक साथ गईं और वहाँ से काबुल लौट आईं। गुलबदन बेगम की वर्णित रिवाज की सैर यही मालूम होती है। नवंबर १५५४ ई० जब हुमायूँ ने भारत पर आक्रमण किया तब यह काबुल में रहीं।

बायजीद बियात लिखता है कि एक मकान उनके नौकर के लिए खाली नहीं करने के कारण वह खफगी में पड़ गया था। पर मुनइम खाँ के आनेकी आज्ञा का हाल कहकर उसने क्षमा माँग ली। निजामुद्दीन के दादा ख्वाजा मीरक को जो हमीदा बेगम का दीवान था अकबर के राजत्व के आरंभ में मिर्जा सुलेमान का पक्ष लेने के कारण मुनइमखाँ ने फाँसी दिलवा दी।

पति की मृत्यु के अनंतर सन् १५५७ ई० में गुलबदन बेगम आदि के साथ यह भारत आईं। पाँचवे वर्ष ये दिल्ली में थीं और बैराम खाँ के विरुद्ध इन्होंने भी सम्मति दी थी। यह गुलबदन बेगम के साथ ही उसके अंत तक रहीं। अबुलफजल लिखता है कि रोजा के पूरे होने पर अकबर के पास पहले पहल माँ की ही भेजी मांसादि की थालियाँ लाई जाती थीं।

सन् १६०४ ई० में लगभग सतहत्तर वर्ष की अवस्था में इनकी मृत्यु हुई।

(१) इस समय तक हमीदा बेगम का विवाह नहीं हुआ था पर

दर्पण में यद्यपि अपना स्वरूप दिखलाई पड़ता है, तिसपर भी वह अपने से भिन्न रहता है। अपने को दूसरे के समान देखना आश्चर्यजनक है, पर वह विचित्रता भी ईश्वरीय कार्य है।

शेरखाँ के दूत ने आकर कोर्निश की।

बादशाह का हृदय सुस्त हो गया जिससे निद्रा सी आ गई। उन्होंने स्वप्न में देखा कि सिर से पाँव तक हरा वस्त्र पहिरे हुए और हाथ में छड़ी लिए हुए एक पुरुष आए हैं जो कहते हैं कि धैर्य रखो शोक मत करो अपनी छड़ी बादशाह के हाथ में देकर उन्होंने कहा कि ईश्वर तुम्हें पुत्र देगा जिसका नाम जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर होगा। बादशाह ने पूछा कि आपका क्या नाम है? उत्तर दिया कि जिंदःफील[1] अहमद जाम। और भी कहा कि वह पुत्र मेरे वंश[2] से होगा।

उस समय बीबी गौनूर गर्भवती थीं और सब ने कहा कि पुत्र होगा। दोस्त मुंशी के उसी बाग में जमादीउल् अव्वल के महीने में पुत्री हुई जिसका नाम बख्शीबानू बेगम[3] रखा गया।

उन्होंने अपने पति से यह सुना होगा। गुलबदन बेगम उस समय लाहौर में ही थीं। और इन दोनों बातों में कौन ठीक है सो नहीं कहा जा सकता। गुलबदन बेगम ने दोनों सम्मतियाँ देकर उसका विचार पाठकों पर ही छोड़ दिया है और उनका इतना लिखना उनके उच्च विचार का नमूना है।

(१) भयानक हाथी।

(२) हुमायूँ की माता माहम बेगम उसी वंश की थीं जिससे हुमायूँ भी उसी वंश का हुआ पर इस भविष्यवाणी के अनुसार अकबर की माता को भी उसी वंश का होना चाहिए जो हमीदाबानू बेगम के साथ विवाह होने से पूर्ण हो गई।

(३) बख्शी बानू बेगम—इसकी माता गौनूर भी भविष्यवाणी के अनुसार अहमद जामी के ही वंश की रही होंगी। इसका जन्म सितंबर

इन्हीं दिनों बादशाह ने मिर्जा हैदर को काश्मीर पर अधिकार करने के लिए नियुक्त किया था। उसी समय समाचार आया कि शेरखाँ आ पहुँचा जिससे बड़ी घबड़ाहट मची और सबेरे कूच करना ठीक हुआ।

जिस समय सब भाई लाहौर में थे उस समय प्रतिदिन राय होती थी पर कुछ ठीक नहीं हुआ और अंत में शेरखाँ के आने का समाचार भी आ गया। दूसरा उपाय न रहने से जब कि एक पहर दिन चढ़ा था तभी कूच कर दिया और बादशाह की इच्छा काश्मीर जाने की थी इसी से मिर्जा हैदर काशगरी को (उस ओर) भेजा था। परंतु अभी काश्मीर-विजय का समाचार नहीं आया था और लोगों ने सम्मति दी कि यदि बादशाह काश्मीर गए और वह नहीं मिला और शेरखाँ लाहौर में आ पहुँचा तब बड़ी कठिनाई होगी।

ख्वाजा कला बेग[1] स्यालकोट में था जो बादशाह की सेवा करने चला। उसके साथ मुवैयद बेग था। जिसने प्रार्थना-पत्र भेजा कि ख्वाजः सेवा करने में आगा पीछा कर रहा है और यद्यपि आ रहा है पर मिर्जा कामराँ का स्यात् विचार रखता है। यदि बादशाह जल्दी से आवें तो

सन् १५४० ई० में हुआ था। सन् १५४३ ई० में अकबर के साथ यह भी मिर्जा अस्करी के द्वारा पकड़ी गई और सन् १५४५ ई० के जाड़े में साथ ही कंधार से काबुल भेजी गई। सन् १५५० ई० में इसका विवाह सुलेमान मिर्जा और हरम बेगम के पुत्र इब्राहीम के साथ हुआ जो छ वर्ष बड़ा था। सन् १५६० ई० में उसके मारे जाने पर यह विधवा हुई। तब उसी वर्ष अकबर ने मिर्जा शरफुद्दीन हुसेन अहरारी से विवाह कर दिया।

(१) बाबर का पुराना सर्दार जो उस समय कामराँ के अधीन था।

ख्वाजा की सेवा अच्छी प्रकार मिल जाय[1]। बादशाह इस समाचार को सुनकर उसी समय शस्त्र आदि धारण करके चले और ख्वाजा को साथ लिवा लाये।

बादशाह ने कहा कि भाइओं की सम्मति से हम बदख्शाँ जावेंगे और काबुल मिर्जा कामराँ के अधीन रहेगा। परंतु मिर्जा कामराँ (बादशाह) के काबुल जाने के बारे में सम्मत नहीं हुए[2] और कहा कि बाबर बादशाह ने अपने जीवन में मेरी माता (गुलरुख बेगम) को काबुल दिया था वहाँ जाना योग्य नहीं।

बादशाह ने कहा कि काबुल के बारे में बादशाह फिर्दौसमकानी बहुधा कहा करते थे कि हम काबुल किसी को नहीं देंगे यहाँ तक कि लड़के उसका लोभ भी नहीं करें क्योंकि ईश्वर ने कुल संतान हमें वहीं दी है और उसके अधिकार के अनतर बहुधा विजय ही प्राप्त हुई है। तिसपर उनके आत्मचरित्र मे यह बात कई बार लिखी है। मिर्जा के साथ इतनी कृपा और भ्रातरोचित व्यवहार से क्या हुआ जब वे ऐसा कहते हैं।

बादशाह जितनाही समझाते थे मिर्जा उतनाही अधिकतर असम्मति प्रकट करते थे। जब बादशाह ने देखा कि मिर्जा के पास सेना भी अधिक है और काबुल जाने में वह किसी प्रकार सम्मत नहीं है तब निरुपाय होने पर आवश्यक हुआ कि बक्खर और मुलतान जायँ। जब मुलतान पहुँचे तब एक दिन वहाँ ठहरे। अन्न बहुत कम हुआ था और जो कुछ दुर्ग में उत्पन्न हुआ था उसे मनुष्यों में बाँटकर बादशाह ने कूँच किया और नदी के तट पर पहुँचे जहाँ सात नदियाँ[3] मिलकर आई थीं। वे चकित रह

---

(१) मुवैयदा बेग जो बराबर कुसम्मति देता था उसने इस समय बड़ी भलमनसाहत दिखलाई।

(२) इस डर से कि वहाँ पहुँच कर हुमायूँ आगे नहीं बढ़ेगे।

(३) सतलज, व्यास, रावी, चिनाब, झेलम, सरस्वती (अब

गए कि नाव एक भी नहीं और साथ में कंप बहुत बड़ा है। इसी समय समाचार मिला कि खवास खाँ कुछ सर्दारों के साथ पीछे आ रहा है।

बख्शू नामक बिलूची के पास जिसके पास दुर्ग और बहुत मनुष्य थे एक मनुष्य को झंडा, नगाड़ा, घोड़ा और सरोपा के साथ बादशाह ने भेजा कि नावें और अन्न लावे। अंत में बख्शू ने एक सौ के आसपास नावें अन्न से भरी हुई बादशाह की सेवा में भेजीं। इस कार्य से बादशाह बड़े प्रसन्न हुए और अन्न को सैनिकों में बाँट कर नदी[1] के पार कुशलता से उतर गए। पूर्वोक्त बख्शू पर ईश्वर कृपा रखे कि उसने समयानुकूल कार्य्य किया।

अंत में चलते चलते बक्खर पहुँचे। दुर्ग बक्खर नदी के बीच में बना है और बड़ा दृढ़ है। उसका अध्यक्ष सुलतान महमूद[2] दुर्ग बंदकर बैठा था। बादशाह कुशलपूर्वक दुर्ग के बगल में उतरे। दुर्ग के पास ही मिर्ज़ा शाह हुसेन समंदर का बनवाया हुआ एक बाग[3] था।

अंत में बादशाह ने मीर समंदर[4] को शाह हुसेन मिर्ज़ा के यहाँ भेजा

अदृश्य) और सिंध नामक सात नदियों का जल यहाँ मिलकर बहता था। प्रथम पाँच नदियों के बहने से यह प्रांत पंजाब कहलाया।

(१) गारा नदी जो अच्छ के पास है।

(२) शाह हुसेन अर्गून का धाय-भाई था जिसके लिए सन् १५५५ ई० में सीदीअली रईस ने हुमायूँ से संधि की बातें तै की थीं।

(३) सिंध नदी के बाएँ तट पर रुहरी में यह चारबाग बहुत अच्छा बना हुआ है। सामने दूसरे तट पर बक्खर बसा है। हुमायूँ के पड़ाव डालने पर भी शाह हुसेन ने युद्ध की कोई तैयारी नहीं की।

(४) समदर का अर्थ नदी और एक जानवर है जो मूसे के आकार का पर उससे कुछ बड़ा होता है और आग में से निकलने पर मर जाता है। मीर समंदर का अर्थ नदियों का अध्यक्ष हैं।

कि आवश्यकता पड़ने से तुम्हारे देश में आए हैं तुम्हारा देश तुम्हीं को बना रहे हम अधिकार करना नहीं चाहते। अच्छा होता कि तुम स्वयं आकर भेंट करो और जैसा चाहिए वैसी सेवा करो क्योंकि हम गुजरात जाना चाहते हैं और तुम्हारा देश तुम्हें छोड़ते हैं। शाह हुसेन मिर्जा ने बहाने बहाने में पाँच महीने तक बादशाह को समंदर में रखा और उसके अनंतर बादशाह की सेवा में कहला भेजा कि अपनी पुत्री के विवाहोत्सव का सामान करके आपकी सेवा में भेजता हूँ और स्वयं भी आऊँगा।

बादशाह ने उसकी बात को सत्य माना। तीन मास और भी व्यतीत हो गया। अन्न कभी होता कभी नहीं होता था यहाँ तक कि सैनिकों ने घोड़ों और ऊँटों को मारकर खा डाला। तब बादशाह ने शेख अब्दुल गफूर [1] को भेजा कि पूछें कि किस लिये देरी हो रही है और आने में क्या रुकावट है? इसबार काम बिगड़ गया है और बहुत आदमी भाग रहे हैं। उसने उत्तर भेजा कि मेरी पुत्री[2] मिर्जा कामराँ से ब्याही है इसलिये हमसे मिलना कठिन है। हम तुम्हारी सेवा नहीं कर सकते।

इसी बीच मुहम्मद हिंदाल मिर्जा नदी पार हुए [3] तब कुछ मनुष्य

---

(१) हुमायूँ का कोषाध्यक्ष जिसका कार्यभार इस समय बहुत हलका रहा होगा।

(२) माह चूचक बेगम-शाहहुसेन अर्गून और माह चूचक अर्गून की पुत्री थी और अपने पिता की केवल यही एक संतान थी। सन् १५४६ ई० में कामराँ से विवाह हुआ। इसकी पतिभक्ति की सभी इतिहासों ने प्रशंसा की है। कामराँ के अंधे किए जाने पर यह साथ मक्का गई। ५ अक्तूबर सन् १५५७ ई० को उसकी मृत्यु तक उसकी सेवा करती रही। उसने केवल सात महीने तक वैधव्य भोग किया।

(३) मिर्जा हिंदाल सिंध नदी से दस कोस और सेहवन से बीस कोस पर पातर में ठहरे थे जो सर्कार सिविस्तान में हैदराबाद जानेवाली

कहने लगे कि वे कंधार जाते हैं। जब बादशाह ने सुना तब कुछ मनुष्यों को मिर्जा के पीछे भेजा कि जाकर पूछें कि सुना है कि इच्छा कंधार की रखते हो। जब मिर्जा से यह पूछा गया तब कहा कि झूठ है। बादशाह यह समाचार सुनते ही माता को देखने आए[१]।

मिर्जा के हरमों और मनुष्यों ने बादशाह की उसी मजलिस में सेवा की। हमीदा बानू बेगम को पूछा कि यह कौन है? कहा कि मीर बाबा दोस्त की पुत्री है। ख्वाजः मुअज्जम बादशाह के सामने खड़े थे। उन्होंने कहा कि यह लड़का हमारा नातेदार होगा और हमीदाबानू बेगम को कहा कि यह भी हमारी नातेदार होगी।

उस समय हमीदा बानू बेगम बहुधा मिर्जा के महल में रहती थीं। दूसरे दिन बादशाह फिर दिलदार बेगम को देखने आए और कहा कि मीर बाबा दोस्त मेरे अपने हैं। अच्छा हो कि उसकी पुत्री का हमसे विवाह कर दो। मिर्जा हिंदाल ने बिनती की कि मैं इस लडकी को बहिन और पुत्री की नाईं समझता हूँ, आप बादशाह हैं स्यात् प्रेम न स्थायी रहे तो दुःख का कारण[२] होगा।

सक्कर के कुछ पूर्व और सन् १८४३ ई० के नेपियर के विजयस्थल मिआनी के उत्तर में है। अब खडहर हो गया है।

(१) सेना को बक्खर का घेरा किए हुए छोड़कर यादगार नासिर के पड़ाव डार्बिला होते गए थे। गुलबदन बेगम यद्यपि काबुल में थी पर ऐसा वर्णन लिखा है मानों आँखोंदेखी बातें थीं।

(२) हुमायूँ के पास राज्य और कोष के नहीं होने पर कटाक्ष सा किया गया है जो आगे दानमेह की बात चलने से ठीक ज्ञात होता है। हमीदा बेगम की अनिच्छा से मालूम पड़ता है कि वह किसी और से प्रेम रखती थी या वह हुमायूँ को ही पसंद नहीं करती थी क्योंकि उस समय हमीदा बेगम की अवस्था चौदह वर्ष की और हुमायूँ की तेंतीस

बादशाह क्रुद्ध हो उठकर चले गए। इसके अनंतर माता ने एक पत्र लिखकर भेजा कि लड़की की माता का भी इससे पहले ही विचार था। आश्चर्य्य है कि आप थोड़े में ही क्रोधित हो चले गए। बादशाह ने उत्तर में लिख भेजा कि आपके इस कथन से हम बड़े प्रसन्न हुए, जो कुछ वे कहते हैं वह हमें मंजूर है और दानमेह्र को जो उन्होंने लिखा है वह ईश्वर की कृपा से इच्छानुसार ही होगा। हम आपका रास्ता देख रहे हैं। माता जाकर बादशाह को लिवा लाई उस दिन मजलिस थी। इसके अनतर वे अपने स्थान पर चले आए। दूसरे दिन बादशाह फिर आए और कहा कि आदमी भेजकर हमीदा बानू बेगम को बुलवाइए। माता ने आदमी भेजे पर हमीदा बानू बेगम नहीं आई और कहलाया कि यदि भेंट करने को बुलाया है तो उस दिन मैं स्वयं सेवा करके प्रतिष्ठित हो चुकी हूँ अब क्यों आऊँ?

बादशाह ने दूसरी बार सुभान कुली को भेजा कि मिर्जा हिंदाल से जाकर कहो कि बेगम को भेज दें। मिर्जा ने कहा कि मैंने बहुत कहा पर नही जातीं, तुम स्वयं जाकर कहो। सुभान कुली ने जाकर कहा तब बेगम ने उत्तर दिया कि बादशाहों से भेंट करना एक बार ही नीतियुक्त है दूसरी बार ठीक नहीं है, मैं नहीं जाऊँगी। सुभान कुली ने बेगम से यह बात सुनकर आकर कह दी। बादशाह ने कहा यदि अयोग्य है तो उसे योग्य बनाऊँगा।

वर्ष की थी तिसपर वह अफीमची और कई विवाह कर चुका था। जो कुछ कारण रहा हो पर यह अनिच्छा ऐसी दृढ़ थी कि हुमायूँ के फिर बादशाह होने, प्रसिद्ध अकबर की माता और इतने दिनों के सुख मिलने पर भी वह याद रही और लिखी गई। इस ग्रंथ के लिखने के समय गुलबदन बेगम और हमीदा बेगम दोनों की अवस्था साठ वर्ष से अधिक हो चुकी थी।

निदान चालीस दिन तक हमीदा बानू बेगम ने बहाना किया और नहीं माना। अंत में माता दिलदार बेगम ने समझाया कि किसी से विवाह करना ही होगा अच्छा होता कि बादशाह से होवे। बेगम ने कहा कि अवश्य ऐसे मनुष्य से विवाह होगा कि जिसकी गर्दन मेरा हाथ छू सके और न कि ऐसे जिसके कि दामन को भी मैं न छू सकूँ। माता ने उसे फिर बहुत समझाया।

अंत में चालीस दिन के अनंतर सन् ९४८ हि० के जमादिउल्अव्वल महीने में पातर स्थान में सोमवार को दोपहर के समय बादशाह ने इस्तरलाब ले लिया और अच्छे साइत में मीर अबुलबका को बुलाकर आज्ञा दी कि निकाह पढ़ाओ। दो लाख रुपिया मीर अबुलबका को विवाह कराई दिया गया। विवाहोपरांत वहाँ तीन दिन और रहे और तब कूच कर नाव से बक्खर चले।

एक महीना बक्खर में रहे तब मीर अबुलबका को सुलतान बक्खरी के वहाँ भेजा, जहाँ वह बीमार होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ[1]।

अंत में मिर्जा हिंदाल को कंधार जाने की छुट्टी[2] दी गई। मिर्जा यादगार नासिर को अपने स्थान लरे में छोड़कर वे स्वयं सेहवन[3] को

---

(१) जब मिर्जा यादगार नासिर ने कंधार जाने की इच्छा की तब हुमायूँ ने इसे समझाने को भेजा जब वह लौटते समय नदी के पार हो रहा था तब शाह हुसेन के सैनिकों ने नाव पर तीर चलाकर उसे मार डाला (तबकाते-अकबरी)।

(२) कंधार के सूबेदार कराचाखाँ के बुलाने पर सन् १५४१ ई० के अंत में हिंदाल वहाँ चला गया वह छुट्टी की बात गुलबदन के भ्रातृ स्नेह का नमूना है।

(३) हुमायूँ नावों से ठट्टा जा रहा था पर रास्ते में दुर्ग सेहवन से निकले हुए सैनिकों के एक झुंड पर इसके सैनिकों ने नावों से उतरकर

चले जहाँ से छ सात दिन के रास्ते पर ठट्टा है। वहां का दुर्ग बड़ा दृढ़ है और बादशाही नौकर मीर अलैकः[1] उसमें था। थोड़े तोपवाले ऐसे थे कि किसी का दुर्ग के पास आना कठिन था। कुछ शाही मनुष्यों ने मोर्चे बाँधकर और पास पहुँचकर उसको समझाया कि ऐसे समय विद्रोह करना ठीक नहीं है। मीर अलैकः ने नहीं माना तब खान लगाकर दुर्ग के एक बुर्ज को उड़ा दिया गया तिसपर भी दुर्ग को न ले सके। अन्न महँगा हो गय था इससे बहुधा आदमी भाग रहे थे। छ सात महीने वहाँ रहे और मिर्ज़ा शाह हुसेन विद्रोह करके चारों ओर से सैनिकों को पकड़वाकर अपने मनुष्यों को सौंपता कि ले जाकर समुद्र में डाल दो। तीन सौ चार सौ मनुष्यों को एकत्र कर नाव में बैठाकर समुद्र में छोड़ देते थे। इस प्रकार दस सहस्र मनुष्य समुद्र में फेंके गए।

इसके अनंतर जब बादशाह के पास भी थोड़े आदमी बच गए तब वह (शाह हुसेन) कुछ नावों में तोप बंदूक भरवाकर स्वयं ठट्टा से आया। सेहवन दुर्ग नदी के पास ही बना हुआ है। (मीर अलैकः) बादशाह की नावों को सामान सहित ले गया[2] और आदमी से कहला

आक्रमण किया और परास्त कर भगा दिया। उन सैनिकों ने दुर्ग लेना सहज बतलाकर घेरने की सम्मति दी जो मान ली गई (तबकाते-अकबरी)।

(१) मीर अलैकः अर्गून था और शाह हुसेन का अफसर था। एक समय सभी अर्गून बाबर के अधीन थे। हुमायूँ के आक्रमण पर शाह हुसेन ने उसे इस पद पर नियुक्त किया था और वह हुमायूँ के कंप में से होता हुआ दुर्ग में चला गया था।

(२) मिर्ज़ा यादगार नासिर को अपनी ओर मिलाकर शाह हुसेन ने उसे हुमायूँ की सहायता करने से रोका और सामान लानेवाली नावों को भी स्वयं अधिकृत कर लिया।

भेजा कि निमक का विचार करता हूँ, झट कूच करिए। बादशाह उपाय-हीन होकर बक्खर लौट गए।

जब बक्खर के पास आए और उसमें पहुँचने भी नहीं पाए थे कि उसके पहले ही मिर्जा हुसेन समंदर ने मिर्जा यादगार नासिर से कहला भेजा था कि यदि बादशाह लौटकर बक्खर[1] आवें तो मत आने देना क्योंकि वह तुम्हारा है। हम भी तुम्हारी ओर हैं और अपनी पुत्री को तुम्हें देंगे[2]। मिर्जा यादगार नासिर ने उसकी बात पर भरोसा करके बादशाह को बक्खर में नहीं आने दिया और चाहा कि धोखे या युद्ध का बर्त्ताव करे।

बादशाह ने दूत भेजा कि बाबा तुम हमारे पुत्र के समान हो और हम तुम्हें अपना प्रतिनिधि बनाकर गए थे कि यदि हमपर कुछ दुर्दिन आवेगा तो तुम सहायक होगे पर अब तुम अपने नौकरों की कुसम्मति से ऐसा बर्ताव कर रहे हो। ये निमकहराम नौकर तुमसे भी स्वामिभक्ति नहीं निबाहेंगे। बादशाह ने बहुत कुछ उपदेश कहला भेजा पर कुछ भी लाभ नहीं हुआ। अत में बादशाह ने कहलाया कि अच्छा हम राजा मालदेव[3] के पास जाते हैं और यह देश तुम्हें देते हैं पर शाह हुसेन तुम को भी यहाँ नहीं छोड़ेगा। हमारी बात याद रखना।

मिर्जा यादगार नासिर से यह बात कहलाकर जैसलमेर होते हुए वे

---

(१) मिर्जा रुहरी में था और उसका दुर्ग पर अधिकार नहीं था। अन्य वृत्तांत 'हुमायूँ और बाबर' जिल्द २ पृ० २२६ में देखिए।

(२) उसने लिखा कि हम वृद्ध हुए और पुत्र है नहीं; तुम्हें अपनी पुत्री से विवाह कर अपना कोष देंगे, उत्तराधिकारी बनावेंगे और गुजरात-विजय में सहायता देंगे (अकबरनामा जि० २, पृ० २१४)।

(३) यह मारवाड़ नरेश थे जिनकी राजधानी जोधपुर थी। यह राठौर-वंशीय थे।

मालदेव की ओर चले। कुछ दिन अनंतर राजा मालदेव के राज्य की सीमा पर के दुर्ग दिलावर (दिरावल) तक पहुँचे, जहाँ दो दिन ठहरे। दाना घास नहीं मिला तब वहाँ से जैसलमेर की ओर चले। जब जैसलमेर के पास पहुंचे तब वहां के राजा[1] ने रास्ता रोकने को सेना भेजी जिससे युद्ध हुआ। बादशाह कुछ मनुष्यों के साथ सड़क के एक ओर चले गए। इस युद्ध में कई मनुष्य घायल हुए जैसे शाहिमखाँ जलायर का भाई लोश बेग, पीर मुहम्मद अख्ता: और रोशंग तोशकची आदि[2]। अंत में विजय हुई और काफिर लोग भागकर दुर्ग में चले गए। बादशाह उस दिन साठ कोस चलकर एक तालाब पर उतरे। यहाँ से सालमेर गए। वहाँ के मनुष्यों ने उस दिन बहुत दुख दिया जब तक मालदेव के अधीनस्थ परगनः फालोदी[3] में पहुँचे। राजा मालदेव जोधपुर में थे। उसने एक कवच और एक ऊँट-बोझ अशर्फी बादशाह के पास भेजकर बहुत उत्साह दिया कि अच्छे आए, आपको बीकानेर देता हूँ। बादशाह सुचित होकर बैठ गए और अतगा खाँ (शमशुद्दीन मुहम्मद गजनवी) को मालदेव के पास भेजा कि क्या उत्तर[4] देता है!

भारत (उत्तरी) के उस पराजय और पराभव के समय मुल्ला सुर्ख पुस्तकाध्यक्ष ने मालदेव के राज्य में जाकर नौकरी कर ली थी। उसने पत्र भेजा कि खबरदार सहस्र बार खबरदार कभी आगे मत बढ़िए और जहाँ ठहरे हों वहाँ से कूच करिए क्योंकि मालदेव की इच्छा आपको पकड़ने की है। उसकी प्रतिज्ञा का विश्वास मत रखिए क्योंकि यहाँ शेरखाँ का

---

(१) अबुलफजल ने राय लूनकरण नाम लिखा है।

(२) निजामुद्दीन अहमद का पिता मुकीम हरवी भी इस युद्ध में था।

(३) जोधपुर से ३० कोस उत्तर और पश्चिम की ओर है।

(४) अर्थात् जो फर्मान भेजा था उसका क्या उत्तर मिलता है?

ऐक दूत पत्र ले कर आया था कि जिस प्रकार हो सके बादशाह को पकड़ लो और यदि यह कार्य करोगे तो नागौर, अलवर और जो स्थान चाहोगे तुम्हें देंगे। अतगा खाँ ने भी आकर कहा कि ठहरने का समय नहीं है। दूसरी निमाज के समय बादशाह ने वहाँ से कूच किया।

जिस समय बादशाह घोड़े पर चढ़ रहे थे उस समय दो जासूसों[1] को पकड़कर सामने लाए। दोनों से अभी प्रश्न हो रहा था कि एकाएक अपने हाथों को छुडा कर एक ने महमूद गुर्दबाज के कमर से तलवार खींचकर पहले उसीको घायल किया। इसके अनंतर अब्दुलबाकी ग्वालिअरी को मारा। दूसरा भी एक के मियान से छूरा खींचकर युद्ध को तैयार हुआ। कई मनुष्यों को घायल कर बादशाह के घोड़े को मार डाला। अर्थात् मारे जाने के पहले दोनों ने बहुत हानि पहुँचाई। उसी समय शोर मचा कि मालदेव आ पहुँचा। बादशाह के पास हमीदा बानू बेगम के सवारी के योग्य कोई घोड़ा नहीं था इस लिए तर्दी बेग से माँगा। स्यात् उसने नहीं दिया तब बादशाह ने कहा कि मेरे लिए जवाहिर[2] आफ्ताबची का ऊँट तैयार करो हम उस पर सवारी करेंगे और बेगम मेरे घोड़े पर सवार होंगी। जान पड़ता है कि नादिम बेग ने यह सुनकर कि बादशाह ने अपना घोड़ा बेगम की सवारी को नियुक्त किया है और स्वयं ऊँट पर चढ़ने का विचार करते हैं अपनी माता को ऊँट पर सवार कराके उसका घोड़ा बादशाह को भेंट में दे दिया।

बादशाह वहाँ से राह दिखलाने को एक मनुष्य साथ लेकर सवार हो अमरकोट चले। हवा बड़ी गर्म थी और घोड़े तथा चौपाए घुटनों तक बालू

---

(१) जौहर लिखता है कि दो ग्रामीण रास्ता दिखलाने के लिए पकड़े गए थे जिन्हों ने यह सब कार्य्य किया।

(२) लिखने में एक अलिफ अधिक होने से जवाहिर होगया है पर ठीक नाम जौहर है जिसने वाकिआते-हुमायूँनी लिखा है।

में धँसे जाते थे। सेना के पीछे मालदेव भी पास पहुँचे। फिर आगे बढ़े और भूखे प्यासे चलने लगे। बहुधा स्त्री और पुरुष पैदल ही थे।

जब मालदेव की सेना पास पहुँची तब बादशाह ने ईसनतैमूर सुलतान[१] मुनइम खां[२] और दूसरों को आज्ञा दी कि तुम लोग धीरे-धीरे आओ और शत्रु पर आँख रखो जिसमें हम लोग कुछ आगे बढ़ जावें। वे लोग ठहर गए[३]। बादशाह रात्रि भर चले। सवेरे जलाशय मिला। घोड़ों को तीन दिन से पानी नहीं मिला था। बादशाह वहीं उतरे थे कि मनुष्य दौड़ते हुए आए कि हिंदुओं की बहुत बड़ी घुड़सवार और ऊँटसवार सेना आ पहुँची।

बादशाह ने शेख अली बेग, रौशन कोका, नदीम कोका, मीरवली के भाई मीर पायंदः मुहम्मद और दूसरों को फातिहा पढ़वाकर भेजा कि जाकर काफिरों से युद्ध करें। बादशाह को प्रतीत हुआ कि इन लोगों से ईसन-तैमूर सुलतान, मुनइम खाँ, मिर्जा यादगार[४] आदि जिन्हें छोड़ आए थे मारे गए या काफिरों के हाथ पकड़े गए जिससे कि यह झुंड उनका अंत करके हम पर आया है। बादशाह फिर स्वयं सवार होकर कई मनुष्यों के साथ कंप छोड़कर आगे बढ़े। उस झुंड में से जिसे बादशाह ने फातिहा पढ़वाकर युद्धार्थ भेजा था शेख अली बेग ने राजपूतों के सर्दार को तीर मारकर गिरा दिया और दूसरों ने औरों पर तीर चलाया। काफिर भाग गए और विजय हुई। कई मनुष्यों को जीवित ही पकड़कर

---

(१) गुलचेहरः बेगम का पति था।

(२) अकबर के समय इसे खानखानाँ की पदवी मिली थी।

(३) जौहर लिखता है कि रसद बटोरने को ये भेजे गए थे जो राह भूल गए और रेगिस्तान में एक तालाब पर मिले थे।

(४) यह बेगा बेगम के पिता और हुमायूँ के मामा होंगे क्योंकि यादगार नासिर मिर्जा इस समय सिंध में थे।

लाए। कंप धीरे धीरे जा रहा था पर बादशाह दूर जा चुके थे। विजय कर वे मनुष्य कंप में आ मिले।

बेहबूद नामक एक चोबदार था जिसे बादशाह के पीछे दौड़ाकर (कहला) भेजा कि बादशाह धीरे धीरे जावें। ईश्वर की कृपा से विजय हुई और काफिर भाग गए। बेहबूद ने अपने को बादशाह के पास पहुँचा कर शुभ सूचना दी।[1] बादशाह उतर पड़े और थोड़ा जल[2] भी पैदा हुआ परन्तु वह इसी विचार में थे कि अमीरों को क्या हुआ? इतने में दूर से कुछ सवार दिखलाई पड़े। फिर डर हुआ कि कहीं मालदेव हो। मनुष्य भेजा कि समाचार लावे जो दौड़ता हुआ आया कि ईसन-तैमूर सुलतान, मिर्जा यादगार, मुनइमखाँ सब सही सलामत आते हैं जो रास्ता भूल गए थे। उन सब के पहुँचने पर[3] बादशाह प्रसन्न हुए और ईश्वर को धन्यवाद दिया।

सबेरे कूच किया। तीन दिन और जल नहीं मिला जिसके अनंतर कुँओं पर पहुँचे। वे कुएँ बहुत गहरे थे जिनपर उतरे थे। उन कुँओं का जल बहुत लाल था। एक कुएँ पर बादशाह, दूसरे पर तर्दीबेगखाँ, तीसरे पर मिर्जा यादगार, मुनइमखाँ और नदीम कोका और चौथे पर ईसन-तैमूर सुलतान, ख्वाजः गाजी और रौशन कोका ठहरे।

---

(१) शेख अली बेग ने दो शत्रुओं के सिर भी भेजे थे जो उसने हुमायूँ के पैरों के नीचे डाल दिए थे।

(२) वही तालाब जिसका जौहर ने जिक्र किया है।

(३) इसी समय मालदेव के दो दूत संदेश लाए कि बादशाह हमारे राज्य में बिना बुलाए चले आये और यह जानकर भी कि हिंदू राज्य में गाय नहीं मारी जाती कई गायों को मार डाला है। इन प्रांतों में घुस आए हैं और अब राजा के हाथ में है इससे अब वैसा फल पावें। (जौहर)।

हर एक डोल जब कुएँ के बाहर पास पहुँचता था तो मनुष्यगण उस डोल में अपने को गिरा देते थे जिससे रस्सी टूट जाती थी और पाँच छ मनुष्य उसी के साथ कुएँ में गिर पड़ते थे। बहुत से मनुष्य प्यास के मारे मर गए और नष्ट हो गए। जब बादशाह ने देखा कि मनुष्यगण प्यास के कारण कुएँ में गिर पड़ते हैं तब अपनी सुराही में से सबको पानी पिलाया। जब सब पेट भर पी चुके तब दोपहर की निमाज के समय बादशाह ने कूच किया।

एक दिन रात चलकर सराय में पहुँचे जहाँ बड़ा तालाब था। घोड़े और ऊँट तालाब में घुस गए। इन्होंने इतना पानी पिया कि उनमें से कितने मर गए। घोड़े कम रह गए पर खच्चर और ऊँट थे। यहाँ से अमरकोट[1] पहुँचने तक जल बराबर मिलता गया। यह स्थान बहुत अच्छा है और यहाँ बहुत से तालाब हैं। राणा[2] ने बादशाह के स्वागत को आकर और दुर्ग के भीतर लिवा जाकर उन्हें अच्छी जगह पर उतारा और अमीरों के आदमियों को दुर्ग के बाहर स्थान दिया।

बहुत सी वस्तुएँ यहाँ बड़ी सस्ती थीं। एक रुपए की चार बकरी मिलती थी। राणा ने बकरी के बच्चे आदि बहुत से भेंट में दिए और ऐसी सेवा की कि कौन जिह्वा उसका वर्णन कर सकती है। वहाँ कुछ दिन अच्छे प्रकार व्यतीत हुए।

इसके अनंतर कोष समाप्त हो जाने पर बादशाह ने तर्दी बेग खाँ से

---

(१) सिंध के रेगिस्तान में यह एक नगर और दुर्ग है जो हैदराबाद से ठीक बीस कोस पूर्व है। इतनी कष्टदायक यात्रा के बाद इन लोगों को और मुख्य कर अकबर की माता को यह स्थान स्वर्ग सा मालूम पड़ा होगा। २२ अगस्त सन् १५४२ ई० को ये लोग वहाँ पहुँचे।

(२) यहाँ के उस समय के राणा का नाम प्रसाद था (जौहर)।

सिक्का उधार माँगा। उसके पास बहुत सुवर्ण था। दस में दो[1] के हिसाब से उसने अस्सी हजार अशर्फी ऋण दी। बादशाह ने इसे कुल सेना में बाँट दिया। राणा और उसके पुत्रों को कमरबंद और सरोपा दिया। कई मनुष्योंने नए घोड़े खरीदे।

राणा के पिता को मिर्जा शाह हुसैन ने मारडाला था। इसी कारण उसने दो तीन सहस्र सवार इकट्ठे किए थे जिन्हें उसने बादशाह के साथ[2] कर दिया। बादशाह फिर बक्खर को चले और अमरकोट में थोड़े आदमी, संबंधी और घरवालों को छोड़ गए। हरम के रक्षार्थ ख्वाजः मुअज्जम को छोड़ा।

हमीदा बानू बेगम गर्भवती थीं। बादशाह को गए तीन दिन हुए थे कि चार रजब सन् ९४९ हि०[3] को रविवार के दिन सबेरे बादशाह आलमपनाह आलमगीर जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर गाजी का जन्म हुआ। चंद्रमा सिंह राशि में थे। अचल राशि में उत्पन्न होना बहुत अच्छा है और ज्योतिषियों ने भी कहा कि इस साइत में जो पुत्र होता है वह भाग्यवान और दीर्घ आयुवाला होता है। बादशाह पंदरह कोस गए थे कि तर्दी

---

(१) अर्थात् बीस सैकड़े काटकर अस्सी हजार देकर बादशाह पर एक लाख का ऋण चढ़ाया। जौहर लिखता है कि बादशाह ने सब सर्दारों को अपने पास बुलवाकर बैठा लिया और उनकी गठरियों को अपने विश्वासी नौकरों से खुलवा कर उनमें जो माल मिला उसे मँगवाकर आधा स्वयं ले लिया और आधा उनके स्वामियों को लौटा दिया।

(२) दो सहस्र अपने और पाँच सहस्र अपने मित्रों के सवारों को साथ भेजा था (जौहर)।

(३) १५ अक्तूबर, सन् १५४२ ई०। जौहर शाबान के पूर्णचंद्र की रात्रि को जन्म लिखता है।

मुहम्मद खाँ ने समाचार पहुँचाया। बादशाह बड़े प्रसन्न हुए[1] और इस वृत्तांत के खुशी और बधाई में उन्हीं मुहम्मद खाँ के पुराने अपराधों को क्षमा कर दिया।

लाहौर में जो स्वप्न देखा था उसीके अनुसार उन्होंने लड़के का नाम जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह रखा। वहाँ से कूच कर बक्खर को चले और इनके पास दस सहस्र मनुष्य इकट्ठे हो गए जिनमें राणा के, आसपास के, सूदमः (सोढ़ा) और समीचा जाति के मनुष्य थे। पर्गना जून में पहुँचे जहाँ मिर्ज़ा शाह हुसेन का एक दास[2] कुछ सवारों सहित था। वह भाग गया। वहाँ एक बहुत अच्छा आईना बाग था जहाँ बादशाह उतरे। वहाँ के गाँवों को उन्होंने अपने मनुष्यों में जागीर रूप में बाँट दिया। जून से ठट्टा छ दिन के रास्ते पर है। बादशाह उस स्थान में छ महीना[3] रहे और अमरकोट आदमी भेजकर वहाँ से हरमवालों और कुल मनुष्यों को बुलवा लिया। उस समय जब जून में आए तब जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह की अवस्था छ महीने[4] की थी।

---

(१) इसी समय बादशाह ने सरदारों में कस्तूरी बाँटी थी।

(२) जानी बेग जो पहले अमरकोट का सूबेदार रह चुका था। और प्रसिद्ध कज्जाक था बहुत से सवारों सहित युद्धार्थ तैयार था। राणा के आठ सवारों और मुगलों ने आक्रमण कर उसे भगा दिया था। (जौहर)।

(३) दूसरे लेखकों ने नौ महीना लिखा है।

(४) जौहर लिखता है कि २० रमजान को जिस दिन बादशाह ने अकबर को गोद लिया था उस दिन उसकी अवस्था ३५ दिन की थी। इससे जान पड़ता है कि हमीदा और अकबर पीछे आते थे।

जो झुंड हरमवालों के साथ इधर उधर से आया था बँट गया। राणा[1] और तर्दी मुहम्मदखाँ[2] के बीच कहा सुनी होने के कारण जो मन मुटाव होगया था उससे वह अर्द्धरात्रि को कूच कर अपने देश को लौट गया। खूदमः और समीचा भी उसी के साथ चले गए। बादशाह अपने साथवालों के सहित बच गए।

बादशाह ने शेख अली बेग को जो वीर पुरुष था मुजफ्फर बेग तुर्कमान के साथ जाज्का नामक बड़े परगने की ओर भेजा था। मिर्जा शाह हुसेन ने उस पर कुछ सेना भेजी और दोनों में बड़ा युद्ध हुआ। अंत में मुजफ्फर बेग परास्त होकर भागा और शेख अली बेग बहुतों के साथ मारा जाकर नष्ट हो गया।

खालिद बेग[3] और शाहिम खां जलायर के भाई लौश बेग के बीच में कहा सुनी होगई जिसमें बादशाह ने लौश बेग का पक्ष लिया। इस कारण खालिद बेग अपने आदमियों सहित भागकर मिर्जा शाह हुसेन के पास चला गया। बादशाह ने उसकी माता सुलतानम को कारागार में सौंप दिया। इससे गुलबर्ग बेगम दुखित हुई, तब अंत में उसके दोष को क्षमा करके उनके साथ मक्का बिदा किया। कुछ ही दिन के अनन्तर लौश बेग भी भाग गया जिस पर बादशाह ने उसे श्राप दिया कि हमने उसके लिए खालिद बेग से कड़ा बर्ताव किया जिस कारण वह स्वामि भक्ति त्याग कर

---

(१) शाह हुसेन ने दूत के हाथ खिलअत आदि राणा के पास भेजकर कहलाया कि बादशाह का साथ छोड़ दे परंतु उसने वह सब बादशाह के सामने लेजाकर रख दिया जो आज्ञानुसार कुरो को पहिराकर लौटा दिया गया (जौहर)।

(२) जौहर ख्वाजा गाजी से झगड़ा होना बतलाता है।

(३) निजामुद्दीनअली खलीफा बर्लास और सुलतानम का पुत्र था जिसकी गुलबर्ग बेगम सहोदरा बहिन या सौतेली बहिन रही होगी।

स्वामिद्रोही होगया। अंत में ऐसा ही हुआ कि पंदरह दिन के अनंतर जब वह नाव में सोया हुआ था उस समय उसके दास ने छूरे से उसे मार डाला[१]। यह सुनने पर बादशाह दुखित और विचारयुक्त हुए।

शाह हुसेन नदी से बहुत सी नावें ज़ून के पास ले आया था और स्थल पर बहुधा दोनों ओर के सैनिकों में युद्ध होता रहता था जिससे दोनों ओर के सैनिक मारे जाते थे। प्रतिदिन बादशाही सैनिकगण भागकर शाह हुसेन से जाकर मिल रहे थे। इन्हीं में से एक लड़ाई में मुल्ला ताजुद्दीन मारा गया। जिसे विद्या रूपी मोती समझकर बादशाह बड़ी कृपा दिखाते थे।

तर्दी मुहम्मद खाँ और मुनइम खाँ के बीच कहा सुनी हुई जिससे मुनइम खा भी भाग गया। थोड़े अमीर बच गए जिनमें तर्दी मुहम्मद खाँ मिर्ज़ा यादगार, मिर्ज़ा पायंदा मुहम्मद, महम्मद वली, नदीम कोका, रोशन कोका, खदंग एशक आगा[२] और कई दूसरे भी बादशाह की सेवा में रह गए थे। इसी समय समाचार आया कि बैराम खाँ गुजरात से आता है और पर्गना जाक्का (हजकान) में पहुँच गया है। बादशाह प्रसन्न हुए और खदंग एशक आगा को कई मनुष्यों के साथ स्वागतार्थ भेजा।

इसी समय शाह हुसेन ने सुना कि बैराम खाँ आता है तब कई मनुष्यों को भेजा कि बैराम खाँ को पकड़ लेवें। ये लोग निशंक एक स्थान पर उतरे थे कि वे आ टूटे। खदंग एशक आगा मारा गया और बैराम

---

(१) शाह हुसेन ने उसे एक दास भेंट में दिया था जिसकी नाक किसी दोष पर ख़्वाजा या तर्दी बेग ने काट ली। इसके तीन दिन बाद दास ने इसे मारकर बदला चुकाया (जौहर)।

(२) स्यात् मेवा जान का पिता खदंग चोबदार था। बैराम खाँ १२ अप्रैल सन् १५४३ ई० (मुहर्रम ७, सन् ९५० हि०) को आया था।

खाँ कई मनुष्यों के साथ बचकर बादशाह की सेवा में आ सम्मानित हुआ।

इसी समय कराचःखाँ के प्रार्थना-पत्र बादशाह और मिर्जा हिंदाल के नाम आए कि बहुत समय हुआ कि आप बक्खर के पास ठहरे हुए हैं और उस समय में शाह हुसेन मिर्जा ने राजभक्ति न दिखलाकर द्रोह ही किया। इधर ईश्वरी कृपा से मार्ग साफ है और यह अच्छा होगा यदि बादशाह कुशलपूर्वक यहाँ चले आवें। अच्छी और ठीक सम्मति यही है और यदि बादशाह न आवें तो तुम अवश्य चले आओ। बादशाह ने देरी कर दी थी इससे उसने मिर्जा हिंदाल का स्वागत करके कंधार उसे भेंट कर दिया (सन् १५४१ ई० के जाड़े के आरंभ में)।

मिर्जा अस्करी गजनी में थे जिन्हें मिर्जा कामराँ ने पत्र भेजा कि कराचः खाँ ने कंधार मिर्जा हिंदाल को दे दिया जिस का उपाय करना आवश्यक है। मिर्जा कामराँ इस विचार में थे कि कंधार मिर्जा हिंदाल से ले लेवें[1]।

इसी समय बादशाह इन समाचारों को सुनकर अपनी बूआ खानजादः बेगम[2] के पास गए और बहुत कहा कि मुझ पर कृपा करके आप कंधार

---

(१) पहले की हुई घटना का यहाँ आवश्यकता पड़ आने से ध्यान आगया है जिससे उसका वर्णन कर दिया है।

(२) इससे मालूम होता है कि यह भी हुमायूँ के साथ सिंध में थीं। किसी और इतिहासकार ने इनके भेजे जाने आदि का कुछ जिक्र नहीं किया है। वह हिंदाल के साथही कंधार से काबुल गई होंगी जब कि हिंदाल ने कंधार मिर्जा कामराँ को सौंप दिया था। इनके पति महदी ख्वाजा का बाबर की मृत्यु के बाद खलीफा की तरह कहीं भी नाम नहीं आया है। अबुलफजल ने उसके मकबरे का जिक्र किया है।

जावें और मिर्जा कामरॉं और मिर्ज़ा हिंदाल को समझावें कि उजबेग और तुर्कमान तुम लोगों के पास ही है, तब ऐसे समय में हमारे और तुम लोगों के बीच में मित्रता ही ठीक है। मिर्जा कामरॉं को जो कुछ हमने लिखा है यदि वह वैसा करना मान ले तब जो कुछ वह चाहते हैं हम वैसाही करेंगे।

बेगम के कंधार पहुँचने के चार दिन पीछे मिर्जा कामरॉं भी पहुँचे और प्रतिदिन कहते कि खुतबा मेरे नाम पढ़ा जावे। मिर्जा हिंदाल का कथन था कि खुतबा बदलने का क्या अर्थ है? बाबर बादशाह ने अपने जीवन ही में हुमायूँ बादशाह को बादशाही देदी थी, अपना युवराज भी बनाया था, हम लोगों ने भी यह मान लिया था और अब तक उन्हींके नाम खुतबा बदलने की कोई राह नहीं है[1]। मिर्जा कामरॉं ने दिल्दार बेगम[2] को पत्र लिखा कि हम काबुल से आपको याद करके आए हैं पर आश्चर्य्य है कि आप को आए हुए इतने दिन हो गए पर हमसे आपने भेंट नहीं की। जैसे आप मिर्जा हिंदाल की माता हैं उसी प्रकार हमारी भी माता हैं। अंत में दिल्दार बेगम उनसे मिलने आईं। मिर्जा कामरॉं ने कहा कि मै अब तुमको नहीं छोड़ूंगा जब तक तुम मिर्जा हिंदाल को नहीं बुलाओगी। दिल्दार बेगम ने कहा कि खानजादः बेगम तुम्हारी पूज्य हैं और हम तुम सबसे बड़ी हैं इससे खुतबा के बारे में उन्हींसे पूछो। अंत में आकः से कहा। खानजादः बेगम ने उत्तर दिया कि यदि हमसे पूछते हो तब जिस प्रकार बादशाह बाबर ने निश्चित किया है, हुमायूँ बादशाह को बादशाही दी है और अब तक तुम लोगों ने भी जिसके

---

(१) दिल्ली में हिंदाल ने अपने नाम खुतबा पढ़वाने में इतना तर्क किया होगा या नहीं इसमें भी संदेह है पर उस घटना को गुलबदन बेगम, कामरॉं आदि सभी भूल गए से मालूम होते हैं।

(२) यह भी पुत्र के साथ कंधार में रही होंगी।

नाम खुतबा पढ़ा है उसी को अब भी बड़ा समझकर आज्ञा मानते रहो।

फल यही हुआ कि मिर्ज़ा कामराँ चार महीने तक कंधार को घेरे रहे और खुतबे के लिए तर्क करते रहे। अंत में निश्चित हुआ कि अच्छा अभी बादशाह दूर हैं खुतबा मेरे नाम पढ़ो जब वे आवेंगे तो उनके नाम पढ़ना। घेरा डाले बहुत दिन हो गए थे और मनुष्य बहुत संकट में थे इससे आवश्यक हुआ कि खुतबा पढ़ा जाय।

मिर्ज़ा कामराँ ने कंधार मिर्ज़ा अस्करी को दिया और मिर्ज़ा हिंदाल से गजनी देने की प्रतिज्ञा की[१]। पर जब गजनी आए तब लमगानात और दर्रों को मिर्ज़ा हिंदाल को दिया। इस प्रकार प्रतिज्ञाएँ झूठी होने से मिर्ज़ा हिंदाल बदख्शाँ जाकर खोस्त और अंदर-आब में ठहरे। मिर्ज़ा कामराँ ने दिल्दार बेगम से कहा कि तुम जाकर लिवा लाओ। जब दिल्दार बेगम पहुँची तब मिर्ज़ा हिंदाल ने उत्तर दिया कि मैंने अपने को युद्ध की झंझट से हटा लिया और खोस्त भी एकांत स्थान है इससे यहाँ बैठा हूँ। बेगम ने कहा कि यदि फकीरी और एकांतवास की इच्छा है तब काबुल भी एकांत स्थान है वहीं स्त्री पुत्रादि के साथ रहो, वही अच्छा है। अंत में बेगम मिर्ज़ा को बलपूर्वक ले आईं और काबुल में बहुत दिनों तक वह फकीरों की चाल पर रहे।

अब मिर्ज़ा शाह हुसेन ने बादशाह के पास आदमी भेजा कि आपको उचित है कि यहाँ से कूच करके कंधार जावें। बादशाह ने इस बात को मान लिया और उत्तर भेजा कि हमारे कम में घोड़े ऊँट कम बच गए और यदि तुम घोड़े और ऊँट हमें दो तो हम कंधार जावें। मिर्ज़ा शाह

---

(१) मुंतखबुत्तवारीख में लिखा है कि मिर्ज़ा हिंदाल को गजनी देकर लौटा लिया जिसे मिस्टर अर्सकिन अशुद्ध बतलाते हैं पर गुलबदन बेगम अब्दुलकादिर बदायूनी का समर्थन करती हैं।

हुसेन ने मान लिया और कहलाया कि जब तुम नदी पार हो जाओगे तब एक सहस्र ऊँट[1] जो उस पार हैं सब तुम्हारे पास भेज देंगे।

बक्खर और सिंध के रास्ते में ख्वाजा केसक के बारे में जो ख्वाजा गाजी का नातेदार था जो कुछ बातें लिखी गई हैं वह उसी ख्वाजा केसक के लेख की नकल है।

अंत में बादशाह स्त्री, पुत्र, सैनिक आदि के साथ नावों पर सवार हुए[2] और तीन दिन तक नदी पर यात्रा की। उसके राज्य की सीमा के पार नवासी नामक गाँव था जहाँ वे उतरे और सुलतान कुली नामक मुख्य ऊँटवान को भेजा कि ऊँटों को लावे। सुलतान कुली जाकर एक सहस्र ऊँट ले आया। बादशाह ने कुल ऊँटों को सर्दारों, सैनिकों और दूसरों को दे दिया। ये ऊँट ऐसे थे कि मानों इन सबों ने सात पीढ़ी क्या सत्तर पीढ़ी से भी कभी नगर, मनुष्य या बोझ नहीं देखा था। सेना में घोड़ों की कमी थी इससे बहुत से ऊँटों पर सवार हुए और बचे हुए ऊँट बोझ ढोने पर नियुक्त हुए। जहाँ उन ऊँटों पर कोई सवार होता कि वे चट सवार को गिराकर जंगल का रास्ता लेते। बोझ ढोनेवाले ऊँट जिन पर बोझ लादा जा चुका था घोड़े की टापों का शब्द सुनते ही कूदकर बोझ को

---

(१) तबकात अकबरी में लिखा है कि तीस नाव और तीन सौ ऊँट दिया था। जौहर लिखता है कि शाह हुसेन ने कहलाया था कि रतो या रनी गांव में तीन सौ ऊँट और दो सहस्र अन्न का बोझ मिलेगा जहाँ से कधार तक फिर अन्न-कष्ट नहीं होगा। गुलबदन बेगम ने गांव का नाम नवासी लिखा है।

(२) बादशाह के जाने के अनंतर यादगार नासिर को जो शाह हुसेन की चिकनी चिकनी बातों मे मग्न बैठा हुआ था पूरा दंड मिला। शाह हुसेन ने उससे प्रत्येक ऊँट के लिए और प्रत्येक घोड़े के लिये पांच शाहरुखी लेकर उसे अपने राज्य के बाहर निकाल दिया।

लिया देते और स्वयं जंगल को चल देते थे और फिर पर दृढ़ता के साथ बोझ बँधा होता था वे कितनाही कूदते पर जब वह नहीं गिरता था तब उसे लिए हो जंगल को भाग जाते थे[१]।

इस प्रकार जब कधार को चले तब तक दो सौ ऊँट भाग गए थे। जब सीवी के पास पहुँचे जहाँ शाह हुसेन मिर्जा का मुख्य ऊँटवान महमूद था तब वह दुर्ग को दृढ़ कर उसमें जा बैठा। बादशाह सीवी से छ कोस पर उतरे। उसी समय समाचार मिला कि मीर अलादोस्त और बाबा जूजुक[२] काबुल से दो दिन हुए कि सीवी आए हुए हैं और शाह हुसेन मिर्जा के यहाँ जावेंगे। मिर्जा कामराँ ने सिरोपा, अच्छे घोड़े और बहुत से मेवे मिर्जा शाह हुसेन के लिए भेजे हैं और अपने लिए उसकी पुत्री माँगी है।

बादशाह ने ख्वाजा गाजी से स्वयं कहा कि तुम्हारे और अलादोस्त के बीच पिता और पुत्र के समान[३] सबंध है इससे पत्र लिखकर पूछो कि मिर्जा कामराँ का हमारी ओर कैसा विचार है और यदि हम वहाँ जायँ तो वह कैसा बर्त्ताव करेगा। बादशाह ने ख्वाजा केसक को आज्ञा दी कि सीवी जाकर मीर अलादोस्त से कहो कि यदि आकर हमसे भेंट करे तो अच्छा है। पूर्वोक्त ख्वाजा केसक जब सीवी को चले तब बादशाह ने कहा कि तुम्हारे आने तक हम कूच नहीं करेंगे।

---

(१) ऊँटों का ऐसा अच्छा वर्णन किसी इतिहासकार से नहीं किया है।

(२) यह फकीरी नाम है जिसका तुर्की भाषा में 'मिठास लिए हुए' अर्थ है। अबुलफजल ने अलादोस्त के साथी का नाम शेख अब्दुल्-वहाव लिखा है जो ओजपूर्वक वक्तृता देने के लिये प्रसिद्ध था इससे स्यात् उसीका यह नाम पड़ा हो।

(३) संभवतः यह संबंध गुरु शिष्य का रहा होगा।

वह ज्यों सीवी के पास पहुँचा कि मुख्य ऊँटथान महमूद ने उसको पकड़कर पूछा कि किस लिये आए हो ? उसने उत्तर दिया कि ऊँट और घोड़ा क्रय करने के लिये । (महमूद ने) कहा कि इसके बगल और टोपी में ढूँढ़ो कि कहीं अलादोस्त और बाबा जूजुक की मिलाने के लिये पत्र न लाया हो ।

ढूँढ़ने पर उसके बगल में से पत्र निकला क्योंकि उसे समय नहीं मिला कि उसे कोने में डाल दे । उसे लेकर पढ़ा और उसको न छोड़कर उसी समय अलादोस्त और बाबा जूजुक को दुर्ग के भीतर लिवा आकर उन्हें बहुत धमकाया । उन सब ने शपथ खाई कि हमें इसका आना विदित नहीं था और यह मेरे यहाँ पढ़ चुका है । ख्वाजः गाजी[1] का हमसे संबंध है और वह मिर्जा कामराँ के यहाँ था इसी कारण उसने पत्र लिखा है । महमूद ने निश्चय किया कि कैसक को कुछ मनुष्यों के साथ शाह हुसैन के पास भेज दें । मीर अलादोस्त और बाबा जूजुक रात्रि भर महमूद के पास रहे और समझा बुझा कर तथा विनती कर उसे छुड़वा दिया ।

तीन सहस्र[2] अनार और सौ बिही मीर अलादोस्त ने बादशाह के लिये भेजी और पत्र इसलिए नहीं लिखा कि स्यात् किसी के हाथ पड़ जाय । परन्तु इतना कहला भेजा कि यदि मिर्जा अस्करी या अमीरगण पत्र भेजें तो काबुल जाना बुरा नहीं है और यदि न भेजें तो काबुल जाना

---

(१) जब तक कामराँ लाहौर में था उस समय तक यह उसका दीवान रहा और जब वह काबुल की ओर और हुमायूँ सिंध को चले तब यह बादशाह के साथ होगया ।

(२) सीसद के स्थान पर सिसद अधिक संभव मालूम होता है जिसका अर्थ तीन सौ होगा ।

ठीक नहीं है क्योंकि बादशाह स्वयं समझें कि उनके पास सेना कम है अंत में क्या होगा। केसक ने आकर सब कहा[१]।

बादशाह आश्चर्य और विचार में पड़ गए कि क्या करें और कहाँ जाँय। सम्मति लेने लगे। तर्दीमुहम्मद खाँ और बैरामखाँ ने सम्मति दी कि उत्तर और शाल मस्तान को छोड़ जो कंधार की सीमा पर है और कहीं जाने का विचार करना सभव नहीं है, क्योंकि उन सीमाओं पर बहुत अफ़गान हैं जिन्हें अपनी ओर मिला लेंगे और मिर्जा अस्करी के भागे हुए सेवक और सर्दार भी हमसे आ मिलेंगे।

अंत में यही निश्चित होने पर फ़ातिहा पढ़ा गया और कूच कर कंधार को चले। जब शाल मस्तान के पास पहुँचे तब मौजा रली[२] में उतरे पर बरफ़ और पानी बरस चुका था और हवा बहुत ठढी थी इसलिए ठीक हुआ कि यहाँ से शाल मस्तान चला जावे। दोपहर की निमाज के समय तक उजबेग जवान[३] एक थके हुए दुर्बल टट्टू पर चढ़ा हुआ आ पहुँचा और चिल्लाकर कहने लगा कि बादशाह सवार हों,

---

(१) सीबी की इस घटना का जौहर ने कुछ भी उल्लेख नहीं किया है।

(२) सीबी से बोलन दर्रे में होते हुए क्वीटा के पास यह स्थान है।

(३) निज़ामुद्दीन अहमद 'हवालो', अबुलफ़ज़ल 'जिनी' और अर्सकिन 'चूपी' नाम बतलाते हैं। इसने हुमायूँ की सेवा की थी और उससे पुरस्कार भी पाया था। तबकातेअकबरी में लिखा है कि उसने आकर बैरामखाँ से पहले कहा जिसने जाकर बादशाह से कहा।

जौहर लिखता है कि उसने पूछने पर कहा कि मेरा नाम जुई बहादुर उजबेग है और मैं कासिम हुसेन सुलतान का भेजा आया हूँ। इस समाचार के मिलने के अनंतर पहले युद्ध की राय हुई पर अंत में कूच करना ही निश्चय हुआ।

मैं रास्ते में वृत्तांत कहूँगा क्योंकि समय कम है और अभी बात करना ठीक नहीं है।

सुनते ही बादशाह उसी समय सवार हुए और चल दिए। जब दो तीर रास्ता निकल गए तब बादशाह ने ख्वाजः मुअज्जम और बैरमखाँ को भेजा कि हमीदा बानू बेगम को ले आवें। इन लोगों ने आकर बेगम को सवार कराया और इतना भी समय नहीं मिला कि जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह को भी साथ ले जायँ[१]। जैसे ही बेगम कंप से निकलकर गई कि बादशाह के साथ होवें वैसेही मिर्जा अस्करी दो सहस्र सवारों के साथ आ पहुँचे। शोर मचा और पहुँचते ही कंप में घुसकर पूछा कि बादशाह कहाँ हैं? लोगों ने उत्तर दिया कि देर हुई शिकार खेलने गए हैं। उसने जान लिया कि वह निकल गए तब जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह को पकड़कर सब शाही मनुष्यों को प्रयत्न कर कधार लिवा गया[२]। उसने मुहम्मद अकबर बादशाह को अपनी स्त्री सुलतानम बेगम को सौंपा जिसने उनपर बहुत स्नेह और दया दिखाई।

जब बादशाह सवार हुए तब पहाड़ की ओर चार कोस तक चले गए और फिर फुर्ती से आगे बढ़े[३]। उस समय बादशाह की सेवा में ये लोग थे—बैराम खाँ, ख्वाजः मुअज्जम, ख्वाजः निआजी, नदीम कोका[४], रोशन

(१) जौहर आदि लिखते हैं कि छोटी अवस्था के कारण जान बूझकर छोड़ गए थे।

(२) अकबर १५ दिसंबर सन् १५४३ ई० को कंधार पहुँचे।

(३) पहले एक ओर चार कोस तक बराबर गए तब मुड़कर आगे का रास्ता लिया।

(४) इसकी स्त्री माहम अनगा और अतगाखाँ (शम्सुद्दीन गजनवी) अपनी स्त्री जीजी अनगा सहित अकबर के साथ थे। जौहर लिखता है कि यह भी अकबर के साथ साथ था, पर भागकर हिरात में बादशाह से आ मिला।

कोका, हाजी मुहम्मद खाँ, बाबा दोस्त बख्शी[1], मिर्ज़ा कुली बेग चूली[2], हैदर मुहम्मद आख्तः बेगी[3], शेख यूसुफ चूली, इब्राहीम एशक आगा[4], हसन अली एशक आगा, याक़ूब कोरची[5], अंबर नाज़िर और मुल्क (मलिक) मुख्तार, संबल मीर हज़ार[6] और ख्वाजः गाज़ी कहता है[7] कि मैं भी सेवा में था। ये लोग बादशाह के साथ चले और हमीदा बानू बेगम कहती हैं कि तीस मनुष्य[8] साथ थे। स्त्रियों में हसन अली एशक आगा की स्त्री भी थी।

रात्रि की निमाज़ का समय बीत चुका था जब पहाड़ के नीचे पहुँचे। उसपर इतनी बर्फ पड़ी थी कि रास्ता नहीं था कि उसपर चढ़ा जाय। इधर यह डर लगा था कि कहीं अन्यायी मिर्ज़ा अस्करी पीछे से न आ पहुँचे। अंत में रास्ता मिलने पर पहाड़ पर चढ़ गए और रात्रि भर बरफ में पड़े रहे। उस समय ईंधन भी नहीं था कि आग सुलगावें और भोजन के लिये

---

(१) वेतन बाँटनेवाला।

(२) चूल का अर्थ रेगिस्तान है। हुमायूँ ने फारस जानेवालों को चूली पदवी दी थी।

(३) घोड़ों का अध्यक्ष।

(४) द्वाररक्षक।

(५) शस्त्रालय का अध्यक्ष।

(६) अशुद्धि से मीर हाज़िर के स्थान पर मीर हज़ार लिखा जान पड़ता है।

(७) इस बात से मालूम होता है कि बेगम ने पूछकर लिखा है। जौहर कहता है कि ख्वाजः गाज़ी मक्के से फारस आकर मिला था पर बेगम की लिखावट से इसकी बात कट जाती है।

(८) निज़ामुद्दीन अहमद बाईस मनुष्य लिखता है और जौहर ने लिखा है कि चालीस मनुष्य और दो स्त्रियाँ साथ थीं।

कुछ भी नहीं था। भूख कष्ट दे रही थी और मनुष्य घबड़ा रहे थे। बादशाह ने कहा कि एक घोड़े को मार डालो। घोड़े को तो मारा पर देग थी ही नहीं कि उसमें पकावें। तब लोहे की टोपी में मांस को उबाला और भूना। चारों ओर आग सुलगाई गई और बादशाह ने मांस स्वयं भूनकर खाया। वे स्वयं कहते थे कि शीत के मारे मेरा सिर ठंढा हो गया था।

किसी प्रकार जब सबेरा हुआ तब उन्होंने दूसरे पहाड़ को दिखलाया कि इस पर मनुष्य बसे हैं, उस स्थान पर बहुत से बिलूची होंगे इससे वहीं चलना चाहिए। वहां चले और दो दिन में पहुंच गए। थोड़े गृह थे जिनमें कुछ जंगली बिलूची पहाड़ के नीचे बैठे हुए थे जिनकी बोली पिशाचों की सी थी। बादशाह के साथ तीस मनुष्य के लगभग थे जिन्हें देखकर सब बिलूची एकत्र होकर पास आए। बादशाह शामियाने में बैठे थे। उन्हें दूर से बैठे देखकर वे एक दूसरे से कहने लगे कि यदि हम इन लोगों को पकड़कर मिर्जा अस्करी के पास ले जावें तो वे इनका सामान अवश्य हमें देंगे और ऊपर से पुरस्कार भी मिलेगा। हसन अली एशक आगा की एक स्त्री[1] बिलूची थी जो उस भाषा को जानती थी और जिसने समझा कि इन पिशाचों का बुरा विचार है।

सबेरे कूच का विचार हुआ पर बिलूचियों ने कहा कि हमारा सरदार[2] नहीं है जब वह आवेगा तब कूच करिएगा। समय भी निकल गया था इससे सारी रात चौकसी से रहे। कुछ रात्रि व्यतीत हो गई थी कि उस बिलूची सरदार ने आकर बादशाह से भेंट किया और कहा कि मिर्जा कामराँ और मिर्जा अस्करी का आज्ञापत्र मेरे पास आया है जिसमें लिखा है कि

---

[1] (१) एक बिलूची सरदार की पुत्री थी जिसका नाम एशक आगा था।

[2] (२) मलिक खत्ती नाम था।

सुनने में आया है कि बादशाह तुम्हारे घरों में हैं और यदि वहाँ हों तब कभी सहस्र बार कमी मत छोड़ना, पकड़कर मेरे पास ले आओ। साथ का सामान और घोड़े तुम्हें मिलेंगे यदि तुम बादशाह को कंधार पहुँचाओगे। प्रथम मैंने आपको नहीं देखा था तब ऐसा विचार था पर अब सेवा करने पर मेरा प्राण और मेरे पाँच छ पुत्र आपके सिर पर क्या उसके एक बाल पर निछावर हैं। जहाँ इच्छा हो जायँ। ईश्वर रक्षा करे और मिर्जा अस्करी मेरा जो चाहें सो करें। अंत में बादशाह ने एक लाल, एक मोती और कई दूसरी वस्तु उसी बिलूची को दी और सबेरे कूच कर दुर्ग बाबा हाजी की ओर चले[१]।

दो दिन पर वहाँ पहुँचे। यह दुर्ग गर्मसीर प्रांत में नदी के तट पर बना हुआ है और वहाँ बहुत सय्यद बसते थे। वे बादशाह की सेवा में आए और उनका अतिथ्य किया। सबेरे ख्वाजा अलाउद्दीन महमूद[२] मिर्जा अस्करी के यहाँ से भागकर आया और उसने खच्चर घोड़े, शामिआना आदि लाकर बादशाह को भेंट किया। अब वे निश्चित हुए।

दूसरे दिन हाजी मुहम्मदखाँ कोकी[३] तीस चालीस सवारों सहित आया और उसने कई खच्चर भेंट किए। अंत में भाइयों की शत्रुता[४] और

---

(१) दुर्ग बाबा हाजी तक रक्षार्थ यह साथ साथ पहुँचाने गया था।

(२) अलाउद्दीन या जलालुद्दीन महमूद मिर्जा अस्करी का तहसीलदार था।

(३) बाबर के मित्र बाबा कशका का पुत्र था।

(४) कामराँ अफगानिस्तान और बदख्शाँ का मालिक था जिसकी ओर उसका सहोदर भाई मिर्जा अस्करी था और मिर्जा हिंदाल कामराँ की कैद में थे। भारत-साम्राज्य शेरशाह के और सिंध शाह हुसेन के अधिकार में था इससे हुमायूँ के लिये केवल फारस का ही रास्ता खुला रह गया था। जाने का समय सन् १५४३ ई० का दिसम्बर महीना है।

सर्दारों के भागने से निरुपाय होकर बादशाह ने इसी में अपनी भलाई देखी कि ईश्वर पर भरोसा करके खुरासान जाने का विचार करें[१]।

कई दिन की यात्रा पर खुरासान के पास पहुँचे। हलमंद नदी पर जब वे पहुँचे तब शाह तहमास्प इस समाचार को सुनकर बड़े आश्चर्य और विचार में पड़ गए कि हुमायूँ बादशाह विद्रोही, वक्रगतिवाले और अशुभ आकाश के चक्र से इन सीमाओं पर आए और अवश्यंभावी परमेश्वर उन्हें यहाँ ले आए।

बादशाह का स्वागत करने को अमीर, सर्दार, भद्र, पूज्य, अयोग्य, योग्य, बड़े और छोटे सबको भेजा। हलमंद नदी तक ये सब अगवानी करने आए[२]। शाह ने अपने भाई बहराम मिर्जा, अलकास मिर्जा और साम मिर्जा को स्वागत के लिए भेजा जो आकर मिले और बड़ी प्रतिष्ठा के साथ लिवा ले गए। जब पास पहुँचे तब शाह के भाइयों ने शाह को समाचार भेजा। शाह भी सवार होकर स्वागत को आए और एक दूसरे से मिले। इन दो उच्च आसीन बादशाहों की मित्रता एक बादाम के भीतर दो बीजों[३] की ऐसी थी और मित्रता और बंधुत्व सीमा तक पहुँच गई थी कि जितने दिनों तक बादशाह वहाँ रहे बहुधा शाह बादशाह के यहाँ जाते और जिस दिन शाह नहीं आते थे उस दिन बादशाह जाते थे।

---

(१) फारस जाते समय खुरासान होते गए थे। चूपी बहादुर को हुमायूँ ने शाह के पास अपने आने का समाचार देकर भेजा था।

(२) कामराँ के आ जाने के डर से बिना शाह की आज्ञा लिए या कहलाए ही हुमायूँ हलमंद नदी पार हो गए थे।

(३) गुलबदन बेगम ने फारस के सुखों का ही वर्णन किया है यद्यपि वहाँ की बहुत सी बातें उसके वंशवालों के लिये मानहानि-कारक और कष्ट-दायक हुई थीं। ऐसी बातों और घटनाओं का औहर ने अपनी पुस्तक में वर्णन दिया है।

बादशाह जब खुरासान में थे तब उन्होंने वहाँ के बाग बगीचे और सुलतान हुसेन मिर्जा की बनवाई और प्राचीन बड़ी बड़ी इमारतों की सैर की[1]।

जब एराक में थे तब आठ बार अहेर को गए और प्रत्येक बार बादशाह को भी साथ लिवा गए थे। हमीदा बानू बेगम ऊँट पर या पालकी में बैठकर तमाशा देखती थीं। शाह की बहिन शाहजादः सुलतानम[2] घोड़े पर सवार होकर शाह के पीछे खड़ी रहती थीं। बादशाह कहते थे कि अहेर में शाह के पीछे एक वृद्धा[3] घोड़े पर सवार थी जिसकी बाग श्वेत डाढ़ीवाले मनुष्य के हाथ में रहती थी। लोग कहते थे कि यह शाह की बहिन शाहजादः सुलतानम है। अर्थात् शाह ने बादशाह पर बहुत कृपा

---

(१) खुरासान के सिवाय रास्ते में जहाँ अच्छी और प्रसिद्ध इमारतें थीं वे सभी देखने गए थे अपने पिता के समान उन्होने हिरात की सैर की। जाम जाकर अहमद जिंदःफील का मकबरा देखा और सन् १५४४ ई० में आर्दबेल में सफी वंश के प्रथम शाह का मकबरा देखा। जौहर ने इन सब बातों का भी वर्णन लिखा है।

(२) इन्होंने फारस में हुमायूँ का बहुत पक्ष लिया था और एक बार उनके जीवन के लिये भी प्रार्थना की थी। शाह तहमास्प इनकी बड़ी प्रतिष्ठा करते थे और राजकार्य्य में भी इनका प्रभाव पड़ता था।

(३) जब हुमायूँ फारस गए थे उस समय शाह तहमास्प की अवस्था उंतीस वर्ष की थी और वह दस वर्ष की अवस्था में सन् १५२३ ई० में गद्दी पर बैठा था। उसकी बहिन का चाहे वह बड़ी ही रही हो वृद्धा होना आश्चर्यजनक है। पर यह भ्रम या अशुद्धि आगे जाकर साफ हो जाती है।

और प्रतिष्ठा दिखलाई और माता और बहिन की तरह[1] दया और मित्रता करने का कष्ट उठाया।

एक दिन शाहज़ादः सुलतानम ने हमीदा बानू बेगम का आतिथ्य किया। शाह ने अपनी बहिन से कहा कि जब आतिथ्य करना तब नगर के बाहर तैयारी करना। नगर से दो कोस पर एक अच्छे मैदान में खेमा, तंबू, बारगाह, छत्र, मेहराब आदि खड़े किए गए। खुरासान और उसके आसपास सरापर्दा लगता है परंतु पीछे की ओर नहीं रहता बादशाह हिंदुओं की चाल पर चारों और कनात खिंचवाते थे। शाह के मनुष्यों ने खेमे आदि खड़े करके उसके चारों ओर रंग बिरंगे गोल डंडे लगा दिए थे। शाह की आपसवाली, बूआ, बहिनें, हरमवालियां और खाँ तथा सर्दारों की स्त्रियाँ सब एक सहस्र के लगभग सजी सजाई वहाँ थीं।

उस दिन हमीदा बानू बेगम से शाहज़ादा सुलतानम ने पूछा कि हिंदुस्तान में भी ऐसे छत्र ओर मेहराब होते हैं। बेगम ने उत्तर दिया कि खुरासान को दो दाँग[2] और हिंदुस्तान को चार दाँग कहते है तब जो दो दाँग में मिलेगी वह चार दाँग में अवश्य अच्छी ही मिलेगी।

शाह की बहिन शाहसुलतानम[3] ने अपनी बूआ के उत्तर में हमीदा बानू बेगम की बात का समर्थन करते हुए कहा कि बूआ आश्चर्य है कि

---

(१) माता और बहिन की तरह का व्यवहार जो शाहजादा सुलतानम ने हमी बानू बेगम के साथ किया था।

(२) दाँग का अर्थ छ रत्ती की तौल या तीन है। इस मसले का अर्थ केवल इतना ही है कि खुरासान से हिंदुस्तान हर बात में दूना है। हमीदा बानू बेगम का इस मसल का प्रयोग करना नीतियुक्त था।

(३) यहाँ शाह की बहिन शाहसुलतानम प्रश्नकर्ता शाहज़ादः सुलतानम को बूआ अर्थात् पिता की बहिन कहती हैं जिससे वह शाह तहमास्प की भी बूआ हुई। इस संबंध से यह अवश्य वृद्धा रही होंगी।

आप यह बात कहती हैं क्योंकि दो दाँग कहाँ और चार दाँग कहाँ! प्रकट है कि (हिंदुस्तान में छत्र और मेहराब) उत्तम और अच्छे मिलते हैं।

दिन भर मजलिस होती रही। भोजन के समय सर्दारों की स्त्रियों ने खड़े होकर सेवा की और शाह को हरमवालियों ने शाहजादः सुलतानम के आगे भोजन परोसा, तथा हर प्रकार के वस्त्र कारचोबी आदि से हमीदा बानू बेगम का सत्कार किया। शाह स्वयं आगे से जाकर रात्रि के निमाज बादशाह के यहाँ रहे[1]। इसके अनंतर जब सुना कि हमीदा बानू बेगम गृह पर आ गई तब उठकर अपने महल को चले गए। यहाँ तक कृपा और सुव्यवहार किया।

उस समय रौशन कोका ने पुरानी स्वामिभक्ति और सेवा के होते भी उस पराए और कटकमय देश में कपट करके कई बहुमूल्य लाल चुरा लिए जो बादशाह की थैलियों में रहते थे। इन्हें स्वयं बादशाह या हमीदा बानू बेगम जानती थीं और किसीको पता नहीं रहता था। यदि बादशाह कहीं जाते थे तो उस थैली को हमीदा बानू बेगम को सौंप जाते थे। एक दिन बेगम सिर धोने गईं तब उस थैली को रूमाल में लपेटकर बादशाही पलंग के सिरहाने रख गईं। रौशन कोका ने इस समय को ठीक समझकर पाँच लाल चुरा लिए और ख्वाजा गाजी से मिलकर उसको सौंप दिए (और कह दिया) कि समय पर (हम लोग) उन्हें बेंच डालेंगे।

हमीदा बानू बेगम सिर धोकर जब आईं तब बादशाह ने उस थैली को उन्हें दे दिया। बेगम ने हाथ में लेते ही जान लिया कि यह थैली हल्की है और बादशाह से भी यह कह दिया। बादशाह ने कहा कि इसका

जैसे हुमायूँ अपनी बूआ खानजादः बेगम की प्रतिष्ठा करते थे वैसे ही शाह तहमास्प भी इनकी करते थे।

(१) जिसमें बादशाह अकेले न रह जायँ।

क्या अर्थ है ? हमारे और तुम्हारे सिवाय कोई नहीं जानता। तब यह क्या हुआ और कौन ले गया ! बादशाह बड़े चकित हुए। बेगम ने अपने भाई ख्वाजा मुअज्जम से कहा कि ऐसी घटना हो गई है। यदि ऐसे समय भाईपन निबाहो और इस प्रकार जाँच करो कि कोई न जाने तब मुझे लज्जा से बचा लोगे, नहीं तो जब तक जीवित रहूँगी तब तक बादशाह के आगे लज्जित बनी रहूँगी।

ख्वाजा मुअज्जम ने कहा कि एक बात मेरे मन में आती है कि बादशाह से इतना घनिष्ट संबंध रहते हुए भी मुझ में इतना सामर्थ्य नहीं है कि एक दुर्बल टट्टू खरीद सकूँ, पर इसके प्रतिकूल ख्वाजा गाजी और रौशन कोका[1] ने अपने अपने लिए एक एक अच्छा घोडा खरीद लिया है पर अभी तक मूल्य नहीं दिया है। इनकी यह खरीद आशा-विहीन नहीं है। बेगम ने कहा कि ए भाई, यह समय भाईपन का है, अवश्य इस बात की जाँच करनी चाहिए। ख्वाजा मुअज्जम ने कहा कि माह-चीचम, तुम किसी से यह बात मत कहना, ईश्वरी कृपा से आशा करता हूँ कि सत्य सत्य ही हो रहेगा।

वहाँ से निकलकर वह उन व्यापारियों के घर पर गया और उसने उनसे पूछा कि इन घोड़ों को कितने पर बेचा है ? घोड़ों के मूल्य के बारे में क्या देने की प्रतिज्ञा की है और उसे देने के लिये क्या गिरवी छोड़ गए हैं ? व्यापारियों ने कहा कि हमसे दोनों मनुष्य लालों को देने की प्रतिज्ञा करके घोड़े ले गए हैं।

ख्वाजा मुअज़्जम यहाँ से ख्वाजा गाजी के सेवक के पास आया और

---

(१) जौहर लिखता है कि असंतुष्ट आदमियों में ये दोनों और सुलतान मुहम्मद नेज-बाज थे जो अभी मक्के से लौटे थे और कामराँ की ओर के थे। गुलबदन बेगम के लेख से जौहर की उक्त बातें केवल सुलतान मुहम्मद पर ही घटित मालूम होती हैं।

उसने कहा कि ख्वाजा गाजी के वस्त्र आदि की गठरी कहाँ है और किस स्थान पर रखी जाती है ? ख्वाजा गाजी के नौकर ने उत्तर दिया कि हमारे ख्वाजा के पास गठरी आदि नहीं है केवल एक लम्बी टोपी है जिसे सोते समय वह कभी सिर के नीचे और कभी बगल में रखते है। ख्वाजा मुअज्जम समझ गया और उसने मन में निश्चित कर लिया कि वे लाल ख्वाजा गाजी के पास हैं और ऊँची टोपी मे रखे हुए हैं।

ख्वाजा मुअज्जम ने बादशाह के पास जाकर प्रार्थना की कि मैंने उन लालों का पता ख्वाजा गाजी की ऊँची टोपी में पाया है और चाहता हूँ कि एक चाल से उससे ले लूँ। यदि ख्वाजा गाजी बादशाह के पास आकर मेरी चुगली खावे तो आप मुझे कुछ न कहें। बादशाह ने यह सुनकर मुस्किरा दिया। तब से ख्वाजः मुअज्जम ख्वाजा गाजी से हँसी, ठठोली खिलवाड करने लगा। ख्वाजा गाजी ने आकर बादशाह से प्रार्थना की कि मैं बेचारा मनुष्य नाम धाम रखता हूं पर यह अल्पवयस्क ख्वाजा मुअज्जम किस लिये मेरी हँसी ठठोली इस पराए देश में करता है और मेरी मानहानि करता है। बादशाह ने कहा कि किसी अर्थ से नहीं करता, केवल अल्पवयस्क है इससे उसके मन में आ गया है कि हँसी खिलवाड़ करता है। उसकी कम अवस्था के कारण तुम किसी बात का विचार मत करो।

दूसरे दिन ख्वाजा गाजी आकर दीवानखाने में बैठा था कि ख्वाजा मुअज्जम ने अनजान बनकर उसकी टोपी को सिर पर से झट उतार लिया और उसमें से उन अपूर्व लालों को निकालकर बादशाह और हमीदा बानू बेगम के आगे लाकर रख दिया। बादशाह मुस्किराए और हमीदा बानू बेगम ने प्रसन्न होकर ख्वाजा मुअज्जम को शाबाशी और धन्यवाद दिया।

ख्वाजा गाजी और रौशन कोका दोनों अपने कर्मों से लज्जित होकर

शाह के पास गए और शाह से यहाँ तक गुप्त बातें[1] कहीं कि अंत में उसका मन फिर गया। बादशाह ने जान लिया कि शाह की पुरानी मित्रता और विश्वास अब नहीं रह गया, तब जितना लाल और रत्न[2] पास था उन्होंने शाह के यहाँ भेज दिया। शाह ने बादशाह से कहा कि ख्वाजा गाजी और रौशन कोका का दोष है कि हमको आप से पराया कर दिया, नहीं तो हम आप एक ही थे। फिर दोनों बादशाह एक मत हो गए और एक का दूसरे की ओर से हृदय स्वच्छ होगया।

वे दोनों प्रत्येक बादशाह की दृष्टि से दुष्ट विश्वासघाती हो गए और

---

(१) जौहर ने लालो की बातें नहीं लिखी हैं, वह केवल यह लिखता है कि ये दोनो और सुलतान मुहम्मद, शाह के पास गए और बोले कि हुमायूँ में कुछ योग्यता नहीं है जिस कारण भाइयों ने उसका साथ नहीं दिया। साथ ही यह भी प्रस्ताव किया कि यदि सेना मिले तो शाह के लिये वे कधार विजय कर दें।

(२) अंग्रेजी अनुवादिका ने लिखा है कि सुलतान इब्राहीम के कोष से मिले हुए कोहेनूर हीरे को ही बादशाह ने इस समय शाह को भेंट दिया था। (एशियाटिक क्वर्टर्ली रिव्यू, एप्रिल १८९९ का लेख 'बाबर का हीरा, एच० बेवरिज लिखित) जौहर लिखता है कि बादशाह ने सबसे बड़ा हीरा चुनकर एक सीप की डिब्बी में रखा और एक रिकाबी में इस डिब्बी के चारो ओर बचे हीरो और लालों को सजाकर बैरामखां के हाथ भेजा था। स्टुअर्ट लिखता है कि यह बड़ा हीरा राजा विक्रमाजीत ग्वालियर वाले का रहा होगा जिसे उसके बंशवालों ने हुमायूँ को दिया था और इसका जिक्र इस पुस्तक में पहले आ चुका है। यही हीरा हो सकता है क्योंकि कोहेनूर को सन् १६६५ ई० में औरंगजेब ने टैवर्नियर को दिखलाया था और सन् १७३९ ई० में नादिर शाह के समय में वह फारस गया था और उसीने इसका यह नाम रखा था।

बादशाह ने उन दोनों को शाह को सौंप दिया। शाह ने उन लालों[1] को भी जब समय मिला ले लिया और उन लोगों के लिए आज्ञा दी कि कारागार[2] में रक्षा से रखो।

बादशाह जब तक एराक में रहे तब तक अच्छी प्रकार रहे और शाह ने उनका सत्कार किया। वह प्रत्येक दिन अपूर्व और अमूल्य वस्तु भेंट में बादशाह को भेजता था।

अंत में शाह ने अपने पुत्र[3] को खानों, सुलतानों और सर्दारों के साथ सहायता के लिए ईरान से इच्छानुसार खेमे, तंबू, छत्र, मेहराब, शामियाने आदि काम किए हुए तथा रेशमी गलीचे, कलाबत्तू की दरियाँ, हर प्रकार का सामान जैसा चाहिए, तोशकखाना, कोष, हर प्रकार के कारखाने, बावरची-खाना और रिकाब-खाना बादशाह के योग्य तैयार कराकर (दिए और) शुभ साइत में दोनों बड़े बादशाह एक दूसरे से बिदा हुए। वहाँ से बादशाह कंधार को चले[4]।

उस समय बादशाह उन दोनों स्वामिद्रोहियों के दोष को शाह से क्षमा माँग करके और स्वय क्षमा करके साथ कंधार लिवा गए।

जब मिर्जा अस्करी ने सुना (१५४५ ई०) कि बादशाह खुरासान

---

(१) जो व्यापारियों को दिए जा चुके थे।

(२) सुलेमान के दीवान के नीचे जमीन में बने हुए प्रसिद्ध कारागार में उतार दिए गए थे।

(३) शाह मुराद जो दूध पीता बच्चा था और मुख्य सेनापति बिदागखाँ था। सेना दस सहस्र थी (तबकाते-अकबरी)।

(४) हुमायूँ फिर रास्ते मे ऐश, आराम और सैर करने में लग गया और उसने इतना समय व्यतीत किया कि शाह ने कजवीन में एकाएक पहुँच कर, जहाँ हुमायूँ ठहरे हुए थे, इन्हें क्रोध से झट बिदा कर दिया।

से लौटकर कंधार को आ रहे हैं तब जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह को मिर्जा कामराँ के यहाँ काबुल भेज दिया जिसने हमारी बूआ खानजादः बेगम को उन्हें सौंपा। जब आकःजानम ने उन्हें अपनी रक्षा में लिया था, उस समय जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह ढाई वर्ष[1] के थे। वह उन पर बड़ा प्रेम रखतीं, उनके हाथ पाँव को चूमतीं और कहती थीं कि ठीक मेरे भाई बादशाह बाबर के ऐसे हाथ पाँव हैं और बिलकुल वैसा ही रूप भी है।

बादशाह के कंधार आने का निश्चय हो जाने पर मिर्जा कामराँ ने खानजादः बेगम से बड़ी नम्रता आदि दिखलाकर कुछ रो पीटकर कहा कि आप बादशाह के पास कंधार जावे[2] और हम लोगों में संधि करा दें। बादशाह के आने पर खानजादहः बेगम ने अकबर बादशाह को मिर्जा कामराँ को सौंप दिया और वे स्वयं फुर्ती से कंधार को चल दीं। कामराँ ने अकबर बादशाह को अपनी स्त्री खानम को[3] सौंपा।

जब बादशाह कंधार पहुँचे तब चालिस दिन तक मिर्जा कामराँ ने (के अध्यक्ष) मिर्जा अस्करी को कंधार में घेरे रहे और बैरामखाँ को

---

(१) वह तीन वर्ष के हो चुके थे और बरफ ही में अपनी बहन बख्शीबानू सहित काबुल गए।

(२) खानजादः बेगम के काबुल से रवानः होने के पहले ही बैराम खाँ वहाँ पहुँच गए थे और लौटते समय बेगम के साथ ही आए थे। वहाँ इन्होंने अकबर को देखा और हिंदाल, सुलेमान, हरम बेगम, इब्राहीम और यादगार नासिर सब को रक्षा में पाया।

(३) मुहतरिमा खानम शाह मुहम्मद सुलतान काशगरी चगत्ताई और खदीजा सुलतान चगत्ताई की पुत्री थी। पहला विवाह कामराँ के साथ और दूसरा मिर्जा सुलेमान और हरम बेगम के पुत्र इब्राहीम मिर्जा के साथ हुआ था। बहुधा इसका नाम केवल खानम लिखा गया है।

राजदूत बना कर मिर्जा कामराँ के पास भेजा। मिर्जा अस्करी दुखित और पराजित होकर क्षमा-प्रार्थी हुआ और उसने बाहर आकर बादशाह की सेवा की[१]। बादशाह ने कधार पर अधिकार करके उसे शाह के पुत्र को दे दिया। कुछ दिन के अनतर शाह का पुत्र बीमार होकर मर गया। बैरामखाँ के लौटने[२] पर बादशाह ने कधार उसे सौंपा।

. हमीदा बानू बेगम को भी कंधार में छोड़कर बादशाह मिर्जा कामराँ के पीछे चले।

खानजादः बेगम जो साथ मे थी कबलचाक[३] नामक स्थान में पहुँचकर तीन दिन ज्वर से पीड़ित रहीं। हकीमों ने बहुत दवा की पर लाभ नहीं हुआ। चौथे दिन ६५१ हि० में मर गईं। कबलचाक में ही गाड़ी गईं पर तीन महीने के अनतर सम्राट् पिता के मकबरे[४] में लाई जाकर रखी गईं।

मिर्जा कामराँ जितने वर्षों तक काबुल मे रहे कभी चढ़ाई नही[५] की

---

(१) ४ दिसंबर सन् १५४५ ई० को कधार विजय हुआ।

(२) बैरामखाँ कंधार विजय के पहले ही लौटकर आ गया था। शाह मुराद की मृत्यु पर उस दुर्ग को फिर से फारसवालो से छीनकर बैराम खाँ को सौंपा गया था।

(३) इस स्थान के लिये अकबरनामा, जि० १ पृ० ४७७ का नोट देखिए। हलमंद और अर्गनदाब नदियों के बीच पहाड़ी देश में जो टीरी प्रांत कहलाता है उसी में एक स्थान का यह नाम है।

(४) खानजादः बेगम, उसका पति मेहदी ख्वाज. और अबुलम-आली तर्मिजी सब उसी स्थान मे गड़े हैं।

(५) बदख्शाँ और हजारा जाति पर चढ़ाई की थी। यहाँ अहेर खेलने ही से अर्थ है। ताख्त शब्द का कई अर्थों में प्रयोग किया गया है।

थी कि एकाएक बादशाह का आना सुनकर उन्हें अहेर खेलने की इच्छा पैदा हो गई और वह हजारा[1] की ओर चल दिए।

इसी समय मिर्जा हिंदाल ने जिन्होंने एकांतवास ले लिया था बादशाह का एराक और खुरासान से लौटना और कंधार विजय करना सुना और इस अवसर को अच्छा समझकर मिर्जा यादगीर नासिर को बुलवाकर कहा कि बादशाह ने आकर कंधार विजय किया है और मिर्जा कामराँ ने खानजाद: बेगम को संधि के लिये भेजा था परंतु बादशाह ने उस संधि को नहीं माना। बादशाह ने बैरामखाँ को राजदूत बनाकर भेजा था परंतु मिर्जा कामराँ ने उसकी बात नहीं मानी। अब बादशाह कंधार बैराम खाँ को सौंपकर काबुल आ रहे है। उचित है कि हम तुम आपस में प्रतिज्ञा करके किसी बहाने बादशाह के पास पहुँचें। मिर्जा यादगार नासिर ने मान लिया और आपस में दोनों ने प्रतिज्ञा भी कर ली। मिर्जा हिंदाला ने कहा कि तुम स्वयं भागना निश्चित करो और मिर्जा कामराँ जब सुनेगाँ तब मुझसे कहेगा कि यादगार नासिर भाग गया है जाकर समझाकर लिवा लाओ। मेरे पहुँचने तक तुम धीरे धीरे जाना और जब हम आ जावेंगे तब साथ ही फुर्ती से चलकर अपने को बादशाह की सेवा में पहुचावेंगे।

यह सम्मति ठीक होने पर मिर्जा यादगार भागे और यह समाचार मिर्जा कामराँ को मिला। वह उसी समय लौटकर काबुल आए और मिर्जा हिंदाल को बुलाकर कहा कि तुम जाओ और मिर्जा यादगार नासिर को लिवा लाओ। वह उसी समय सवार हो फुर्ती से चलकर पाच छ दिन में बादशाह की सेवा मे पहुँचकर सम्मानित हुए और प्रार्थना की कि तकिया हिमार के रास्ते से चलना चाहिए।

६ रमजान सन् ६५१ हि०[2] (अक्तूबर सन् १५४५ ई०) को

---

(१) कामराँ की एक स्त्री हजारा जाति की थी।

(२) ९५१ हि० अशुद्ध है। अबुलफजल ने ९५२ हि० लिखा है।

बादशाह तकिया हिमार[१] पर जा उतरे। उसी दिन मिर्जा कामराँ को समाचार मिला और वह बहुत घबड़ा गया। उसी समय खेमे निकलवा गुजरगाह[२] के आगे जा पहुँचा। ११ रमजान को बादशाह घाटी तीपः में जा पहुँचे और मिर्जा कामराँ[३] भी युद्ध की इच्छा से सामने आ उतरे।

इसी समय सब सर्दार और सैनिकगण मिर्जा कामराँ के यहाँ से भागकर बादशाह की सेवा में चले आए। मिर्जा कामराँ का एक प्रसिद्ध सर्दार बाप्‌स[४] था जो अपने सैनिकों के सहित भागकर बादशाह का पद चूमकर सम्मानित हुआ। मिर्जा कामराँ जब अकेला रह गया और उसने देखा कि मेरे आसपास कोई न रह गया तब बाप्‌स के गृह के जो पास ही था द्वार और दिवाल को गिरवाकर तथा नष्ट करके धीरे धीरे बाग नौरोज और गुलरुख बेगम[५] के मकबरे के आगे से होता हुआ और अपने बारह सहस्र सवारों को नौकरी से अलग कर चल दिया[६]।

---

(१) 'गदहे का दर्रा' अर्थ है।

(२) काबुल नगर के पास दक्षिण और पश्चिम की ओर काबुल नदी के किनारे पर यह बाग है और इसके पास ही बाबर का मकबरा है।

(३) इसकी सेना कासीम बर्लास के अधीन थी। शायद वह स्वयं वहां नही था। इस सेना पर ख्वाजा मुअज्जम, हाजी मुहम्मद खाँ और शेर अफगन ने आक्रमण कर उसे भगा दिया। अबुलफजल जलगेदरी मे इस युद्ध का होना लिखता है।

(४) मिर्जा कामराँ की पुत्री हबीबः बेगम का यासीन दौलात् (आक सुलतान) से विवाह ठीक हुआ था। इसका यह अतालीक अर्थात् शिक्षक नियुक्त हुआ था।

(५) कामराँ की माता।

(६) कामराँ ने अकेले होनेपर ख्वाजा खाविंद महमूद और ख्वाजा अब्दुलखालिक को क्षमा माँगने भेजा। हुमायूँ ने यह मान लिया परंतु

जब अँधेरा हो गया तब वह उसी रास्ते से बाबा दश्ती[1] पहुँच तालाब के आगे ठहर गया और दोस्ती कोका और जोकी खाँ को उसने भेजा कि उसकी बड़ी पुत्री हबीबः बेगम[2], उसके पुत्र इब्राहीम सुलतान मिर्जा, खिज्रखाँ की भतीजी हजारः बेगम[3], हरम बेगम[4] की बहिन माह

कामराँ रात होते ही काबुल गया और वहाँ से अपने पुत्र आदि को साथ लेकर बेनी हिसार होता हुआ गजनी चला गया।

(१) दश्ती का अर्थ जंगली है और यह स्थान किसी फकीर का मकबरा होगा।

(२) हबीबः बेगम—कामराँ का सन् १५२८ ई० में सुलतान अली मिर्जा बेगचिक मामा की पुत्री से विवाह हुआ था जिससे स्यात् उसकी यह सबसे बड़ी पुत्री थी। इसका सन् १५४५ ई० में गुलबदन बेगम के पति खिज्र ख्वाजः खाँ के भाई और गुलबदन बेगम के ममेरे भाई यासीन दौलात् (आक सुलतान) के साथ विवाह हुआ था। सन् १५५१-५२ ई० में जब वह यासीन दौलात् से बलात् अलग की गई तब दूसरा विवाह हुआ होगा।

(३) हजारः बेगम—जिस समय हुमायूँ और कामराँ के बीच में युद्ध चल रहा था उस समय खिज्र खाँ हजारा का एक भाई हजारा जाति का सर्दार था जिसकी यह पुत्री थी और कामराँ को ब्याही गई थी।

(४) हरम बेगम—यह सुलतान वैस कोलाबी किबचाक मुगल की पुत्री तथा शुक्रअली बेग, हैदर बेग और माह बेगम की बहिन थी। खान मिर्जा (वैस) के पुत्र मिर्जा सुलेमान से इसका विवाह हुआ था। इसे एक पुत्र मिर्जा इब्राहीम (अबुल कासिम) और कई पुत्रियाँ हुईं। इसकी संतान अपने पूर्वज शाह बेगम बदख्शी के द्वारा अपना वंश सिकंदरे-आजम बतलाते हैं। इसका कुछ वृतांत ग्रंथ और भूमिका में भी आया है। अकबर के समय में काबुल पर इन्होंने अपने पति के साथ

बेगम[1] हाजी बेगम[2] की माता मेह अफ़्रोज[3] और बाकी कोका[4] को साथ ले आवें। अंत में ये लोग मिर्जा कामराँ के साथ हुए और वह ठट्टा तथा बक्खर की ओर चला।

खिज्रखाँ के देश में जो रास्ते में पड़ता है पहुँचकर उसने हबीबः बेगम का विवाह याक सुलतान से करके उसे सौंप दिया और वह स्वयं भक्खर और ठट्टा को चला।

विजयी बादशाह १२ वीं की रात्रि जब पाँच घड़ी बीत चुकी थी तब बाला हिसार में ऐश्वर्य, शुभ साइत[5] और सौभाग्य के साथ उतरे। मिर्जा कामराँ के मनुष्य जो बादशाही सेवा में आचुके थे साथही डंका पीटते हुए काबुल[6] में पहुँचे।

बदख्शाँ से कई बार चढ़ाई की थी। बदायूनी इन्हें वलीनेअमत के नाम से लिखता है जो शाही वंश की वृद्धियों के लिए बहुधा लिखा जाता था। यह प्रबंध आदि में योग्य और साहसी थीं।

(१) माह बेगम–हरम बेगम की बहिन और कामराँ की स्त्री थी।

(२) हाजी बेगम–कामराँ की पुत्री जो गुलबदन के साथ हज को गई पर इसके पहले भी यह स्यात् हज्ज को गई थी क्योंकि इसका इस समय हाजी बेगम नाम दिया है।

(३) कामराँ की स्त्री थी।

(४) माहम अनगा का पुत्र और अदहमखाँ का बड़ा भाई था। माहम इस समय काबुल में रही होगी।

(५) ज्योतिषियों से साइत दिखलाकर ही गए थे क्योंकि वे स्वयं ज्योतिषी थे। अबुलफजल भी गुलबदन बेगम की तरह १३ तारीख लिखता है पर दूसरे इतिहासकारों ने १० वीं तारीख लिखी है।

(६) १८ नवंबर सन् १५४५ ई० को बुधवार की रात्रि में।

उसी महीने की ११२वीं को मेरी माता दिल्दार बेगम, गुलचेहरः बेगम श्रौर मैने बादशाह की सेवा की। पाँच वर्ष का समय व्यतीत होचुका था कि मै सेवा से दूर रही श्रौर जब इस जुदाई से छुट्टी मिली तब उन पूज्य के मिलने से सम्मानित हुई। देखते ही दुखित हृदय को शाति श्रौर श्राँखों को लाली को नई रोशनी मिली। मै प्रसन्नता के कारण हर समय ईश्वर को धन्यवाद देती थी।

श्रब बहुधा मजलिसे होती रहतीं जो संध्या से सबेरे तक रहतीं श्रौर गाने बजाने वाले बराबर गाते बजाते रहते थे। बहुधा खेल भी हुश्रा करता था जिनमें एक यह है कि बारह मनुष्य बैठते थे श्रौर हर एक के पास बीस बीस ताश[1] श्रौर शाहरूखी[2] रहती थी। जो हारता था वह बीस शाहरुखी भी हार जाता था जो पाँच मिसकाल के बराबर होती है श्रौर जो जीतता था उसे जितना खेलता उतना ही अधिक मिलता।

चौसा, कन्नौज श्रौर बक्सर के युद्धों में या जो बादशाह के साथ उस गडबड़ में मारे गए थे उनकी बेवाश्रों, मातृपितृहीन संतानों श्रौर संबधियों को वेतन भूमि श्रादि दिए गए। बादशाह के राजत्व काल में सैनिकों श्रौर प्रजा में बड़ा संतोष श्रौर शाति रही। वे सर्वदा सुख से दिन

---

(१) मिस्टर श्रर्सकिन का कथन है कि पूर्व के ग्रंथों में सबसे पहले ताश का जिक्र उसम श्राया है जब बाबर ने सन् १५२६-२७ ई० में मोर श्रली के हाथ कुछ ताश शाह हुसेन श्रर्गून को भेजे थे जो इस खेल का शौकीन था। मुगल हरम में श्रवश्य ही यह खेल जारी रहा होगा। यहाँ गुलबदन बेगम ताश के किसी नए खेल का वर्णन कर रही हैं।

(२) शाहरुखी का मूल्य दस श्राना है श्रौर चार शाहरुखी का तौल एक मिसकाल होता है।

व्यतीत करते थे और बादशाह की आयु-वृद्धि के लिये बहुधा ईश्वर से प्रार्थना किया करते थे।

कुछ दिन के अनतर हमीदा बानू बेगम को बुलाने के लिये आदमी कघार[1] भेजा गया हमीदा बानू बेगम के आने पर जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह की सुन्नत की गई और मजलिस का सामान तैयार हुआ। नौरोज[2] के अनंतर सत्रह दिन तक खुशी मची, हरे वस्त्र[3] पहिने गए और तीस चालीस लड़कियों को आज्ञा हुई कि हरे वस्त्र पहिनकर पहाड़ों पर निकलें। बादशाह नौरोज के प्रथम दिन सतभइओं के पर्वत पर आए और उन्होंने वहाँ कई दिन सुख और चैन से व्यतीत किए। जब मुहम्मद अकबर बादशाह पाँच वर्ष के हुए थे तब काबुल नगर में सुन्नत का जलसा किया गया था। और उसी[4] बड़े दीवानखाने में यह हुआ था। सब

---

(१) अबुलफजल लिखता है कि कराचः खाँ और मुसाहिब बेग को लाने के लिये भेजा था।

(२) फारस का शाका। तबकाते-अकबरी में लिखा है कि १० रमजान ९५६ हि० को विजय हुई जब अकबर चार वर्ष दो महीने और पाँच दिन के थे। कुछ इस घटना को ९५२ हि० में लिखते हैं पर ईश्वर ही ठीक जानता है। (इलिअट डाउसन, जि० ५, पृ० २२-२३) घटना के चालीस वर्ष बाद ही लिखने में इतनी विभिन्नता हो गई थी। अबुलफजल १२ रमजान ९५२ हि० को इस घटना का होना लिखता है (जिल्द १, पृ० २९२) जब अकबर ३ वर्ष २ महीना ८ दिन के थे (जन्म १५ अक्तूबर सन् १५४२ ई०)। अकबर के समय में ही लिखे गए इतिहासों में उसी के जोवन की घटनाओं के समय में इतना मत-भेद होना आश्चर्य की बात है।

(३) वर्षाऋतु के कारण ही यह वस्त्र पसद किया गया था।

(४) जिसमें पानीपत के युद्ध के अनतर बेगमो ने खुशी मनाई थी।

बाजार सजाया गया था । मिर्जा हिंदाल, मिर्जा यादगार नासिर, सुलतानों और सरदारों ने अपने अपने घरों को अच्छी तरह सजवाया था और बेगा बेगम के बाग में बेगमों और स्त्रियों ने अपूर्व स्थान तैयार कराए थे।

मिर्जाओं और सर्दारों ने दीवानखाने के उसी बाग में भेंट[1] दी। बड़ी मजलिस जमी और प्रसन्नता मनाई गई। बादशाह ने मनुष्यों को अच्छे खिलअत और शिरोपाव देने की कृपा की। प्रजा, विद्वान, महात्मा, साधु, दरिद्र, भद्र, शीलवान, छोटे और बड़े सबने सुख चैन से दिन और रात आराम में बिताए।

इसके अनंतर बादशाह दुर्ग जफर को चले[2] जिसमें मिर्जा सुलेमान था। वह युद्ध के लिए बाहर निकला पर सामना होने पर साहस नहीं कर सका[3], तब उसने भागना निश्चय किया। दुर्ग में बादशाह बिना रुकावट के आराम से चले गए। स्वयं बादशाह किशम[4] में ठहरे हुए थे।

---

(१) विवाह के पहले वर के यहाँ दुलहिन के लिये भेजे हुए वस्त्र आदि को साचक कहते हैं जिसे यहाँ बरी या हथपुरी कहते हैं। यहाँ यह शब्द भेंट के अर्थ में आया है।

(२) मिर्जा सुलेमान को बादशाह ने फर्मान भेजा था कि कामराँ ने हमारे कारण तुम्हें कष्ट दिया है अब हम बादशाह हुए, आकर भेंट कर जाओ। परंतु वह नही आया और उसने कहलाया कि कामराँ ने हमसे शपथ ली है कि बिना युद्ध के अधीनता मत स्वीकार करना।

(३) अबुलफजल लिखता है कि अंदराब के एक गाँव तिरगिराँ में कुछ युद्ध होने के अनतर वह भागा था (अकबरनामा जि० १, पृ० ३००)।

(४) सुलेमान के पराजय पर बादशाह किशम गए जहां माँदे हो गए और तीन महीने तक ठहरे रहे।

उन्हीं दिनों बादशाह भी कुछ माँदे[1] हो गए और उस दिन सुबह बेहोशी आ गई। जब अपने होश में आए तब मुनइम खाँ के भाई फजायल बेग को काबुल भेजा कि जाओ और काबुल-वालों को समझा बुझाकर संतोष दो[2] कि न घबड़ाएँ और कहो कि आपत्ति आ गई थी पर अच्छी प्रकार बीत गई।

फजायल बेग के काबुल जाने के अनंतर वे एक दिन काबुल की ओर बढ़े थे[3]।

काबुल से झूठा समाचार बक्खर में मिर्जा कामराँ के पास पहुँचा जो उसी समय वहाँ से झट चलकर काबुल की ओर बढ़ा[4]। उसी समय उसने आकर जाहिद बेग[5] को मार डाला और आप काबुल को चला गया।

---

(१) बहुत दिन माँदे रहे पर चार दिन तक बेहोशी रही। माह चूचक बेगम और फातिमा बीबी उर्दूबेगी ने बड़ी सेवा की। इसकी पुत्री ख्वाजा मुअज्जम की स्त्री जुहरा थी, जिसकी रक्षा करने में अकबर अपना प्राण गँवा चुके थे। बादशाह किशम और जफर के बीच शाहदान में माँदे हुए थे। वजीर करचाखाँ ने इस समय बड़ी बुद्धिमत्ता से काम किया जिससे हुमायूँ का प्रभाव कम नहीं होने पाया।

(२) हुमायूँ को अच्छा होने में दो महीने लग गए थे इससे अपनी आरोग्यता का संदेशा और मिर्जा कामराँ से उनकी रक्षा का वृत्तांत जानकर समझाने के लिये उन्होंने मुनइमखाँ को भेजा था।

(३) फिर दुर्ग जफर को लौट गए थे। फजायल बेग काबुल में बीमारी का समाचार पहुँचने के कुछ घंटे बाद वहाँ पहुँच गया था।

(४) पहले कामराँ ने कंधार लेने का प्रयत्न किया था परंतु बैराम खाँ का पूरा प्रबंध देखकर वह किलात में सौदागरों के घोड़े छीनता हुआ गजनी आया।

(५) कुछ मनुष्यों की सहायता से गजनी दुर्गपर अधिकार हो गया

सबेरे का समय था, काबुल-वालों ने असावधानी से पहले की चाल पर फाटकों को खोल दिया था और भिश्ती घसियारे आदि आ जा रहे थे। इनके साथ वे दुर्ग में घुस आए। मुहम्मद अली मामा[१] को जो स्नान-घर में था उसी समय उसने मारा डाला और मुल्ला अब्दुल खालिक की पाठशाला मे ठहरा।

जिस समय बादशाह दुर्ग जफर की ओर गए थे उस समय नौकर को हरम के द्वार पर छोड़ गए थे। मिर्जा कामराँ ने पूछा कि बाला हिसार पर कौन है? एक ने कहा कि नौकर है। इस बात को सुनते ही नौकर उसी समय स्त्रियों का सा वस्त्र पहिरकर बाहर निकला था कि मिर्जा कामराँ के मनुष्यों ने हिसार के द्वार-रक्षकों को पकड़ लिया और वे उन्हें मिर्जा के पास ले गए। उन्होने आज्ञा दी कि कारागार में रक्खो। इसके अनतर मिर्जा कामराँ के मनुष्यो ने बाला हिसार जाकर अगणित वस्तु और हरम के सामान को लूटकर मिर्जा कामराँ की कचहरी में ला पटका। बड़ी बेगमों को मिर्जा अस्करी के मकान में ठहराया गया और उस गृह के द्वार को ईट, चूने आदि से बंद करवा दिया गया। खाने पीने का सामान उस गृह की चहारदीवारी के ऊपर से दिया जाता था। मिर्जा यादगार नासिर जिस गृह मे थे उसमें मिर्जा ने ख्वाजा मुअज्जम[२] को ठहराया और जिस

और वहाँ का अध्यक्ष जाहिदबेग जो बेगा बेगम की बहिन का पति था और अबुलफजल के अनुसार नशे में चूर था मार डाला गया।

(१) माहम बेगम का यह भाई था। निजामुद्दीन अहमद लिखता है कि दुर्ग में पहुंचने पर कामरां ने फजायल बेग और मेहतर वकील की आँखो में सलाई फिरवा दी।

(२) ख्वाजा मुअज्जम ख्वाजा रशीदी को जो एराक से बादशाह के साथ आया था दुर्ग जफर में मारकर काबुल भाग आया था जहां वह परिवार सहित निगरानी में था। उसे प्रतिष्ठा देने और हुमायूँ को चिढ़ाने के लिए यह किया गया था।

महल में बादशाही हरम और दूसरी बेगमें थीं उसमें अपनी बेगमों आदि को रहने की आज्ञा दी। उन सिपाहियों के स्त्री-पुत्रादि के साथ बहुत कुव्यवहार किया गया जो भागकर बादशाह की सेवा में चले गए थे। उसने हर एक के गृह को गिरवाकर नष्ट कर दिया और हर एक के परिवार को किसी दूसरे को सौंप दिया। जब बादशाह ने सुना कि मिर्जा कामराँ बक्खर से आकर ऐसा बर्त्ताव कर रहा है तब वे दुर्ग जफर और अँदराब से काबुल को चले और दुर्ग जफर[१] मिर्जा सुलेमान को दे दिया।

जब बादशाह काबुल के पास पहुँचे तब मिर्जा कामराँ ने मेरी माता और मुझको घर से बुलवाया और मेरी माता को आज्ञा दी कि शस्त्र बनानेवाले के गृह में रहो। मुझसे कहा कि यह भी तुम्हारा गृह है यहीं रहो। मैंने कहा कि यहाँ किस लिए रहूँ, जहाँ मेरी माता रहेगी वहाँ मैं भी रहूँगी। मेरे उत्तर में उन्होंने कहा कि तुम खिज्र ख्वाजा खाँ को लिखो कि आकर मुझसे मिलें और धैर्य रखें। जिस प्रकार मिर्जा अस्करी और मिर्जा हिंदाल मेरे भाई है उसी प्रकार वह भी है और यह समय सहायता का है। मैंने उत्तर दिया कि खिज्र ख्वाजा खाँ के पास मेरा हस्ताक्षर नहीं है जिससे वे मेरे पत्र को पहिचानें, क्योंकि मैंने स्वयं कभी उन्हें नहीं लिखा है। वे अपने पुत्रों द्वारा मुझे लिखते हैं, आगे तुम्हारी जो इच्छा हो वह लिख भेजो। अंत में उन्होंने मेहदी सुलतान और शेरअली खाँ को बुलाने के लिए भेजा। मैंने पहले ही कह दिया था कि तुम्हारे भाई लोग[२] मिर्जा कामराँ के यहाँ हैं स्यात् तुम्हारा भी यही विचार हो कि

---

(१) तबकाते-अकबरी में लिखा है कि हुमायूँ ने बदख्शां और कंदज अधिकृत करके मिर्जा हिंदाल को दिया था पर अब सब मिर्जा सुलेमान को लौटा दिया।

(२) खिज्र ख्वाजा खाँ यासीन दौलात् (आक सुलतान) का भाई था।

उनके यहाँ जाकर अपने भाइयों का साथ दें। परंतु सहस्र बार कभी बादशाह के विरुद्ध होने का विचार मत करना। ईश्वर को धन्यवाद है कि जैसा मैंने कहा था खाँ ने वैसा ही किया।

जब बादशाह ने सुना कि मेहदी सुलतान और शेर अली को मिर्जा कामराँ ने खिज्र ख्वाजा को लाने के लिए भेजा है तब उन्होंने मिर्जा हाजी के पिता कंबर बेग को उसे बुलाने के लिये भेजा। उस समय खाँ अपनी जागीर पर थे इससे उन्होंने कहला भेजा कि कभी भी मिर्जा कामराँ का साथ मत करना और हमारे यहाँ चले आओ। अंत में खिज्र ख्वाजा खाँ यह समाचार और शुभ संदेशा सुनते ही दरबार को चला और उकाबैन[1] में पहुँचकर बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ।

जब बादशाह मनार पहुँचे उस समय मिर्जा कामराँ ने शिरोया के पिता शेर अफगान[2] को अपनी कुल सज्जित सेना सहित आगे[3] भेजा कि जाकर युद्ध करे। हम लोगों ने ऊपर से देखा कि वह डंका बजाता बाबा दश्ती के आगे निकल गया। तब हम लोगों ने आपस में कहा कि ईश्वर तुम्हारे कर्म मे न लिखे हो कि जाकर युद्ध करो। इसके अनंतर हम लोग रोने लगीं।

---

(१) उकाब का अर्थ गिद्ध है जिसका बहुवचन उकबान होता है। उकाबैन का अर्थ लोहे के कांटे हैं जिसका अर्थ अंग्रेजी अनुवादिका ने दो गिद्ध किया है पर वह अशुद्ध है। उकाबैन का अर्थ दो डंडे हैं जिनमें दोषी बाँधे जाते हैं। (गिआसुल्लुगात)

(२) चौसा युद्ध में बेगा बेगम के बचाने में प्राण खोनेवाले कूच बेग नामक सर्दार का पुत्र था।

(३) तबकाते-अकबरी में लिखा है कि शेर अफगन और शेर अली जुहाक और गोरबंद तक गए और उन्होंने रास्ता रोक लिया। हुमायूँ ने जुहाक की घाटी की नदी को पार की और शेरअली को आगे से हटा दिया। तब हुमायूँ शाकी नदी को पार कर डीहे अफगानां में पहुँचा।

जब वह डीहे अफगानों[1] के पास पहुँचा तब दोनों ओर के हरावलों का सामना होगया। सामना होते ही शाही हरावल ने मिर्जा के हरावल को परास्त[2] किया और बहुतों को पकड़कर बादशाह के सामने ले आए। बादशाह ने आज्ञा दी कि मुगलों को टुकड़े टुकड़े कर डालो। मिर्जा कामराँ के बहुत मनुष्य जो युद्ध को आए थे शाही मनुष्यों के हाथ पकड़े गए जिनमे बहुतों को बादशाह ने मरवा डाला और बहुत से कैद हुए। इन्हीं में मिर्जा कामराँ का एक सर्दार जो की खाँ भी पकड़ा गया था।

बादशाह विजय के कारण बाजे बजवाते बड़े ऐश्वर्य और तैयारी के साथ उकाबैन गए। इनके साथ मिर्जा हिंदाल भी थे। वहाँ उन्होंने अपने लिये खेमे आदि तैयार कराए और मिर्जा हिंदाल को पुल मस्तान[3] के मोर्चे पर और दूसरे अमीरों को और और स्थान के मोर्चों पर नियुक्त किया।

सात महीने[4] तक घेरा रहा। दैवात् एक दिन मिर्जा कामराँ गृह में से आँगन मे आ गए थे कि एक मनुष्य ने उकाबैन से गोली चलाई। वह दौड़कर आड़ मे होगए और कहा कि अकबर बादशाह को सामने

---

(१) काबुल के पास आस्माई पहाड़ी के नीचे है।

(२) निजामुद्दीन अहमद, जौहर आदि इस युद्ध का योरत जलगा में होना लिखते हैं। शाही हरावल मिर्जा हिंदाल की अध्यक्षता में था और युद्ध बहुत बड़ा तथा देर तक हुआ था। हिंदाल की सहायता के लिये कराचा खाँ आज्ञा लेकर गया और उसने शेर अफगन को द्वंद्व युद्ध में परास्त कर पकड़ लिया। इसके और अन्य सर्दारों के कहने से वह मार डाला गया।

(३) डीहे-याकूब के दर्रे से निकली हुई नदी पर यह पुल बना हुआ है।

(४) जौहर ने केवल तीन महीना लिखा है।

लाकर रखो[1]। अंत में लोगों ने बादशाह हुमायूँ से प्रार्थना की कि मिर्जा मुहम्मद अकबर को सामने ला रखा है। बादशाह ने आज्ञा दी कि गोली न चलाई जाय। इसके अनंतर शाही सैनिकों ने बाला हिसार पर गोली नहीं चलाई पर काबुल से मिर्जा कामराँ के मनुष्य शाही सेना पर उकाबैन में गोली चलाते रहे। शाही मनुष्यों ने मिर्जा अस्करी को सामने लाकर खड़ाकर दिया और उनकी हँसी लेने लगे। मिर्जा कामराँ की सेना भी दुर्ग से बाहर निकलकर युद्ध करती और दोनों ओर के मनुष्य मारे जाते थे। शाही सेना बहुधा विजयी होती इससे फिर बाहर आने का साहस किसी को नहीं पड़ा[2]। बादशाह सतानों, बच्चों, बेगमों और अपनी प्रजा आदि के विचार से नगर पर गोले नहीं गिरवाते थे और बड़ों के गृहों को चोट नहीं पहुँचाते थे।

जब बहुत दिनोंतक घेरा चलता रहा तब (बेगमों ने) ख्वाजा

---

(१) गुलबदन बेगम ने इस बात का कहीं कमर्थन नहीं किया है कि माहम अनगा अकबर की सेवा पर नियत थी और न यही कि उसने अकबर को उसके रक्षार्थ अपनी गोद की आड़ में करके अपने को संकट में डाला था। उसने उसके पति नदीम कोका को अकबर की सेवा पर नियुक्त होने का कई बार जिक्र किया है।

(२) शेर अली जो बड़ा साहसी पुरुष था प्रति दिन बाहर निकलता था और खूब लड़ता था। एक दिन शेर अली और हाजी मुहम्मद खाँ का सामना हो गया जिसमें हाजी घायल हो गया। चारकाराँ में घोड़ों के सौदागरों का आना सुनकर कामराँ ने शेर अली को सेना सहित घोड़ों को लाने के लिये भेजा। हुमायूँ ने यह सुनकर झट जाने आने का रास्ता बंद कर दिया। कामराँ ने दुर्ग से और शेर अली ने बाहर से आक्रमण किया पर परास्त हो दोनों को भागना पड़ा। तब से युद्ध रुक गया। (तबकाते-अकबरी)

दोस्त खाविंद मदारिचः[1] को बादशाह के पास भेजा कि ईश्वर के लिये मिर्जा कामराँ जो कुछ प्रार्थना करें उसको मान लीजिए और ईश्वर के दासों को कष्ट से छुट्टी दीजिए।

बादशाह ने उनके लिये बाहर से नौ भेड़ें, सात कंटर गुलाबजल, एक कंटर निम्बू का शर्वत, तिरसठ थान और कई अथवहियाँ भेजी[2] और लिखा कि उन्हीं के कारण मैं दुर्ग बलपूर्वक नहीं ले सकता कि कहीं शत्रुगण उनसे और प्रकार का बर्त्ताव न करें।

उन्हीं दिनों सुलतान बेगम की जो दो वर्ष की थी मृत्यु हो गई। बादशाह ने लिखा कि यदि बल-पूर्वक दुर्ग पर अधिकार किया जाता तो मिर्जा मुहम्मद अकबर भी कभी ही लुप्त हो जाते।

बाला हिसार में संध्या से सबेरे तक सर्वदा मनुष्यों का आना जाना और हल्ला रहता था पर जिस रात्रि[3] को मिर्जा कामराँ भागे उस दिन

---

(१) फकीर मदार को माननेवाला होने से मदारिचः कहलाया— बेगमों ने इसी से यह संदेशा भेजा था। जिस प्रकार काबुल के पहले घेरे में कामराँ ने इसे हुमायूँ के पास भेजा था उसी प्रकार इस बार भी संधि की बात के लिए भेजा होगा जिससे वह बेगमों का भी संदेशा ला सका।

(२) हुमायूँ ने ख्वाजा ही के हाथ यह भेंट और संदेशा भेजा होगा।

(३) २७ अप्रैल सन् १५४७ ई० को (७ रबीउल् अव्वल ९५४ हि०) कामराँ ने भागने के पहले संधि का प्रस्ताव किया था पर बादशाह के कहने पर कि वह स्वयं आकर क्षमाप्रार्थी हो वह नहीं आया। नामूस-बेग (बापूस) और कराच.खाँ से यह बड़ा क्रोधित था, इससे उसने नामूसबेग के तीन युवा पुत्रों को मरवाकर उनके शवों को नगर की दीवाल से बाहर फेंकवा दिया। इस कठोर कार्य से बाहर और भीतर, दोनों ओर के मनुष्य उससे घृणा करने लगे। उसने कराच.खाँ के पुत्र सर्दार बेग को

संध्या बीत चुकी थी और सोने का भी समय हो गया था तब भी कुछ शब्द नहीं था। एक सीढ़ी थी जिससे मनुष्य नीचे से ऊपर आते जाते थे। जिस समय नगर के लोग सुख से सो रहे थे कि शस्त्र कवच आदि की झनझनाहट एक साथ आने से आपस में कहने लगे कि क्या शब्द है। घुड़साल के सामने हो लगभग एक सहस्र के मनुष्य खड़े थे। हम लोग शंका में ही पड़े थे कि एक बार ही वे बिना कुछ कहे चल दिए। कराचःखाँ के पुत्र बहादुर खाँ ने आकर समाचार दिया कि मिर्जा भाग गए[1]। डोरी को दीवाल पर फेंक कर ख्वाजा मुअज्जम को उठा लिया[2] गया।

हम लोगों और बेगमों आदि के जो मनुष्य बाहर थे उन लोगों ने हम तक आनेवाले ऊपर के द्वार को खोल दिया। बेगा बेगम ने कहा कि अपने घरों को चला जावे। मैंने कहा कि कुछ समय तक धैर्य रखिए, गली से जाना पड़ेगा, कहीं बादशाह के यहाँ से कोई आता हो। इसी

भी डोरी से बँधवाकर दुर्ग पर से लटकवा दिया था। (तबकाते-अकबरी, इलिअट डाउसन, जि० ५ पृ० २२७)

(१) निजामुद्दीन अहमद लिखता है कि मिर्जा कामराँ खिज्र ख्वाजः की ओर दीवाल को फोड़कर सर्दारों (बाहरवाले जिन्होंने भागने की सम्मति दी थी) के बतलाए रास्ते से भाग गए। खिज्रख्वाजः काबुल के बाहर एक स्थान है। भागने का समाचार मिलने पर हुमायूँ ने कामराँ का पीछा करने के लिये सवार भेजा था परंतु पकड़े जाने पर कहने सुनने पर वे छोड़ दिए गए। जौहर लिखता है कि हिंदाल भेजे गए थे और निजामुद्दीन अहमद लिखता है कि हाजी अहमद कूकी भेजे गए थे।

(२) ख्वाजा मुअज्जम काबुल में ही था और कामराँ स्यात् उसे अपने साथ लिवा जाता था पर वह साथ न जाकर लौट आया और बेगमों आदि ने रस्सी के द्वारा उसे दुर्ग के भीतर ले लिया था।

समय अंबर नाजिर आया और बोला कि बादशाह ने आज्ञा दी है कि जब तक हम न आवें तब तक उन घरों से कोई न निकले। कुछ समय व्यतीत होने पर बादशाह आए और दिलदार बेगम और मुझ से मिले। इसके अनतर बेगा बेगम और हमीदा बानू से मिलकर उन्होंने कहा कि इस गृह से झट निकलिए, ईश्वर मित्रों को ऐसे गृह से बचावे और यह शत्रुओं के भाग्य में हो। नाजिर से कहा कि तुम एक ओर ठहर जाओ और एक ओर तर्दी मुहम्मद खाँ रहे जिससे बेगमें बाहर जावें। अंत में सब आई और वह रात्रि बादशाह की सेवा में प्रसन्नता के साथ ऐसी व्यतीत हो गई कि थोड़े समय में सवेरा हो गया।

माहचूचक बेगम, खानिश आगा[1] और दूसरे हरमों से जो बादशाह के साथ सेना में थीं उनसे हम लोग भी मिलीं।

---

(१) माहचूचक बेगम—बैराम ओगलाँ और फरेदूं खाँ की बहिन थी।। सन् १५४६ ई० में इसका विवाह हुमायूँ के साथ हुआ, १५३५ ई० में मुहम्मद हकीम और १५५४ ई० मे फर्रुखफाल दो पुत्र हुए। पुत्री चार हुई जिसके नाम बख्तुन्निसा, सकीना बेगम, अमनः बेगम और फख्रु-न्निसा बेगम हैं। जब हुमायूँ ने बदख्शाँ पर चढ़ाई की थी तब यह साथ थी और उनके माँदे होने पर उसने बड़ी सेवा की थी। सन् १५५४ ई० में हुमायूँ ने मिर्जा हकीम को नाम के लिये काबुल का सूबेदार नियत किया और मुनइम खाँ के हाथ कुछ प्रबंध का भार सौंपा। सन् १५५३ ई० में अकबर ने इन नियुक्तियों को ज्यों का त्यों रहने दिया। सन् १५६१ ई० में मुनइम खाँ अपने पुत्र गनी को अपना पद सौंप दर्बार में गया परंतु गनी की अयोग्यता के कारण बेगम ने उसे काबुल से निकाल दिया और कुल प्रबंध अपने हाथ में ले लिया। बेगम ने क्रमशः तीन सर्दारों को प्रबध में अपना सहायक बनाया और मरवा डाला। अकबर ने मुनइम खाँ को कुछ सेना सहित प्रबध ठीक करने के लिये भेजा पर जलालाबाद

जिस समय बादशाह बदख्शाँ गए उस समय माहचूचक बेगम को पुत्री उत्पन्न हुई। उसी रात्रि बादशाह ने स्वप्न में देखा कि मेरी मामा फख्रुन्निसा और दौलतबख्त दोनों द्वार से भीतर आई हैं और उन्होंने कुछ वस्तु लाकर हमारे आगे रख दी है। बहुत कुछ विचार पर कि इसका क्या फल है अंत में यह समझ में आया कि पुत्री हुई है। इससे दोनों के नाम से निसा और बख्त लेकर संक्षेप की चाल पर उसका नाम बख्तुन्निसा बेगम[1] रखा गया।

में बेगम ने उसे परास्त कर भगा दिया दिया। इसके अनंतर हैदर कासिम कोहबर को मंत्री बनाया जिसके साथ स्यात् स्वयं विवाह भी कर लिया था। सन् १५६४ ई० में शाह अबुलमआली भारत से भागकर काबुल आया। इसके साथ बेगम ने अपनी पुत्री फख्रुन्निसा बेगम का विवाह कर दिया और धीरे धीरे काबुल में वह प्रधान हो गया। उसी वर्ष अबुल मआली ने अपने हाथ से माहचूचक बेगम और हैदर कासिक कोहबर को मार डाला। मिर्जा सुलेमान ने बदख्शाँ से आकर काबुल पर अधिकार कर लिया और इसे मार डाला।

खानिश आगा—जूजुक मिर्जा ख्वारिज्मी की पुत्री और हुमायूँ की स्त्री थी। सन् १५५३ ई० के जिस महीने में मिर्जा हकीम हुए थे उसी महीने में इसे इब्राहीम पैदा हुआ था (१५ जमादिउल अव्वल सन् ९६० हि० अर्थात् १९ अप्रैल सन् १५५३ ई०) पर बचपन ही में जाता रहा। बायजीद इसके पुत्र का नाम फर्रुखफाल लिखता है पर यह ठीक नहीं है क्योंकि वह माहचूचक बेगम का पुत्र था और गुलबदन बेगम तथा अबुल्फजल इसके विरुद्ध लिखते हैं तुर्की एडमिरल सीदी अली रईस जो सन् १५५५ ई० से भारत और काबुल होता हुआ तुर्की गया था लिखता है कि वह उस समय जीवित था।

(१) बख्तुन्निसा बेगम—सन् १५५० ई० में जन्म हुआ था। सन् १५८४-८५ ई० में हकीम की मृत्यु पर अपने पुत्र दिवाली सहित काबुल

माहचूचक बेगम को चार पुत्री और दो पुत्र हुए—बख्तुन्निसा बेगम, सकीना बेगम[1], अमनः बानू बेगम, मुहम्मद हकीम मिर्जा और फर्रुखफाल मिर्जा[2]। जिस समय बादशाह हिंदुस्थान को चले उस समय माहचूचक बेगम गर्भवती थीं। काबुल में पुत्रोत्पत्ति हुई जिसका फर्रुखफाल मिर्जा नाम रखा गया। कुछ दिन के अनतर खानिश आगा को पुत्र हुआ जिसका नाम इब्राहीम सुलतान मिर्जा रखा गया।

बादशाह ने पूरे डेढ़ वर्ष[3] काबुल में सुख और प्रसन्नता के साथ व्यतीत किए।

मिर्जा कामराँ काबुल से भागने पर बदख्शाँ गए जहाँ वे तालिकान में ठहरे हुए थे। बादशाह ओरतः बाग में थे। सबेरे की निमाज से उठने पर समाचार मिला कि मिर्जा कामराँ के सर्दारगण जो बादशाह की सेवा में थे भाग गए। जैसे कराचः खाँ, मुसाहिब खाँ, मुबारिक खाँ, बापूस

से भारत आई। सलीम को समझाने के लिये यह भी सलीमा सुलतान बेगम के साथ गई थी।

(१) सकीना बानू बेगम—अकबर के मित्र नकीब ख़ाँ कजविनी के पुत्र शाह गाजी खाँ से ब्याही थी।

(२) गुलबदन बेगम ने लिखा है कि चार पुत्री हुईं पर नाम तीन ही के दिए हैं इससे यही समझना ठीक होगा कि उनमें एक पैदा होते ही मर गई होगी क्योंकि यदि नाम-करण हो गया होता तो बेगम उस नाम को न भूल जाती और यदि ऐसा हो जाता तो स्वभावानुसार पूछकर लिख देती। दूसरे इतिहासकारों ने एक पुत्री का नाम फख्रुन्निसा लिखा है जिसका अबुलमआली और ख्वाजा हसन नक्शेबंदी के साथ विवाह होना लिखा गया है, पर वह बख्तुन्निसा ही रही होगी।

(३) १२ जून सन् १५४८ ई० को वे उत्तर की ओर रवाना हुए थे इससे डेढ़ वर्ष कुछ अधिक है।

आदि[1] बहुत से कापुरुष रात्रि में भग कर बदख्शाँ गए और मिर्ज़ा कामराँ से मिल गए। बादशाह शुभ साइत में बदख्शाँ को चले और उन्होंने मिर्ज़ा कामराँ को तालिकान में जाकर घेर लिया।

कुछ समय के बाद मिर्ज़ा कामराँ ने अधीनता और आज्ञा मानना स्वीकार कर लिया और वह बादशाह की सेवा में चला आया[2]। बादशाह ने मिर्ज़ा कामराँ को कोलाब, मिर्ज़ा सुलेमान को दुर्ग जफ़र, मिर्ज़ा हिंदाल को कंधार और मिर्ज़ा अस्करी को तालिकान दिया।

एक दिन किशम[3] में खेमा ताना गया और सब भाई एकत्र हुए अर्थात् हुमायूँ बादशाह, मिर्ज़ा कामराँ मिर्ज़ा अस्करी, मिर्ज़ा हिंदाल और मिर्ज़ा सुलेमान[4]।

---

(१) कराचः खाँ और बापूस के परिवार की मिर्ज़ा कामराँ ने कितनी प्राण और मान-हानि की थी तिसपर भी ये उसके पास भागकर चले गए। निज़ामुद्दीन अहमद लिखता है कि कराचः खाँ आदि सर्दारों ने हुमायूँ से प्रस्ताव किया कि ख्वाजा गाज़ी वज़ीर को मारकर ख्वाजा कासिम को उसपद पर नियुक्त करना चाहिए। हुमायूँ के नहीं मानने पर वे भाग गए।

(२) तालिकान दुर्ग के बाहर युद्ध में परास्त होने पर दुर्ग में जा बैठा और दो महीने के घेरे पर अधीनता स्वीकार कर बादशाह के नाम खुतबा पढ़वाया। दूसरे दिन रात्रि को भागा और बेगी नदी के किनारे ठहरा जहाँ मिर्ज़ा इब्राहीम ने आक्रमण कर उसे कैद कर लिया। वहाँ से कामराँ बादशाह के पास लाया गया। (जौहर)

(३) अबुलफजल इश्कामिस स्थान बतलाता है जो हुमायूँ की इस यात्रा से ठीक मालूम होता है।

(४) चचेरे भाई थे।

कुछ नियम[1], जो बादशाह की सेवा में आए हुए लोगों के लिए बने थे उनके अनुसार बादशाह ने आज्ञा दी कि लोटा और वर्त्तन लाओ कि हाथ धोकर सब एक साथ खाना खावें। बादशाह ने हाथ धोया तब मिर्जा कामराँ ने धोया। अवस्था में मिर्जा सुलेमान मिर्जा हिंदाल से बड़े थे, इससे दोनों भाइयों ने प्रतिष्ठार्थ झारी और थाली उनके आगे रख दी।

हाथ धोने पर मिर्जा सुलेमान ने नाक से छिनका जिसपर मिर्जा अस्करी और मिर्जा हिंदाल बहुत बिगड़े और बोले कि कैसा गँवारपन है! प्रथम हमें बादशाह के सामने हाथ धोने का क्या अधिकार है पर जब उन्होंने आज्ञा दी तब उसे बदल नहीं सकते। नाक छिनकने का क्या अर्थ है! अंत में मिर्जा अस्करी और मिर्जा हिंदाल ने बाहर जाकर हाथ धोए और तब आकर बैठे। मिर्जा सुलेमान बड़े लज्जित हुए और सब ने एक दस्तरख्वान पर भोजन किया।

बादशाह ने इस मजलिस में मुझ तुच्छ को भी याद किया और अपने भाइयों से कहा था कि लाहौर में गुलबदन बेगम कहती थीं कि मेरी इच्छा है कि सब भाइयों को एक स्थान पर देखूँ। सबेरे से सबके एक साथ बैठने के कारण यह बात मेरे ध्यान में आगई और ईश्वर ऐसी इच्छा करे कि इस मंडली को वह अपनी रक्षा मे रखे। ईश्वर पर प्रकट है कि मेरे हृदय में यह नहीं है कि किसी मुसलमान का बुरा चाहूँ तब कैसे हो सकता है कि भाइयों की बुराई चाहूँगा! ईश्वर तुम लोगों के हृदय में यही एकता का विचार रखे कि जिससे हम लोग एक बने रहें।

प्रजा में भी बड़ी प्रसन्नता फैली हुई थी क्योंकि बहुत से सर्दार और सेवक भी अपने संबंधियों और भाइयों से मिले थे जो अपने स्वामियों के विरोध से एक दूसरे से अलग अलग रहते थे, या यों कहिए कि एक दूसरे

---

(१) तोरः का अर्थ रस्म आदि है और मुख्य कर वह जिसे चंगेज खाँ ने चलाया है।

के रक्तपिपासु हो रहे थे। अब एक स्थान पर सब प्रसन्नता से दिन व्यतीत कर रहे थे।

बदख्शाँ से आने पर बादशाह काबुल में डेढ वर्ष रहे जिसके बाद बलख जाने की इच्छा की और दिलकुशा बाग में उतरे। उसी के पाईं बाग के सामने बादशाह का वासस्थान बना और कुलीबेग हवेली में जो पास थी बेगमें उतरीं।

बादशाह से कई बार प्रार्थना की गई थी कि रिवाज[1] किस प्रकार निकला हुआ होगा? बादशाह ने कहा कि सेना सहित कोहदामन से जब जाऊँगा तब तुम लोग भी जाकर रिवाज को देखना। दूसरे निमाज के समय[2]

---

(१) रिवास, रिबास, रिवाज या जिगारी (निशापुर के एक आदमी के नाम पर नाम रखा गया जिसने कि इसका पता लगाया था) की झाड़ी दो तीन फुट ऊँची होती है और देखने में चुकंदर की तरह होती है। बीच की एक या दो शाखें कुछ मोटी होती हैं और पत्तियाँ चिकनी और हरी होती हैं जो जड़ के पास हलकी बैंगनी रंग की तथा हाथ के इतनी लंबी और बड़ी होती हैं। शाख के भीतर का गूदा सफेद, हलका, रसीला और कुछ खटास लिए होता है। जड़ को राबंद कहते हैं। फूल लाल होता है और उसका स्वाद खटास और मिठास दोनों लिए होता है। इसका बीज उस पतली और लंबी शाख के सिरे पर होता है जो पौधे के बीच में साल भर में एक बार निकलती है। पहाड़ी जमीन में जहाँ बर्फ अधिक गिरती है यह होता है। सब से अच्छा फारस में पैदा होता है। औषधि के रूप यह संकोचक है, पेट शुद्ध करता है और भूख बढ़ाता है। इसके रस का अंजन आखों की रोशनी बढ़ाता है। और जौ के आंटे के साथ इसकी पुलटीस घावों को बड़ा लाभ पहुँचाती है। (मखजनुल् अदवीयः)

(२) बेगमें जाने के लिए पहले ही से तैयार बैठी थीं और रवानः होने के लिये यह इशारा पहले ही से बँधा हुआ था।

बादशाह सवार होकर दिलकुशा बाग को आए और कुली बेग की हवेली के पास जिसमें बेगमें थीं और पास ही तथा ऊँचे पर थी पहुँचकर खड़े हो गए। बेगमों ने देखा और खड़े होकर प्रणाम किया। बेगमों के प्रणाम करते ही बादशाह ने अपने हाथ से इशारा किया कि आओ।

फख्रुन्निसा मामा और अफगानी आगाचः आगे बढ़ीं। पहाड़ के नीचे दिलकुशा बाग के बीच में जो नहर थी उसे अफगानी आगा पार नहीं कर सकीं और घोड़े से गिर पड़ीं जिससे एक घटे की देर हो गई[1]। अंत में एक घटे पर बादशाह की सेवा में चले। माहचूचक बेगम के अनजान में घोड़ा कुछ ऊँचे चढ़ गया[2]। इसके लिए बादशाह को बहुत कष्ट हुआ। बाग ऊँचे पर है और अभी तक दीवार नहीं बनी थी। इसी समय बादशाह के मुख पर कुछ कष्ट[3] झलकने लगा, तब उन्होंने कहा कि तुम लोग चलो हम अफीम खाकर इस कष्ट को दूर करके आवेंगे। हम लोग आज्ञानुसार थोड़ा रास्ता चले थे कि बादशाह आ पहुँचे। मुख की मलिनता अच्छी तरह साफ होगई थी और प्रसन्नता आ गई थी।

चाँदनी रात थी। बात करते कहानी कहते चले। खानिश आगाचः, जरीफ गानेवाली, सरोसही और शाहिम आगा धीरे धीरे कव्वाली गा रही थीं।

---

(१) गिरना अशकुन माना जाता है इसलिये कुछ देर तक ठहर कर आगे बढ़े। इन अशकुनों का फल भी यही हुआ कि बलख की चढ़ाई का कुछ भी फल नहीं निकला।

(२) इसका अर्थ घोड़े का अलूफ करना भी हो सकता है पर बाग की दीवाल के नहीं होने से यहाँ यही ठीक ठीक समझा गया है।

(३) दूसरी दुर्घटना भी कुशकुन ही मानी गई इसीसे हुमायूँ को कष्ट हुआ।

लग़मान[१] पहुँचने तक शाही खेमे, शमिश्राने और बेगमों की कनात नहीं आ चुकी थी, केवल उस समय तक मेहुआमेज कनात[२] आई थी। बादशाह और हम सब तथा हमीदा बानू बेगम भी उसी कनात में बादशाह की सेवा में दोपहर से रात तीन घड़ी बीत जाने तक रहे। अंत में हम सब वहीं उस सत्यनिष्ठ की सेवा में सोए और सबेरे इच्छा प्रकट की कि जाकर पहाड़ पर रिवाज देखें। बेगमों के घोड़े डीह में थे जिनके आने तक सैर का समय निकल जाता। बादशाह ने आज्ञा दी कि बाहर जिसके घोड़े हों सबको ले आओ। जब सब आगए तब उन्होंने सवार होने को कहा।

बेगा बेगम और माह चूचक बेगम अभी वस्त्र पहिर रही थीं। मैंने बादशाह से प्रार्थना की कि यदि आज्ञा हो तो जाकर उन्हें लिवा लाऊँ। उन्होंने कहा कि जाकर झट लिवा लाओ। मैने बेगा, माहचूचक आदि बेगमों और हरमों से कहा कि मै बादशाह के विचार की दासी हूँ—तुम लोग किस लिये देर करती हो इन लोगों को एकत्र कर मै लिवा ला रही थी कि बादशाह मेरे सामने आ पहुँचे और कहने लगे कि गुलबदन! अब सैर का समय निकल गया। वहाँ पहुँचने तक हवा गरम हो जायगी ईश्वरेच्छा से दोपहर को निमाज पढ़कर चलेंगे। एक ही खेमे में वे हमीदा बानू बेगम के साथ ठहर गए। दो पहर की निमाज के अनंतर घोड़ों के आने तक दो निमाज हुई। इसी समय बादशाह चल दिए।

पहाड़ के नीचे जंगल में हर स्थान पर रिवाज की पत्तियाँ निकल

---

(१) मूल ग्रंथ के जिल्द बाँधने में यहाँ एक पन्ना आगे चला गया था। लगमान की सैर यही ठीक मालूम होती है क्योंकि कामराँ के अंधे होने के पहले ही हुमायूँ की सैर का पन्ना ठीक मालूम पड़ता है।

(२) यह कनात हमीदः बानू बेगम की ही रही होगी।

आई थीं। वहाँ घूमते फिरते संध्या हो गई। वहीं कनात और खेमे खड़े कर ठहर गए। वह रात वहीं प्रसन्नता से व्यतीत हो गई। और हम लोग भी उन्हीं सत्यनिष्ठ की सेवा में रहे। सबेरे निमाज के समय बाहर गए और बाहर ही से बेगा बेगम, हमीदा बानू बेगम, माहचूचक बेगम, मुझे और सब बेगमों को अलग अलग पत्र लिखा कि अपने अपने दोषों को मानकर प्रार्थना-पात्र लिखो[१]। ईश्वरेच्छा से बिदा होकर मैं फर्जः या इस्तालीफ में सेना से जा मिलूँगा और नहीं तो अलग रहूँगा। अंत में हम लोगों ने क्षमा के लिए पत्र लिखकर बादशाह के पास भेजा। तब बादशाह और हम सब बेगमें सवार होकर लगमान से बिहजादी आए। रात में हर एक अपने स्थान को गया और सबेरे वहीं भोजन किया। दोपहर की निमाज के समय सवार होकर फर्जः आए।

हमीदा बानू बेगम ने हम लोगों के गृहों पर नौ नौ मेंड़ें भेजीं। एक दिन प्रथम ही बीबी दौलतबख्त फर्जः आ चुकी थीं और उन्होंने खाने का बहुत सा सामान, दूध, दही, शीरा और शर्बत आदि तैयार किया था। वह रात सुख से व्यतीत होने पर सबेरे ही हमलोगों ने फर्ज़ः के ऊपर के सुंदर झरने को देखा। वहाँ से इस्तालीफ जाकर बादशाह तीन दिन वहाँ रहे जिसके अनंतर कूच करके ६५८ हि[२] में बलख को चले।

दर्रा पार करने पर बादशाह ने मिर्जा कामराँ, मिर्जा सुलेमान और मिर्जा अस्करी को आज्ञापत्र भेजा कि हम उजबेगों से युद्ध करने जा रहे

---

(१) हुमायूँ को अप्रसन्न हो जाने का कुछ झक सा रहता था। यह भी संभव है कि यहाँ एक पन्ना और भी रहा हो जिसमें बेगमों के कुछ और दोष लिखे रहे हों। इसके अनन्तर बेगमों को बातचीत आदि का समय नहीं मिला और वे अलग अलग रहीं।

(२) मिस्टर अर्सकिन ने ९५६ हि० (१५४९ ई०) को ठीक माना है और विवरण भी इससे कुछ भिन्न दिया है।

हैं। यह समय एकता और भाईपन का है, चाहिए कि जल्दी आओ। मिर्जा सुलेमान और मिर्जा अस्करी[1] आकर बादशाह से मिल गए। सब कूच करते हुए बलख पहुँचे।

पीर मुहम्मद खाँ[2] बलख में था और पहले ही दिन उसके सैनिकों ने निकलकर व्यूह रचा। शाही सेना विजयी हुई और पीर मुहम्मद के सैनिकगण परास्त[3] होकर नगर में चले गए। सबेरे पीर मुहम्मद खाँ ने विचार किया कि चगत्ताई बलवान है, मै युद्ध नहीं कर सकूँगा, इससे अच्छा होगा कि निकल कर चल दूँ। इधर बादशाही सर्दारों में से एक ने प्रार्थना की कि कप मैला हो गया है यदि यहाँ से हटाकर जंगल में तैयार किया जाय तो ठीक हो[4]। बादशाह ने आज्ञा दे दी कि ऐसा करो।

---

(१) निजामुद्दीन अहमद लिखता है कि मिर्जा अस्करी ने शत्रुता दिखलाई और नहीं आया।

(२) जानी बेग का पुत्र था और इसी का पुत्र प्रसिद्ध अब्दुल्लाखाँ उजबेग था। इसने ९७४ हि० (१५६७) तक राज्य किया।

(३) पहले तीन सौ सवार शाह मुहम्मद सुलतान की अध्यक्षता में परास्त हुए तब दूसरे दिन वह स्वयं अबिदखाँ के पुत्र अबुलअजीज खाँ और हिसार के सुलतान के साथ युद्ध को निकला और परास्त हो दुर्ग में चला गया। (तबकाते-अकबरी)

(४) चगत्ताई सर्दारों ने सभा करके निश्चित किया कि बलख नदी पार न की जाय बल्कि पीछे हटकर दर्रा गज में जो काबुल के रास्ते पर है एक दृढ स्थान पर ठहरा जाय जिससे कुछ दिन में बलख दुर्ग आपही टूटेगा। बहुत जोर देने से हुमायूँ ने इस बात को मान लिया जिससे यह गड़बड़ हो गया। (तबकाते-अकबरी)

सामान और बोझों में हाथ लगाते ही दूसरे सैनिकगण घबड़ा गए कुछ मनुष्य चिल्लाने लगे कि सेना कम है[१]। ईश्वर की इच्छा ऐसी ही थी कि शत्रु के बिना प्रयत्न और पास न होने पर भी अकारण सेना भाग गई। उजबेगों को समाचार मिला कि शाही सेना भाग गई जिससे उन्हें आश्चर्य हुआ। शाही चोबदारों ने बहुत कुछ प्रयत्न किया पर कुछ लाभ नहीं हुआ और मना करने पर भी सेना नहीं रुकी। वह भाग गई पर बादशाह देर तक खड़े रहे और जब देखा कि कोई नहीं रहा तब लाचार वे स्वयं भी चल दिए। मिर्जा अस्करी और मिर्जा हिंदाल को पता नहीं था कि शाही सेना भाग गई है। वे सवार होकर आए तब देखा कि कप में कोई नहीं है और उजबेग बाहर निकलने ही पर हैं ये भी कंदोज की ओर चल दिए। बादशाह कुछ दूर गए थे कि खड़े हो गए और बोले कि अभी तक भाइयों का पता नहीं मिला, आगे कैसे चलें। उन सर्दारों से जो साथ थे कहा कि कोई है जो मिर्ज़ों का समाचार लावे। किसी ने उत्तर नहीं दिया और कोई नहीं गया। इसके अनतर मिर्जा के आदमियों के यहाँ से कंदोज से समाचार आया कि सुना है कि पराजय हुई है पर नहीं ज्ञात है कि मिर्जे किधर गए। इस पत्र के मिलने से बादशाह को और भी दुख हुआ। खिज्र ख्वाजः खाँ ने कहा कि यदि आज्ञा हो तो हम जाकर समाचार लावें। बादशाह ने कहा कि ईश्वर कृपा रखे और ऐसा हो कि मिर्जा कंदोज ही गए हों। दो दिन के अनतर खिज्रख्वाजः खाँ मिर्जा हिंदाल का

---

(१) जौहर और निजामुद्दीन अहमद दोनों ही लिखते हैं कि मिर्जा कामराँ के साथ नहीं होने से सर्दारों और सैनिकों को यह डर लगा हुआ था कि वह काबुल पर अधिकार करके कहीं उनके स्त्री पुत्रादि को कष्ट न दे। यही घबड़ाहट का मुख्य कारण था यद्यपि यह भी किसी इतिहासकार ने लिखा है कि बुखारा से उजबेगों की भारी सेना के आने का समाचार मिला था।

समाचार लाए कि वे कुशलपूर्वक कंदोज पहुँच गए। यह समाचार सुनकर बादशाह बहुत प्रसन्न हुए।

बादशाह ने मिर्जा सुलेमान को उनके स्थान दुर्ग जफर को विदा किया[1] और वे स्वयं काबुल आए।

मिर्जा कामराँ को जो कोलाब में थे एक चतुर कुटनी स्त्री तुर्खान बेगः ने सुझाया कि तुम हरम बेगम पर प्रेम प्रकट करो जिसमें तुम्हारा भला है। मिर्जा कामरां ने उस बुद्धिहीन के कहने पर एक पत्र और रूमाल[2] बेगी आगः के हाथ हरम बेगम को भेजा। इस स्त्री ने पत्र और रूमाल को ले जाकर हरम बेगम के सामने रखा और मिर्जा कामराँ का प्रेम और स्नेह उससे कहा। हरम बेगम ने कहा कि अभी इस पत्र और रूमाल को रखो जब मिर्जे बाहर से आवें तब इसे लाओ। बेगी आगः रोने गाने और बिनती करने लगी कि मिर्जा कामराँ ने इसको आपके लिए भेजा है और वे बहुत दिनों से आप पर प्रेम रखते हैं और आप ऐसी कठोरता करती हैं। हरम बेगम ने बड़ी घृणा और क्रोध से उसी समय मिर्जा सुलैमान अपने पति और मिर्जा इब्राहीम अपने पुत्र को बुलवाकर कहा कि मिर्जा कामराँ ने तुम लोगों को कायर समझ लिया है जो ऐसा पत्र मुझे लिखा है। मैं इसी योग्य हूँ कि मुझे ऐसे लिखें। मिर्जा कामराँ तुम्हारा बड़ा बड़ा भाई है और मैं उसकी भयओ[3] होती हूँ तब भी मुझको ऐसा पत्र

(१ उजबेगों ने पीछा किया जिसके हरावल से मिर्जा सुलेमान परास्त होकर चल दिए। बादशाह को स्वयं शत्रु से लड़कर अपने लिए रास्ता बनाना पड़ा था। (तबकाते-अकबरी)

(२) रूमालों पर कारचोब से चित्र उभाड़े जाते हैं और इन पर रख कर पत्र, भेंट आदि दिए जाते है।

(३) किलीन शब्द का अर्थअनुज-बधू अर्थात् छोटे भाई की स्त्री है।

भेजा। इस स्त्री को पकड़वाकर टुकड़े टुकड़े करवा डालो जिससे औरों को डर हो और कोई दूसरों की स्त्रियों पर कुविचार की आँख न डाले। मनुष्य की बच्ची इस स्त्री के योग्य था कि ऐसी वस्तुएँ लाने और मुझसे तथा मेरे पुत्र से नहीं डरे[1]।

उसी समय बेगी आग: को जिसकी मृत्यु आ पहुँची थी पकड़कर टुकड़े टुकड़े कर डाला गया तथा मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम ने इस कारण मिर्जा कामराँ से बुरा मान लिया और उसके यहाँ तक शत्रु बन गए कि बादशाह को लिखा कि वह शत्रुता की इच्छा रखता है और इससे बढ़कर और किसी प्रकार यह नहीं जाना जा सकता कि ठीक बलख जाते समय उसने साथ नहीं दिया।

इसके अनंतर मिर्जा कामराँ ने कोलाब मे शका[2] के मारे इससे अच्छा उपाय नहीं पाया कि स्वय एकातवासी[3] हो जावे। उसने अपने

---

(१) बेगम युद्धप्रिय प्रिय थी और सेना पर भी उसका प्रभाव था जिससे उसकी सम्मति बिना मिर्जा सुलेमान कभी युद्ध को नहीं जाते थे। इसी कारण यहाँ अपने पति के स्थान पर अपने को और पुत्र को कहा। कामराँ का प्रेम और तुर्खान बेग: की राय इसकी सेना ही के लिये थी न कि उसके लिये।

(२) कोलाब में कामराँ की स्त्री और हरम बेगम की बहिन माह बेगम के पिता सुलतान वैस किबचाक और भाई शुक्रअली बेग थे। शुक्रअली बेग से और मिर्जा कमराँ मे कुछ झगड़ा हो गया था जिससे उसने कोलाब पर चढ़ाई की। कामरां ने मिर्जा अस्करी को सेना सहित भेजा पर वह दो युद्धो में परास्त होकर लौट गया। (तबकाते-अकबरी)

(३) मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम ने किशम और कंदोज से सेना सहित मिर्जा कामराँ पर चढ़ाई की परतु अपने में युद्ध करने की सामर्थ्य न देखकर वह रौस्तक चला गया। (तबकाते-अकबरी)

पुत्र मिर्जा अबुलकासिम (इब्राहीम) को अस्करी के यहाँ भेज दिया और अपनी पुत्री आयशा सुलतान बेगम[1] को साथ लेकर वह तालिकान की ओर चला। उसकी स्त्री खानम भी थी जिससे उसने कहा कि तुम अपनी

---

(१) आयशा सुलतान बेगम मीरानशाही—फरिश्ता और खफी खाँ के अनुसार मिर्जा कामराँ एक पुत्र और तीन पुत्रियों को छोड़कर मरा था।

गुलबदन बेगम पुत्र का नाम अबुल्कासिम इब्राहीम लिखती हैं जो अकबरनामे में भी है। गुलबदन बेगम ने सबसे बड़ी पुत्री का नाम हबीबा और दूसरों का हाजी बेगम और आयशा सुलतान बेगम लिखा है। मुहतरिमा खानम की पुत्री का जिक्र आकर रह गया है नाम नहीं दिया है। फरिश्ता नाम न देकर केवल यह लिखता है कि (क) एक पुत्री का विवाह इब्राहीम हुसेन मिर्जा बैकरा से हुआ था। (ख) दूसरी पुत्री का विवाह मिर्जा अब्दुर्रहमान मुगल से हुआ था और (ग) तीसरी पुत्री का विवाह फख़्रुद्दीन मशहदी से हुआ था जो सन् १५८० ई० के लगभग मर गया।

खफी खाँ नाम न देकर फरिश्ता ही का समर्थन करता है क्योंकि नाते में इब्राहीम हुसेन बैकरा चचेरा भाई लग सकता है और मिर्जा अब्दुर्रहमान जो ब्लौकमैन की सूची का नं० १८३ हो सकता है दोगलात् मुगल और मिर्जा हैदर का चचेरा भाई है।

इब्राहीम हुसेन मिर्जा बैकरा की स्त्री का नाम गुलरुख बेगम था और सन् १५७३ ई० में पति की मृत्यु पर वह गुलबदन बेगम के साथ सन् १५७६ ई० में हज को गई। इन्हींका नाम ९८३ हि० के यात्रियों में अबुलफजल ने हाजी बेगम और गुलएजार बेगम देकर इन्हें कामराँ की पुत्रियाँ लिखा है। गुलरुख-बेगम का ही नाम हाजी बेगम है जिससे भेंट करने अकबर गए थे और जो सन् १५८३ ई० में मरी। गुलएजार बेगम मुहतरिमा खानम की पुत्री हो सकती है।

पुत्री सहित पीछे से आओ। हम जहाँ ठहरेंगे तुमको वहाँ बुला लेंगे। पर उस समय तक तुम खोस्त और अंदराब में जाकर रहो। पूर्वोक्त खानम का उजबेग खानों से संबंध था। इसी बीच इसके संबंधी उजबेगों ने और और उजबेगों से कह दिया कि यदि इच्छा माल, दास और दासी लूटने की हो तो ले जाओ और बेगम को छोड़ दो क्योंकि आयशा सुलतान खानम[1] का भतीजा यदि कल सुनेगा कि तुम सभों ने बेगम को तंग किया तो वह अवश्य क्रोधित होगा। सैकड़ों उपाय और बहाने कर, दुख उठा और सामान खोकर बेगम ने उजबेगों के फंदों से छुटकारा पाया तथा वह खोस्त और अंदराब पहुँचकर वहीं रहने लगी।

मिर्जा कामराँ ने बलख के पराजय का पता पाया और विचारा कि

हबीबा बेगम का आक सुलतान से सन् १५५१–२ ई० में संबंध टूटने पर उसका दूसरा विवाह (ख) और (ग) में से किसी से हो सकता है। आक सुलतान के मक्का जाने के अनंतर फिर उसका नाम नहीं सुन पड़ा।

आयशा सुलतान बेगम का भी (ख) और (ग) में से किसी से विवाह हुआ होगा।

(१) आयशा सुलतान खानम और खालिस, मुगल खानम, चगत्ताई मुगल सुलतान महमूदखाँ की पुत्री थी। सन १५०३ ई० में अपने पिता के घर की स्त्रियों के साथ शैबानी खाँ के हाथ पकड़ी गई जिसने इससे विवाह कर लिया। उससे एक पुत्र मुहम्मद रहीम सुलतान हुआ। यह तुर्की भाषा में कविता भी करती थीं। फखी अमीरी की पुस्तक 'स्त्री-कवियों के जीवन-चरित्र' में भी इसका नाम आया है। हैदर लिखता है कि तारीखे-रशीदी के लिखे जाने के समय इसके और दो मुगल खानमों (दौलत और कतलिक) के जिनका विवाह भी उसी समय बलात् हुआ था पुत्रगण जीवित और राज्य कर रहे थे।

पहले की तरह मेरे ऊपर बादशाह की कृपा नहीं रही तब कोलाब से निकलकर इधर उधर घूमने लगा[1]।

इसी समय बादशाह काबुल से निकल कर जब किब्चाक घाटी में पहुँचे तब अनजान में नीची भूमि पर उतरे थे कि मिर्जा कामराँ एकाएक ऊँचाई पर से सशस्त्र और सन्नद्ध हो बादशाह पर आ टूटा[2]। ईश्वर की इच्छा ऐसी ही थी कि एक हृदय के अंधे नीच अत्याचारी अभागे बुद्दू[3] ने बादशाह को चोट पहुँचाई जिसने उनके सिर तक पहुँचकर उनके मस्तक और आँखों को रक्त से भर दिया।

जिस प्रकार मुगल-युद्ध में बाबर बादशाह के सिर पर एक मुगल ने चोट पहुँचाई थी जिससे लंबी टोपी और पगड़ी तो नहीं कटी पर उनका

---

(१) जब मिर्जा कामराँ रोस्तक भागा तब रास्ते में उजबेगों ने उसे लूट लिया। उस हालत में वह जुहाक और बामियान की ओर चला। हुमायूँ ने इसका पता पाकर कुछ सेना वहाँ भेजी। कराचः खाँ, कासिम हुसेन सुलतान आदि ने उससे कहलाया कि आप जुहाक और बामियान आयँ और हम लोग युद्ध के समय आपसे मिल जायँगे। हुमायूँ के साथ वहाँ पहुँचने पर वे उससे मिल गए। तब कामराँ ने बादशाह से युद्ध किया। (तबकाते-अकबरी)

(२) कराचः खाँ की राय से अपने धायभाई हाजी मुहम्मद को कुछ सेना सहित सर्तान दर्रे पर अधिकार करने को भेजकर और स्वयं किबचाक दर्रे को पार कर हुमायूँ घाटी में उतरे। मिर्जा कामराँ के आने का समाचार सुनकर वे दर्रे में घुसे। यहाँ से उनके सर्दार भागे और हुमायूँ परास्त हुए। (जौहर)

(३) अबुलफजल लिखता है कि बाबा बेग कोलाबी ने जान या अनजान में तलवार मारी जिसपर बादशाह के मुड़कर देखने से वह घबड़ा गया।

सिर चोटैल हो गया था[१]। वैसी ही इन पर भी बीती। हुमायूँ बादशाह सर्वदा आश्चर्य किया करते और कहा करते थे कि कैसा सिर है कि टोपी और पगडी न कटी हो और उस पर चोट पहुँच जावे।

बादशाह क़िबचाक़ के पराजय के अनंतर बदख्शाँ गए और मिर्जा हिंदाल, मिर्जा सुलेमान और मिर्जा इब्राहीम सेवा में आए। बादशाह काबुल गए और मिर्जे भी एकमत होकर और एक हृदय[२] होकर साथ गए। मिर्जा कामराँ भी उसी ओर चले[३]। बादशाह ने हरम बेगम से कहलाया कि भयओ से कहो कि बहुत जल्दी बदख्शाँ की सेना सुसज्जित करके भेज दे। बेगम ने थोड़े ही दिनों में कई सहस्र मनुष्यों को घोड़े, शस्त्र और सामान आदि देकर तथा स्वयं दरें तक साथ आकर सेना को आगे भेज दिया। वे स्वयं लौट गईं और सेना पहुँचकर बादशाह से मिल गई।

---

(१) 'ताम्बोल ने मेरे सिर पर भारी तलवार से चोट दी। आश्चर्य की बात है। कि यद्यपि मेरे खूद अर्थात लोहे की टोपी पर चोट भी नहीं आई पर मेरा सिर बहुत चोटैल हो गया था'। बाबर का आत्मचरित्र पृ० २६६, १११।

(२) जाने के पहले हुमायूँ ने सब सर्दारों को एकत्र करके अधीनता की शपथ खाने को कहा जिस पर हाजी मुहम्मद कोका ने प्रस्ताव किया कि इसमें बादशाह भी सम्मिलित हों। अंत में सब ने शपथ खाई और बादशाह ने उस दिन व्रत कर उस घटना की महत्ता और भी बढ़ा दी। (जौहर)

(३) मिर्जा कामराँ ने बादशाह का जब्बा अर्थात् मोटे कपड़े का अंगा दिखलाकर उनकी मृत्यु की सूचना दी जिससे उनका काबुल पर अधिकार हो गया था। वहीं से वे युद्धार्थ चले थे। (जौहर)

चारकाराँ या करा बाग[1] में मिर्जा कामराँ से युद्ध हुआ जिसमें शाही सेना ने बलवती हो विजय प्राप्त की[2] और मिर्जा कामराँ को परास्त किया। मिर्जा कामराँ भागकर दर्रो और लगमानात[3] को चला गया।

मिर्जा कामराँ के दामाद श्राक सुलतान ने कहा कि तुम सर्वदा हुमायूँ बादशाह से शत्रुता रखते हो इसका क्या अर्थ है ? यह ठीक नहीं है। बादशाह की सेवा करो और आज्ञा मानो या मुझे छुट्टी दो कि लोग हम लोगों को पहिचान लें। मिर्जा कामराँ ने श्राक सुलतान पर बिगड़कर कहा कि क्या मेरी अवस्था यहाँ तक पहुँच गई कि तू मुझे समझावे। श्राक सुलतान ने भी बिगड़कर कहा कि यदि हम तुम्हारे साथ रहें तो हमारी सेवा हराम हो। श्राक सुलतान उसी समय अपनी स्त्री को साथ ले अलग होकर बक्खर को चला गया। मिर्जा कामराँ ने शाह हुसेन मिर्जा को पत्र[4] भेजा कि श्राक सुलतान मुझको क्रोधित करके गया है, यदि वहाँ

---

(१) काबुल के उत्तर गोरबद घाटी के मुहाने पर है।

(२) हुमायूँ ने युद्ध के पहले मिर्जा कामराँ को समझाने के लिये शाह सुलतान को भेजा और कहलाया कि काबुल इस योग्य नहीं है कि उसके लिये युद्ध किया जाय। हम लोगों को चाहिए कि अपने परिवारों को दुर्ग में छोड़कर और मिलकर लगमानात होते हुए भारत पर चढ़ाई करें। कामराँ ने यह मान लिया था पर कराचः खाँ ने इस प्रस्ताव का विरोध कर नहीं मानने दिया। (जौहर)

(३) निजामुद्दीन अहमद मनुदुद नाम लिखता है और अर्सकिन के 'बाबर और हुमायूँ' की जिल्द २ पृ० ३९३ में लिखा है कि कामराँ बाद-बज दर्रे से अफगान प्रांत को चला गया। काबुल और खैबर दर्रे के बीच में ये सभी स्थान है। यहीं के अफगानों की शरण में कामराँ ठहरा था।

(४) शाह हुसेन मिर्जा अर्गून का दामाद होने के कारण मिर्जा कामराँ श्राक सुलतान के साथ इस प्रकार का कड़ा बर्त्ताव कर सका था।

आवे तो उसे स्त्री सहित जाने मत देना और उसकी स्त्री को उससे अलग करके उसको कह देना कि जहाँ इच्छा हो वहाँ जावे। इस पत्र के पहुँचते ही शाह हुसेन मिर्ज़ा ने हबीबा बेगम को श्राक सुलतान से अलग कर उसको मक्का बिदा कर दिया।

चारकारों के युद्ध में कराचः खाँ आदि मिर्ज़ा कामराँ के कई प्रसिद्ध मनुष्य मारे गए थे[१]।

आयशा सुलतान बेगम और दौलतबख्त आगाचः भागकर कंधार जाती थीं कि हिमार दर्रे में शाही मनुष्यों ने उन्हें पकड़ा और ले आए। मिर्ज़ा कामराँ अफ़गानों[२] में जाकर उन्हीं के साथ रहने लगे।

बादशाह कभी कभी नारंगी बाग देखने जाया करते थे, उस वर्ष भी पुरानी चाल पर दर्रों में नारंगी देखने गए और मिर्ज़ा हिंदाल भी साथ थे। बेगमों में बेगा बेगम, हमीदः बानू बेगम माहचूचक बेगम आदि साथ थीं। पर मैं इस कारण साथ नहीं जा सकी कि उन दिनों मेरा पुत्र

---

(१) निज़ामुद्दीन अहमद लिखता है कि कराचः खाँ पकड़ा गया और जब बादशाह के सामने लाया जा रहा था तब कंबर अली पहाड़ी ने जिसके भाई को इसने कंधार में मारा था इसे मार डाला। मिर्ज़ा अस्करी जो पकड़ा गया था ख्वाजः जलालुद्दीन महमूद की रक्षा में मिर्ज़ा सुलेमान के यहाँ भेजा गया जिसने उसे बलख पहुँचाया। वहाँ से मक्का जाते समय रास्ते में (दमिश्क और मक्का के बीच सन् १५५८ ई० में) मर गया।

जौहर लिखता है कि कराचः खाँ युद्ध में गोली खाकर गिरा था और मरने पर उसका सिर काट लिया गया।

(२) माहमंद के अफगान, दाऊदज़ई खेल और लगमानात के अफगानों से तात्पर्य है। जब हुमायूँ उधर गया तब इन्हीं अफगानों की राय से कामराँ सिंध गया।

सआदतयार खाँ मौंदा था। एक दिन दर्रों के पास बादशाह अहेर खेल रहे थे और मिर्जा हिंदाल साथ में थे। अहेर अच्छा हुआ। मिर्जा जिधर अहेर खेल रहे थे उसी ओर बादशाह भी गए। मिर्जा ने बहुत अहेर किया था। चंगेज खाँ की प्रथा के अनुसार उन्होंने बादशाह को सब भेंट कर दिया। चगेज खाँ की नीति में यह एक नियम है कि छोटे अपने बड़ों से इसी प्रकार का व्यवहार करते हैं। बादशाह को सब भेंट कर देने पर मिर्जा के ध्यान में आया कि बहिनों का भी भाग चाहिए जिसमें वे उलहना नहीं दें। इस लिये एक बार और अहेर खेलकर हम बहिनों के लिये ले चलें। मिर्जा फिर खेलने लगे और थोड़ा खेलकर लौटे आ रहे थे कि मिर्जा कामराँ के नियुक्त किए हुए एक मनुष्य ने रास्ता रोककर मिर्जा पर अनजान में एक तीर चलाया जो उनके कंधे पर लगा। यह विचार कर कि मेरी बहिनें और स्त्रियाँ यह सुनकर घबड़ाएँगी उसी समय उन्होंने उन्हें लिख भेजा कि आपत्ति आ गई थी पर कुछ टल गई और तुम लोग धैर्य रखना, हम कुशल से हैं। मौसम के गरम हो जाने से बादशाह काबुल लौट आए और एक वर्ष में तीर का घाव भी अच्छा हो गया।

एक वर्ष के अनंतर समाचार मिला कि मिर्जा कामराँ युद्ध की इच्छा से फिर सेना एकत्र कर रहे हैं[1]। बादशाह भी युद्ध का सामान ठीक कर

---

(१) निजामुद्दीन अहमद लिखता है कि अफगानों ने जिनके यहाँ मिर्जा कामराँ थे सेना बटोरना आरंभ किया। इस समाचार को सुनकर बादशाह उधर गए।

जौहर अफगान सर्दार का नाम मुहम्मद खलील बतलाता है। अबुल्फज़ल लिखता है कि रवानः होने के पहले हुमायूँ ने हाजी मुहम्मद खाँ कूके और उसके भाई के बहुत कसूरों का न्याय कर के उन्हें प्राण-दंड दिया था।

के मिर्जा हिंदाल को साथ ले दर्रों की ओर चले। जिस समय दर्रों तक पहुँचकर वे वहाँ उतरे, उस समय जासूस लोगों ने जो हर घड़ी समाचार ला रहे थे पता दिया कि मिर्जा कामराँ ने उसी रात को आक्रमण करने का निश्चय किया है। मिर्जा हिंदाल ने आकर बादशाह से कहा और सम्मति दी कि आप इसी ऊँचाई[1] पर रहें और भाई (भतीजे) जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर बादशाह को साथ ही रखें जिसमें इस ऊँचाई का पूरा पहरा दिया जाय। स्वयं अपने सैनिकों को बुलाकर अलग अलग उत्साह और धैर्य दिलाते हुए मिर्जा ने कहा कि सब सेवा एक ओर और आज की रात की सेवा एक ओर है और ईश्वर की कृपा से जो तुम लोगों की इच्छाएँ होंगी वह सब पूर्ण की जायँगी। उन लोगों को स्थान स्थान पर खड़ा करके उन्होंने अपने लिए कवच, टोपी और शिरस्त्राण माँगा।

तोशकची गठरी उठाता ही था कि किसी ने छींक[2] मार दी जिससे उसने थोड़ी देर के लिये उसे रख दिया। देरी होने से मिर्जा ने एक मनुष्य को जल्दी करने के लिये भेजा। जब वह जल्दी करके उसे लिवा लाया तब उन्होंने स्वयं पूछा कि क्यों देर की? उसने प्रार्थना की कि गठरी को उठा रहा था कि किसी ने छींक मार दी। इस लिये उसे फिर रख दिया, इसी कारण देर होगई। (मिर्जा ने) कहा कि ठीक नहीं किया। तुम्हें कहना चाहिए था कि ईश्वरेच्छा से वीर गति प्राप्त हो। फिर कहा कि मित्रो साक्षी रहो कि हम बुरी वस्तुओं और कुकार्यों से दूर रहते हैं। लोगों ने फातिहा पढ़ा और धन्यवाद दिया। मिर्जा ने आज्ञा दी कि कवच अस्त्र ले आओ। उसे पहिरकर

---

(१) तूमान के गाँव चारयार में यह ऊँचाई थी जिसके चारों ओर मोर्चे लगाए गए थे।

(२) एक छींक को बहुत जाति अशुभ-सूचक मानती हैं इससे किसी काम के आरंभ में छींक हो तो उसे कुछ देर के लिये रोक कर फिर से आरंभ करते हैं।

उन्होंने खाई के आगे जाकर सैनिकों को उत्साह और बढ़ावा दिया। इसी समय मिर्जा हिंदाल के तबकची[1] ने उनका शब्द सुनकर दोहाई दी कि मुझको तलवार से मार रहे हैं। मिर्जा ने सुनतेही घोड़े से उतरकर कहा कि मित्रो! वीरता से यह दूर है कि हमारा तबकची मारा जाय और हम सहायता न करें। वे स्वयं खाई में उतरे पर कोई सैनिक घोड़े से नहीं उतरा। मिर्जा दो बार खाई से निकले और आक्रमण किया पर इसी में वे मारे गए[2]।

नहीं जानती कि वह कैसा निष्ठुर अत्याचारी[3] था जिसने इस सहृदय युवक को कठोर तलवार से प्राणहीन किया। अच्छा होता यदि वह निष्ठुर तलवार मेरे या मेरे पुत्र सआदतयार के या खिज्रख्वाजा खाँ के हृदय या आँखों तक पहुँचती। आह! शत शोक! दुःख! सहस्र दुःख!

शैर

शोक! शोक! शोक!

कि मेरा सूर्य बादल में छिप गया।

---

(१) उन बर्तनों का मुंशी जो धातु और काम के कारण बहुमूल्य होते हैं।

(२) २१ जीकदः ९५८ हि० (२० नवंबर सन् १५५१ ई०) को शनिवार की रात में मिर्जा कामराँ ने पठानों के साथ धावा किया। इसी रात को हिंदाल मारे गए। ४ मार्च सन् १५१९ ई० को इनका जन्म हुआ था और मृत्यु के समय यह तैंतीस वर्ष के थे। गुलबदन बेगम ने सर्वदा अपने भाई की बात स्नेह के साथ लिखी है और मालूम होता है कि उसका शोक बहुत वर्षों तक बना रहा। बेगम की पुस्तक में स्नेही खो पुरुषों के अच्छे चित्र दिए हुए हैं।

(३) मिर्जा ने एक पठान को गिराया था जिसके जरिंदा नामक भाई ने विष से बुझी हुई तीर मारकर हिंदाल को मारडाला।—अबुलफजल।

अर्थात् मिर्जा हिंदाल ने बादशाह की सेवा और कार्य में प्राण दिया। मीर बाबा दोस्त ने मिर्जा को उठा लिया और वह उन्हें उनके गृह पर ले गया। किसी से कुछ न कहकर द्वार पर दरबान बैठाकर कहा कि जो कोई आकर पूछे उससे कहना कि घाव गहरा लगा है और बादशाह की आज्ञा है कि कोई भीतर न जाय।

तब उसने बादशाह के पास जाकर कहा कि मिर्जा घायल हो गए हैं। बादशाह ने घोड़ा मँगवाया कि जाकर मिर्जा को देखें। मीर अब्दुल हई ने कहा कि घाव गहरा लगा है आपको जाना उचित नहीं है। बादशाह समझ गए और अपने को शांत रखना चाहा पर न रख सके और घबड़ा गए[1]।

जूसाही[2] खिज्र ख्वाजः खाँ की जागीर थी। बादशाह ने उसे बुलाकर कहा कि मिर्जा हिंदाल को जूसाही में लेजाकर रक्षा में रखो। खाँ ऊँट[3] की नकेल पकड़कर रोते गाते चले। बादशाह ने यह समाचार सुनकर खिज्र ख्वाजः खाँ से कहला भेजा कि धैर्य रखना चाहिए। मेरा हृदय तुमसे अधिक दग्ध हो रहा है पर ऐसे रक्तपिपासु अत्याचारी शत्रु के सामने घबड़ाना ठीक नहीं। उसके पास रहते संतोष के सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं है। बहुत दुःख और शोक के साथ लेजाकर खाँ जूसाही में उसे रक्षापूर्वक छोड़ आए[4]।

---

(१) बायर्जीद लिखता है कि मुनइम खाँ के कहने पर कि मिर्जा हिंदाल मरा तो हुजूर का एक शत्रु कम हुआ और हुजूर अपने लाभ होने पर क्यों रोते हैं, वे चुप हो गए।

(२) वर्तमान समय का जलालाबाद जो काबुल के रास्ते पर है।

(३) जिस पर मिर्जा हिंदाल का शव लदा हुआ था।

(४) फिर काबुल ले जाकर बाबर बादशाह के मकबरे में गाड़ा गया था।

भ्रातृघातक, अत्याचारी, बेगानों का मित्र और निष्ठुर मिर्जा कामराँ यदि उस रात को नहीं आता तो यह बला आकाश से न गिरती। बादशाह ने काबुल पत्र भेजे जिनके पहुँचते ही बहिनों के लिये कुल काबुल मानों शोक का घर होगया और अच्छे शहीद मिर्जा की मृत्यु पर द्वार और दीवाल रोते चिल्लाते थे। गुलचेहरः बेगम करा खाँ के घर गई थीं। जब वह लौट कर आईं तब प्रलय मच गया और बहुत रोने और शोक करने से वे माँदी और पागल सी हो गईं।

मिर्जा कामराँ की वीरता से मिर्जा हिंदाल की मृत्यु हुई। उस दिन से फिर नहीं सुना गया कि मिर्जा कामराँ को अपने काम में सफलता हुई हो और दिन पर दिन घटती होते हुए वह नष्ट होगया। इस प्रकार बुराई की कि भाग्य ने फिर साथ नहीं दिया और वे सफलप्रयत्न नहीं हुए। मानों मिर्जा हिंदाल मिर्जा कामराँ के जीवन क्या उसकी आँखों का तेज था कि उस पराजय[1] के अनंतर भाग कर वह सीधे शेर खाँ के पुत्र सलीम शाह के यहाँ चला गया[2]। उसने एक सहस्र रुपया दिया तब उसी समय मिर्जा कामराँ ने वृत्तांत कहकर सहायता माँगी। सलीम शाह ने प्रकट में

---

(१) चंद्रमा के निकल आने पर अफगान युद्ध में नहीं ठहर सके और भाग गए।

(२) जब मिर्जा ने दर्बार में जाकर कोर्निश की तब उसके सैनिकों ने पकड़कर कहा कि मिर्जा हाजिर है। सलीम या इसलाम शाह ने कुछ देर तक ध्यान नहीं दया और फिर स्वागत करके अपने खेमे के पास खेमा दिया। जब वह दर्बार में जाता अफगान अमीर हँसी में मोरो आता है, कहते थे। एक दिन एक अनुचर से मिर्जा ने इसका अर्थ पूछा जिसने कहा कि 'मोरो' बड़े सर्दार को कहते हैं इसपर मिर्जा ने कहा कि इसलाम शाह बड़ा मोरो है और शेरशाह उससे बड़ा मोरो था। इसने एक कड़ा शैर भी कहा था जिसपर वह नजर कैद हुआ। (अब्दुल् कादिर बदायूनी)

कुछ उत्तर नहीं दिया पर पीछे से कहा था कि जिसने अपने भाई मिर्जा हिंदाल को मारा है उसकी किस प्रकार सहायता करूँ। ऐसे मनुष्य को तो नष्ट करना उचित है। मिर्जा कामराँ ने सलीम खाँ की इस सम्मति को सुनकर अपने मनुष्यों से भी सम्मति नहीं ली और रात्रि को ही भागना निश्चित करके वह चल दिया। मिर्जा के मनुष्यों को पता भी नहीं मिला जिससे वे रह गए। समाचार मिलते ही बहुतों को सलीम शाह ने कारागार में भेज दिया।

मिर्जा कामराँ भीरा और खुशआब तक गया था कि वहीं सीमा पर आदम गक्खर ने सैकड़ों बहाने कर उसे पकड़ लिया और बादशाह के पास ले गया[१]।

अंत में सब एकत्र हुए। खानों, सुलतानों, भद्र पुरुषों, बड़े सैनिकों और प्रजा आदि ने जो मिर्जा कामराँ से कष्ट पा चुके थे एकमत होकर बादशाह से प्रार्थना की कि बादशाही और राजत्व में भ्रातृत्व का नियम नहीं पालन किया जा सकता। यदि भाई का मुख देखिए तो बादशाही छोड़िए और यदि बादशाही की इच्छा हो तो भाईपन छोड़िए। यह वही मिर्जा कामराँ है कि जिसके कारण किबचाक घाटी में आपके सिर में कैसी चोट पहुँची थी? अफगानों से बहाने से मिलकर मिर्जा हिंदाल को (इसी ने) मरवा डाला था। बहुत से चगत्ताई मिर्जा के कारण नष्ट हो गए और कितनों के परिवार कैद हुए तथा अपमानित हुए। फिर असंभव नहीं कि हमलोगों के स्त्री और बच्चे कारागार के कष्ट और दुख न उठावें।

---

(१) मिर्जा कामराँ एक जमींदार को मिलाकर चद्दर ओढ़कर निकल भागा और सुलतान आदम गक्खर के यहाँ सुलतानपुर में जो रोहतास से तीन कोस पर है शरण गया और उसने दम दिलासा देकर उसे कैद कर लिया और नहीं मारने का वचन लेकर हुमायूँ को दे दिया। (मुंतखबुत्तवारीख)

जहन्नुम में जायँ, (यदि हम अपने को निछावर न करें) आपके एक बाल पर हमलोगों के प्राण, धन और परिवार निछावर हैं, पर यह भाई नहीं है आपका शत्रु है।

अंत में सबने एकमत होकर कहा कि—देशद्रोही का सिर गिराना अच्छा है।

बादशाह ने उत्तर दिया कि यद्यपि तुम लोगों की ये बातें हमारे विचार में आती हैं पर मेरा मन नहीं मानता। सब ने दोहाई दी और कहा कि जो कुछ हम लोगों ने प्रार्थना की है वही नीतियुक्त है[1]। अंत में बादशाह ने आज्ञा दी कि यदि तुम लोगों की इसी में सम्मति और भलाई है तो एकत्र हो कर लिखकर हस्ताक्षर करो। दाहिने और बाएँ के सभी सर्दारों ने एकत्र हो यही मिसरा लिखकर दिया कि 'देशद्रोही का सिर गिरा देना अच्छा है' बादशाह को भी मानना पड़ा।

रोहतास के पास पहुँचने पर बादशाह ने सय्यद मुहम्मद को आज्ञा दी कि मिर्जा कामराँ की दोनों आँखें अंधी कर दो[2]। उसी समय वह अंधा कर दिया गया।

बादशाह अंधा करने के अनंतर[3]......

❀ समाप्त ❀

---

(१) जौहर ने चगत्ताई सर्दारों के इस प्रार्थना पर हठ का जिक्र नहीं किया है पर निजामुद्दीन अहमद और अबुलफजल दोनों इस बात का समर्थन करते हैं।

(२) अली दोस्त बार बेगी, सय्यद मुहम्मद बिकना, गुलामअली शशअंगुश्त (छँगुर) और जौहर आफताबची सब थे पर नश्तर गुलामअली ने चलाया था। चार वर्ष बाद ५ अक्तूबर सन् १५५७ ई० को मक्के में कामराँ की मृत्यु हुई।

(३) इसके आगे के पृष्ठ प्राप्त नहीं हैं।

अनुक्रमणिका

ख

ग

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	१	समय	समय से
२	१३	खानखाना	खानखानाँ
३	४	पहुची	पहुँची
३	२१	नियन	नियम
३	२३	दिवा	दिया
३	२४	१५०१	१५१०
४	१७	ख्याजा	ख्वाजा
४	२५	आया या	आया था
६	८	मिला	मिला कि
६	२३	मुजर	मुजफ्फर
१०	३	देगम	बेगम
१०	५	खुशरो	खुसरो
११	१	फारूफ	फारूक
११	२२	बटनाश्रोत	घटनास्रोत
१२	१२	षुत्र	पुत्र
१४	४	मेहरजहाँ	मेहृजहाँ
१४	६	उन्हों मे	उन्हों ने
१४	२०	शब्वाल	शव्वाल
१५	४	यूमुफजयी	यूसुफज़ई
१६	१६	गे	ने
		जिटसे	जिमसे

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
१६	१६	एक	एक एक
२३	२१	जिले	जिसे
२४	२	लने	लगे
	१२	शहीद	शहोद[3]
२५	७	नाली	नामी
३२	१२	गुलचेहर	गुलचेहरः
३२	२०	मी	भी
३२	२३	बेक्रीज	बेवरिज
३३	१५	पढ़ेगे	पढेगे
३३	१६	ख्रिज्र	खिज्र
३३	२२	पानीपति	पानीपत
३५	१८	लिले	मिले
३५	२२	जमादिउल्अव्याल	जमादिउल्अव्वल
३६	१५	गुलवर्ग	गुलबर्ग
३६	२१	युद्ध्	युद्ध
३८	२	खदग	खदंग
३८	२	चोबदार	चोबदार की
३८	६	हुमाहूँ	हुमायूँ
३८	११	पुस्तक	पुस्तक
३८	२३	नें	में
४१	५	नैय्यूब	नैय्यूब
४१	७	(मिर्जा तथा के साथ और मुहम्मद के बीच में बढ़ाइए) सुलतान अपने पुत्रों उलुग	

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
			मिर्जा और शाह मिर्जा
४१	६	बावजीद	बायजीद
४२	३	बेगा बेगम	बेगा बेगम और
४२	६	हि	हि०
४३	१२	मध्य	मध्य
४३	१३	बिके	बिछे
४३	१८	तोषक	तोशक
४३	२०	पुत्रिय	पुत्रियाँ
४४	२५	में	को
४५	२	उलुग बेग	उलुग बेगम
४६	४	खानम बेगम	खान बेगम
४६	५	जैनव	जैनब
४७	३	दिलशाह	दिलशाद
४७	११	ठीक	ठीक
४७	२५	मेगम	बेगा बेगम
५०	२०	५२६ ई०	१५२६ ई०
५१	१६	अब्बुल्ला	अब्दुल्ला
५३	३	पश्चिम	पश्चिम
५६	८	जोड़े	जोड़
५६	२४	तावार खाँ	तातार खाँ
५७	१	फक्रेअली	फखअली
५८	७	आए हुए	आए हुए कई दिन हुए
५६	४	बेगा	बेगा बेगम

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
५६	२३	पुत्री	पुत्री
६०	१७	रुक दाऊद	रुक्न दाऊद
६०	२२	छुस गए	घुस गए
६०	२४	इफ्तार खाँ	इफ्तखार खाँ
६२	१२	वढ	बढ़
६३	३	मिर्जा ने	ने मिर्जा से
६३	१२	कोकल्तास	कोकल्ताश
६३	२१	पति	पिता
६५	४	फिया	किया
६६	६	लाथ	साथ
६७	८	दशन	दर्शन
६७	१६	अलवर	अलवर
६६	१	आओ	लाओ
६६	६	अभीर	अमीर
७१	११	जिसके	जिनके
७२	४	स्ती	स्त्री
७२	२२	मुहम्मद्	मुहम्मद
७३	२६	इस	इस
७५	६	इसले	इससे
७५	१६	जानी	जामी
७५	१७	शहाबुद्दीन	शहाबुद्दीन
७७	३	ईश्वरील	ईश्वरीय
७८	५	समम	समय
७६	२२	मुवैयदी	मुवैयद
८०	१८	जिखके	जिसके

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
८१	१८	अर्गन	अगून
८२	२२	दानमेह	दानमेह
८४	२२	वह	यह
८५	१४	अलौकः	अलैकः
८७	१०	सालमेर	सातलमेर
८८	१०	क्रो	को
८६	६	ठहर गए[3] ।	ठहर गए[3] और रात्रि हो जानेसे रास्ता भूल गए।
६१	५	गिर पडते	गिरे पड़ते
६४	१६	मका	मक्का
६७	७	पडा	पढ़ा
६७	११	खुतवा	खुतवा पढ़ा जाता है। अभी खुतवा
६८	१०	हस	इस
६८	२३	मुतखावुत्तवारीस	मुंतखबुत्तवारीख
१००	१६	से	ने
१००	२२	अब्दुल्‌बहाव	अब्दुल्‌वहाब
१०१	७	छोढकर	छोडकर
१०२	११	बरफ़	बरफ
१०२	१३	तक	एक
१०२	१८	हवालो	हवाली
१०३	५	देगम	बेगम
१०३	२५	साथ साथ	साथ

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
१०४	२	यूसूफ	यूसुफ
१०४	२	इब्राहीम	इब्राहीम
१०४	४	और	और ख्वाजः केसक
१०६	१४	निश्चित	निश्चिन्त
१०८	१	जत्र	जब
१०८	११	जहाँ	जहाँ जहाँ
१०८	२१	तीस	उंतीस
१०६	२	कष्ठ	कष्ट
१०६	६	खढ़े	खड़े
१०६	१६	हमी बानू	हमीदा बानू
११०	६	निमाज	निमाज तक
११०	२४	बे	थे
११२	१	वस्त्र	वस्त्र
११५	११	खानजादहः	खानजादः
११५	१४	कामराँ ने	कामराँ
११७	४	विजथ	विजय
११७	१२	हिंदाला	हिंदाल
११७	२०	चलकर	चलकर साथ हो गए। वहाँ से चलकर
११८	११	गुलरुखु	गुलरुख
११८	१६	कासीम	कासिम
११६	८	मकबस	मकबरा
११६	६	हबीवः	हबीबः
११६	२४	बदलाते	बतलाते

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
१२०	१	मेह अफ़्रोज़	मेहअफ़्रोज
१२१	१	११२ वीं	१२ वी
१२१	१६	उसम	उस समय
१२२	४	बामू	बानू
१२३	२०	तिरगिरीं	तीरगिरीं
१२४	२	सब	तब
१२४	१५	करचाखाँ	कराचा खाँ
१२५	४	मारा डाला	मार डाला
१२५	६	नौकर	नौकार
१२५	६	स्त्रिगों	स्त्रियों
१२५	१०	द्वाररक्षकों	द्वाररक्षक
१२५	१०	उन्हें	उसे
१२५	२३	एशक	एराक
१२६	१७	नदी लिखा	नहीं लिखा
१२७	१२	शेर अफगान	शेर अफ़गन
१२७	२०	गिआसुल्लुगान	गियासुल्लुगात
१२७	२५	नदो को	नदी
१३०	८	सुलतान बेगम	सुलतान जहाँ बेगम
१३०	१६	अब्वल	अव्वल
१३१	८	पर	पर से
१३२	१५	जिसके	जिनके
१३२	१६	कुछ	कुल
१३३	२५	बल्तुन्निसा	बख्तुन्निसा
१३४	४	गरुंखफाल	फरुंखफाल
१३४	१३	सुलनान	सुलतान

शुद्धिपत्र

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
१३४	२४	बे	वे
१३७	५	लडी	लंबी
१३७	१८	ओर	और
१३७	२१	रूप	रूप में
१३८	३	खढे	खड़े
१३८	६	आगा	आगाचः
१३८	१९	टहर	ठहर
१३९	१८	बाबू	बानू
१३९	२५	रही	रहो
१४१	१८	पगस्त	परास्त
१४२	१	गए	गए और
१४३	३	सुबेमान	सुलेमान
१४३	११	मिर्जे	मिर्जा
१४४	१	टुकढे	टुकड़े
१४४	६	मिज्जा	मिर्जा
१४४	६	यह	यह
१४४	१५	थहाँ	यहाँ
१४४	१६	देगम	बेगम
१४५	४	भोरानशाही	मीरानशाही
१४५	२४	पुत्रियाँ	पुत्रियाँ
१५१	४	अनुशार	अनुसार

———